ग्राफ़िक डिज़ाइन
एक कहानी

कक्षा 11 के लिए पाठ्यपुस्तक

ग्राफ़िक डिज़ाइन
एक कहानी

© NCERT not to be republished

विद्यया ऽमृतमश्नुते
एन सी ई आर टी
NCERT

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

ISBN 978-93-5007-148-9

प्रथम संस्करण

अप्रैल 2011 चैत्र 1933

PD 2T NSY

© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 2011

₹ 170.00

80 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा श्री वृंदावन ग्राफिक, ई-34, सैक्टर-7, नोएडा 201301 द्वारा मुद्रित।

सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलेक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुन: प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।
- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।
- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

एन सी ई आर टी के प्रकाशन विभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नयी दिल्ली 110 016 **फोन : 011-26562708**

108, 100 फीट रोड
हेली एक्सटेंशन, होस्डेकेरे
बनाशंकरी III इस्टेज
बैंगलुरु 560 085 फोन : 080-26725740

नवजीवन ट्रस्ट भवन
डाकघर नवजीवन
अहमदाबाद 380 014 फोन : 079-27541446

सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस
निकट: धनकल बस स्टॉप पनिहटी
कोलकाता 700 114 फोन : 033-25530454

सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लैक्स
मालीगाँव
गुवाहाटी 781021 फोन : 0361-2674869

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन विभाग : *नीरजा शुक्ला*

मुख्य उत्पादन अधिकारी : *शिव कुमार*

मुख्य संपादक : *श्वेता उप्पल*

मुख्य व्यापार प्रबंधक : *गौतम गांगुली*

संपादक : *नरेश यादव*

उत्पादन सहायक : *प्रकाश वीर सिंह*

आवरण

ललित मोर्य

© NCERT not to be republished

प्राक्कथन

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (एन.सी.एफ.)-2005 में यह सिफ़ारिश की गई है कि बच्चों का स्कूली जीवन उनके स्कूल से बाहर के जीवन से जुड़ा होना चाहिए। यह सिद्धांत किताबी ज्ञान की उस विरासत से हटकर है जो आज भी हमारी प्रणाली को रूप प्रदान कर रही है और स्कूल, घर और समुदाय के बीच अंतर बनाए हुए है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा के आधार पर विकसित पाठ्य विवरणों एवं पाठ्यपुस्तकों में इस विचार को कार्यान्वित करने का प्रयत्न किया जा रहा है। साथ ही इनके माध्यम से रटन-विद्या की प्रणाली को निरुत्साहित किया और विभिन्न विषयों के बीच की सीमाओं को मिटाने का प्रयत्न किया जा रहा है। हमें आशा है कि इन उपायों द्वारा हम राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 में उल्लिखित बाल-केंद्रित शिक्षा प्रणाली की दिशा में काफी आगे बढ़ सकेंगे।

एन.सी.एफ. की एक प्रमुख सिफारिश यह थी कि उच्चतर माध्यमिक स्तर पर उपलब्ध वैकल्पिक विषयों की संख्या बढ़ाई जाए। इस सिफारिश के अनुसरण में, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) ने सृजनशीलता तथा अंतरविषयक समझ को प्रोत्साहन करने की क्षमता बढ़ाने के लिए एन.सी.एफ. में दर्शाए गए कुछ नए विषय-क्षेत्रों को पाठ्यचर्या में शामिल करने का निर्णय लिया है। तदनुसार इस पाठ्यपुस्तक में ग्राफिक डिज़ाइन के विशिष्ट अध्ययन की एक नई शिक्षण-पद्धति प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। यह पद्धति आधारभूत ज्ञान को व्यावहारिक अनुभव के साथ समन्वित करती है।

इस प्रयास को तभी सफलता मिल सकती है जब स्कूलों के प्रधानाचार्य, बच्चों के माता-पिता, अभिभावक और अध्यापक यह समझें कि यदि बच्चों को अवसर, समय, स्थान और स्वतंत्रता दी जाए तो वे बड़ों से प्राप्त जानकारी का उपयोग करते हुए नया ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। निर्धारित पाठ्यपुस्तक को परीक्षा का एक मात्र आधार मानना एक ऐसा प्रमुख कारण है जिसकी वजह से अध्ययन के अन्य स्थलों तथा संसाधनों की उपेक्षा की जाती है। सृजनशीलता तथा पहल-शक्ति तभी उत्पन्न हो सकती है जब हम बच्चों को एक निश्चित ज्ञान-पुंज के ग्रहीता न समझकर, अध्ययन में सहभागी बनाएँ।

इन लक्ष्यों का तात्पर्य यह है कि स्कूलों के सभी कार्यों और काम करने के तरीकों में पर्याप्त परिवर्तन लाया जाए। दैनिक समय-सारिणी में लचीलापन होना भी उतना ही आवश्यक है जितना कि वार्षिक कार्यसूची (कैलेण्डर) के कार्यान्वयन में कठोरता लाना, जिससे कि अध्यापन के लिए निर्धारित सभी दिन वास्तव में पढ़ाई में ही लगाए जाएँ और किसी कार्य में नहीं। अध्यापन और मूल्यांकन के लिए प्रयुक्त विधियाँ भी यह निर्धारित करेंगी कि यह पाठ्यपुस्तक, तनाव या नीरसता का साधन न बनकर, बच्चों के स्कूली जीवन को सुखद अनुभव बनाने में कितनी सफल हुई है। पाठ्य विवरण के निर्माताओं ने पाठ्यचर्या के बोझ की समस्या का हल करने का भी प्रयास किया है, और इसके लिए, बाल-मनोविज्ञान तथा अध्यापन के लिए उपलब्ध समय का अधिक ध्यान रखते हुए, भिन्न-भिन्न स्तरों पर जानकारी के रूप एवं संरचना में यथोचित परिवर्तन किया है। इसी उद्देश्य से पाठ्यपुस्तक में चिंतन-मनन और छोटे समूहों में चर्चा, एवं व्यावहारिक अनुभव कराने वाले क्रियाकलापों के लिए उपयुक्त अवसरों को उच्च प्राथमिकता तथा स्थान देने का प्रयत्न किया गया है।

© NCERT not to be republished

एन.सी.ई.आर.टी. पाठ्य विवरण तथा पाठ्यपुस्तक विकास समिति द्वारा किए गए परिश्रम के लिए उनकी प्रशंसा करती है। इस अंतर सक्रिय पाठ्यपुस्तक को तैयार करने का काम निश्चित रूप से चुनौतीपूर्ण था और इस परियोजन के मुख्य सलाहकार श्री कृष्ण आहूजा ने जो कष्ट साध्य प्रयत्न किए हैं वे अवश्य ही प्रशंसनीय हैं। हम उन सभी संस्थानों तथा संगठनों के आभारी हैं जिन्होंने अपने संसाधनों, सामग्रियों तथा कार्मिकों की सेवाओं का उपयोग करने की अनुमति दी है। हम विशेष रूप से प्रोफ़ेसर मृणाल मीरी और प्रोफ़ेसर जी.पी. देशपांडे की अध्यक्षता में गठित उस राष्ट्रीय निगरानी समिति के सदस्यों के लिए कृतज्ञ हैं जो मानव संसाधन विकास मंत्रालय के माध्यमिक और उच्च शिक्षा विभाग द्वारा नियुक्त की गई थी। अपने उत्पादों की गुणवत्ता में निरंतर वृद्धि करने और प्रणालीगत सुधार लाने के लिए प्रतिबद्ध संगठन के रूप में, एन.सी.ई.आर.टी. इस कृति के विषय में प्राप्त होने वाली ऐसी सभी टीका-टिप्पणियों एवं सुझावों का सदा स्वागत करेगी जिनके आधार पर आगामी संस्करणों में संशोधन-परिवर्द्धन किए जा सकें।

निदेशक

नई दिल्ली
दिसंबर 2008

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान
और प्रशिक्षण परिषद्

© NCERT not to be republished

आमुख

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (एन.सी.एफ.)-2005 में ''उच्चतर माध्यमिक स्तर पर वैकल्पिक विषयों की विविधता पर...'' बल दिया गया है। इस आवश्यकता को देखते हुए, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) ने केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (सी.बी.एस.ई.) की सहमति से यह निर्णय लिया है कि कक्षा 11 और 12 में, 'ग्राफिक डिज़ाइन' विषय को एक वैकल्पिक विषय के रूप में शुरू किया जाए जिसे अन्य विषयों के साथ का दर्जा दिया जाए। तदनुसार, एन.सी.ई.आर.टी. ने उच्चतर माध्यमिक स्तर के लिए ग्राफिक डिज़ाइन के पाठ्यक्रम का विकास किया है। यह पाठ्यक्रम उन छात्र-छात्राओं को उपलब्ध कराया जाएगा जिन्होंने कक्षा 10 या उसके समकक्ष कोई अन्य परीक्षा कला/रेखाचित्रण (ड्राइंग)/चित्रकला विषय के साथ या बिना इन विषयों के उत्तीण की हो।

अपनी रोज़मर्रा की ज़िंदगी में हम तरह-तरह की जानकारियों; जैसे-शब्दों, शुभंकरों, संकेतों, प्रतीकों, दृश्य आकृतियों, पाठ्य संदेशों आदि से घिरे रहते हैं। उदाहरण के लिए, बस में यात्रा करते समय हम सड़क, यातायात और यातायत संबंधी संकेत देखते हैं। इनमें से कुछ जानकारी तो महत्वपूर्ण होती है या नहीं भी होती अथवा कुछ हमारे लिए उपयोगी होती है, कुछ नहीं भी होती। हमारी आँखें और मन बहुत चयनात्मक होते हैं और अपने चारों ओर ऐसी ही जानकारी देखना या ढूँढ़ना चाहते हैं जो उपयोगी या सार्थक होती है और ध्यान को उस जानकारी की ओर ले जाती है जो आकर्षक और रोचक रूप में प्रस्तुत की गई हो।

कक्षा 11 के लिए 'ग्राफिक डिज़ाइन' विषय की यह पुस्तक दृश्य जागरूकता और ग्राफिक संवेदनशीलता के बारे में है। वैसे तो प्रत्येक व्यक्ति अपनी जागरूकता का प्रयोग कुछ सीमा तक अवश्य करता है, मगर ग्राफिक डिज़ाइनर इस सीमा से आगे तक जाता है, और उसे अपने चारों ओर उपलब्ध जानकारी को यथासंभव सर्वोत्तम रीति से रूपांकित करने में अपेक्षाकृत अधिक गहराई तक निरीक्षण करने के लिए विशेष रूप से प्रशिक्षित किया जाता है। इस पुस्तक का उद्देश्य केवल यह बताना ही नहीं है कि 'डिज़ाइन कैसे करें' बल्कि यह ग्राफिक कला, डिज़ाइन और ग्राफिक डिज़ाइन के विकास और उसके दर्शन को भी समझाती है।

चूँकि प्रत्येक छात्र की अपनी विशेषता होती है और उसकी ज़रूरतें भी अलग-अलग तरह की होती हैं, इसलिए ग्राफिक डिज़ाइन के विषय को अन्य विषयों की तरह नहीं पढ़ाया जा सकता। ग्राफिक डिज़ाइन की शिक्षा 'क्रियामूलक अधिगम' यानी 'कर-कर के सीखने' की रीति से दी जाती है। छात्र अपना संपूर्ण पाठ्यक्रम पूरा करता है जिसमें अभ्यासमालाएँ, प्रायोगिक कार्य और परियोजनाएँ शामिल होती हैं जिन्हें संपन्न करने के बाद छात्र ग्राफिक डिज़ाइन के बारे में अपनी अंतर्दृष्टि विकसित कर लेता है। समय-समय पर अध्यापक अपने छात्र की व्यक्तिगत आवश्यकताओं और उपेक्षाओं को देखते हुए और उन पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देते हुए छात्र के विकास पर बराबर नज़र रखता है। इसी प्रक्रिया में छात्र अपना काम सीखता जाता है और सृजनात्मक एवं मौलिक विचार तथा रचनात्मक संकल्पनाएँ उत्पन्न करने की प्रेरणा प्राप्त करता रहता है। साथ ही वह, उपयुक्त माध्यम और सामग्री के प्रयोग तथा ग्राफिक रूप से अभिव्यक्ति और संचार की दृश्य भाषा सीखता जाता है। कक्षा 11 के पाठ्यक्रम के अंत तक छात्र विभिन्न सैद्धांतिक संकल्पनाएँ समझने के लिए सक्षम हो जाएगा और उसे ग्राफिक डिज़ाइन के माध्यम से अपने विचारों तथा भावों को अभिव्यक्ति

© NCERT not to be republished

और प्रस्तुत करने का पर्याप्त अनुभव प्राप्त हो जाएगा। छात्रों से आशा की जाती है कि वे हर वर्ष अपना पोर्टफोलियो प्रस्तुत करेंगे जिसमें उस वर्ष के दौरान उनके द्वारा तैयार की गई कम-से-कम 20 कृतियाँ संगृहीत होंगी। ये कृतियाँ सामग्री की खोज तथा दृश्य प्रभाव की दृष्टि से संपन्न होनी चाहिए।

ग्राफिक डिज़ाइन में सौंदर्यात्मक संवेदनशीलता, सृजनात्मकता और कुशलता विकसित करने की पर्याप्त क्षमता होती है। विद्यालय स्तर पर इस पाठ्यक्रम के माध्यम से प्राप्त अनुभव और कुशलताओं के बल पर छात्र शिक्षा के उच्चतर स्तर पर भी यह विषय पढ़ने के लिए प्रेरित होंगे, क्योंकि अधिकांश कला अथवा कला से संबंधित संस्थाएँ कार्य-बल उत्पन्न करने के लिए इस विषय में स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा प्राप्त करने के अवसर प्रदान करती हैं। सौंदर्य शास्त्र किसी कलाकृति को समझने-सराहने की शिक्षा देता है। आज के इस सूचना प्रौद्योगिकी के युग में, यदि तकनीकी ज्ञान का सृजनात्मक चिंतन और निष्पादन के साथ संयोग हो जाए तो यह समझो कि सृजनकर्ताओं और ग्रफिक डिज़ाइनरों के लिए एक स्वर्ण युग का शुभारंभ होने वाला है।

यह पाठ्यक्रम विश्वविद्यालय स्तर पर उच्च अध्ययन के अवसरों के साथ ही नहीं जुड़ा हुआ है बल्कि यह उन छात्रों को सहायता देने के उद्देश्य से भी तैयार किया गया है जो भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में मुद्रित एवं अमुद्रित माध्यमों के लिए कार्यरत संस्थाओं और संगठनों में रोज़गार के अवसर ढूँढ़ना चाहते हैं। स्कूल छोड़ने के बाद, वे आत्मनिर्भर होने के लिए ग्राफिक डिज़ाइन स्टूडियो में कार्य कर सकते हैं अथवा ग्राफिक डिज़ाइन की मौलिक कृतियों की रचना कर सकते हैं।

परिषद् उन सभी महानुभावों के प्रति आभारी है जिन्होंने इस पुस्तक के विकास में योगादन दिया है। तथापि, इस पुस्तक की उपयोगिता के निर्णायक तो इसके उपयोगकर्ता, मुख्य रूप से छात्र, अध्यापक और अभिभावक ही होंगे। एन.सी.ई.आर.टी. उनकी समीक्षाओं, टीका-टिप्पणियों और आलोचनाओं का सदा स्वागत करेगी और उनके आधार पर भविष्य में उपयुक्त समय आने पर निश्चित रूप से इसका संशोधित संस्करण प्रकाशित करेगी।

© NCERT not to be republished

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

मुख्य सलाहकार

कृष्ण आहूजा, *एसोशिएट प्रोफ़ेसर* (सेवानिवृत्त), कॉलेज ऑफ़ आर्ट, दिल्ली

सदस्य

अनिल सिन्हा, *वरिष्ठ संकाय सदस्य*, कम्युनिकेशन डिज़ाइन, नेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ़ डिज़ाइन, अहमदाबाद

दिनेश पुरी, *पी.जी.टी.*, सी.आर.पी. पब्लिक स्कूल, रोहिणी, नई दिल्ली

विनोद विद्वंस, *प्रोफ़ेसर*, फाउण्डेशन फॉर लिबरल एण्ड मैनेजमेंट एजुकेशन, पुणे

सुजय मुखर्जी, *शिक्षक*, फ्यूचर होप, 1/8, रोलैंड रोड, कोलकाता

सदस्य समन्वयक

सुनील कुमार, *एसोशिएट प्रोफ़ेसर*, डी.ई.ए.ए., एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

हिन्दी अनुवाद

अवंतिका त्रिपाठी, *अनुवादक*, नई दिल्ली

अवधेश कुमार सिंह, *निदेशक*, इंस्टीट्यूट ऑफ़ फ़ाइन आर्ट्स, वाराणसी

अनीता गौड़, *शिक्षक*, ललित कला, शासकीय कन्या उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

कनुप्रिया तनेजा, *पी.जी.टी.*, ग्राफ़िक डिज़ाइन और हैरिटेज क्राफ्ट, टैगोर पब्लिक स्कूल, शास्त्री नगर, जयपुर

परशुराम शर्मा, *भूतपूर्व निदेशक* (राजभाषा), भारत सरकार

मालती गायकवाड़, *एसोशिएट प्रोफ़ेसर*, फ़ैकल्टी ऑफ़ फ़ाइन आर्ट्स, महाराजा सयाजीराव यूनिवर्सिटी ऑफ़ बड़ोदा, वडोदरा

ज्योत्स्ना तिवारी, *एसोशिएट प्रोफ़ेसर*, डी.ई.ए.ए., एन.सी.ई.आर.टी. (*सदस्य समन्वयक*)

© NCERT not to be republished

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक **संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न, समाजवादी, पंथ-निरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य** बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को:

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक **न्याय,**

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म
और उपासना की **स्वतंत्रता,**

प्रतिष्ठा और अवसर की **समता**
प्राप्त कराने के लिए,

तथा उन **सबमें** व्यक्ति की गरिमा और
राष्ट्र की एकता और अखंडता
सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए

दृढ़संकल्प होकर **अपनी इस संविधान सभा में** आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई. (मिति मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी, संवत् दो हज़ार छह विक्रमी) को **एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।**

© NCERT not to be republished

आभार

ग्राफिक डिज़ाइन : एक कहानी का निर्माण अनेक पेशेवर, शिक्षाविदों, स्कूली शिक्षकों, संपादकों और डिज़ाइनरों के अथाह सहयोग का परिणाम है। इस पुस्तक की प्रत्येक इकाई को विचार-विमर्श के पश्चात् कई महीनों में परिष्कृत किया गया। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् इस प्रक्रिया में भाग लेने वाले प्रत्येक व्यक्ति की आभारी है। हम पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति के सभी सदस्यों के प्रति विशेष रूप से आभारी हैं जिन्होंने पाठ्यपुस्तक के निर्माण में अपनी बहुमूल्य सलाह दी। इनमें प्रोफ़ेसर भूलेश्वर माटे, *प्रो वाइस चांसलर*, असम विश्वविद्यालय, दीफू परिसर, असम; श्री दत्तात्रेय आप्टे, डिज़ाइन व प्रदर्शनी प्रभाग, आई.टी.पी.ओ., नई दिल्ली; श्री जी. विनोद कुमार, दिल्ली पब्लिक स्कूल, आर. के. पुरम्, नई दिल्ली; श्री पुलक दत्त, ग्राफिक आर्ट विभाग, कला भवन, विश्व भारती, शांति निकेतन, पश्चिम बंगाल और डॉ. राम बाबू पारेख, *लेक्चरर*, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, अजमेर मुख्य हैं।

पाठ्यपुस्तक की पाण्डुलिपि के पुनरावलोकन में किए गए सहयोग के लिए हम प्रोफ़ेसर एम. विजयमोहन, *प्रधानाचार्य,* कॉलेज ऑफ आर्ट, तिलक मार्ग, नई दिल्ली; प्रोफ़ेसर नागराज पतूरी, फ्लेम, पुणे; अंजन बोस, टैगोर इन्टरनेशनल पब्लिक स्कूल, नई दिल्ली और आर. एस. अकेला, शासकीय बालक उच्च माध्यमिक विद्यालय, मटिया महल, जामा मस्जिद, दिल्ली के आभारी हैं। पोर्टफोलियो मूल्यांकन पद्धति विकसित करने के लिए हम केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा दिए गए सहयोग के लिए भी आभारी हैं।

पाठ्यपुस्तक में जिन विभिन्न प्रकाशित सामग्रियों से विचार लिए गए हैं वे हैं: *ए हिस्ट्री ऑफ ग्राफिक डिज़ाइन*, फिलिप बी. मेग्स, द्वितीय संस्करण, न्यूयार्क, वैन नॉस्ट्रैन्ड रिनहोल्ड, 1992; द *ऑक्सफोर्ड कम्पेनियन टू आर्ट*, हारोल्ड ऑसबोन, ऑक्सफोर्ड, क्लैरेनडॉन प्रेस, 1970; *इंडियन सिम्बालॉजी* (संपा.), प्रोफ़ेसर कीर्ति त्रिवेदी, आई. डी. सी., इंडियन इन्स्टीट्यूट ऑफ टैक्नोलॉजी, मुंबई, 1987; *इंडियन लैंग्वेज: फान्ट डिज़ाइनिंग एण्ड फॉन्ट टैक्नोलॉजी*, प्रोफ़ेसर आर. के. जोशी, विश्वभारत टीडीआईएल, अप्रैल 2005 जर्नल (सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय, भारत सरकार का ऑनलाइन जर्नल); *ए हिस्ट्री ऑफ ग्राफिक आर्ट,* जैम्स क्लीवर, पीटर ओवन लिमिटेड, 50 ओल्ड ब्रम्पटन रोड, लंदन एस डब्ल्यू 7, 1963; *भारतीय छापाचित्र कला : आदि से आधुनिक काल तक*, सुनील कुमार, नेशनल बुक ट्रस्ट, एवं भारतीय कला प्रकाशन, दिल्ली, 2000; *इण्डियन आर्ट, ए कन्साइज़ हिस्ट्री,* रॉय सी. क्रॅवन, थेम्स एण्ड हडसन लि. लंदन, 1976; पुनर्मुद्रण 1995 (*ए कन्साइज़ हिस्ट्री ऑफ इण्डियन आर्ट* के नाम से पूर्व प्रकाशित); *ट्राइबल आर्ट ऑफ मिडिल इण्डिया*, वेरियर एलविन, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1951; बांगलार व्रत, अबनीन्द्रनाथ टैगोर, विश्वभारती प्रेस; *मधुबनी पेंटिंग,* उपेन्द्र ठाकुर, अभिनव प्रकाशन; इंडियन प्रिंटेड एण्ड पेंटेड फैब्रिक्स, जॉन इरविन एवं मारग्रेट हॉल एवं अनिल सिन्हा और सुजय मुखर्जी द्वारा प्रस्तुत प्रपत्र।

पुस्तक के निर्माण में तकनीकी सहयोग के लिए तनवीर अहमद, नरेन्द्र कुमार वर्मा, *डी.टी.पी. ऑपरेटर*; और राधा, ममता गौड़, *कॉपी एडीटर* की भी परिषद् आभारी है।

© NCERT not to be republished

इस पुस्तक के निर्माण हेतु विभिन्न प्रकार की सूचनाएँ वर्ल्ड वाइड वेब साइट्स से ली गई हैं जिनके हम आभारी हैं।

- http:// tdil.mit.gov.in/apr_2005.htm
- http:// www.cyberkerala.com/kalamezhuthu/index.html
- http:// india.gov.in/knowindia/kalamezhuthu.php
- http:// www.expresstextile.com/20050228/perspectives01.shtml
- Wikipedia, free encyclopedia
- www.bradshawfoundation.com
- http:// www.indianculturеonline.com/details/Pithora-Paintings.html
- "Mandala", Microsoft® Encarta® Online Encyclopedia 2008
- http:// encarta.msn.com © 1997-2008 Microsoft Corporation.

यद्यपि हमने प्रत्येक के प्रति आभार व्यक्त करने का पूरा प्रयत्न किया है, तथापि यदि कोई छूट गया है तो हम इसके लिए क्षमाप्रार्थी हैं क्योंकि यह जानबूझ कर नहीं किया गया है।

© NCERT not to be republished

चित्रों के लिए श्रेय

इकाई I

पृष्ठ 2 और 3-सुनील कुमार; चित्र 1.5- www.luffman.us/bobjones/bobj1.htm; *चित्र 1.7* - फ्लैग्स वेब्स्टर्स इंटरनेशनल इनसाइक्लोपीडिया; पृष्ठ 12 और 13 - बेगर्स रिसीविंग अल्म्स् इचिंग बाई रैम्ब्रेंट, *ए हिस्ट्री ऑफ ग्राफिक आर्ट, जेम्स क्लीवर,* 1963; *चित्र 2.1* - वेब्स्टर्स इंटरनेशनल इनसाइक्लोपीडिया; *चित्र 2.2* - www.incredibleindia.in/../2007/12/bhima.jpg; *चित्र 2.3* - लॉस कैपरीचोस एक्वाटिंट बाई गोया, *ए हिस्ट्री ऑफ ग्राफिक आर्ट*, जेम्स क्लीवर, 1963; *चित्र 2.4* - अनिल सिन्हा; *चित्र 2.5*- सुनील कुमार; *चित्र 3.24*- द *स्क्रीम* एडवर्ड मुंक, 1893, नेशनल गैलरी, ओसलो, द ग्रेट आर्टिस्ट, ए मार्शल कैवेन्डिश वीकली कलेक्शन, 74 यू.के.; *चित्र 3.33*- *लास्ट सपर लिओनार्दो द विन्ची,* 1495-97

इकाई II

चित्र 4.1 - सुनील कुमार; *चित्र 4.5* और *4.10* - *ट्राइबल आर्ट ऑफ मिडिल इण्डिया*, वेरियर एल्विन, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1951; *चित्र 4.11, 4.12, 4.13 और 4.14*-सुनील कुमार; *पृष्ठ 52 और 53* - कोलम www.foodlah.com; *चित्र 5.2* - प्रोफ़ेसर नागराज पातुरी; *चित्र 5.5* और *5.6* - सुजय मुखर्जी; *चित्र 5.7, 5.8 और 5.9* www.foodlah.com; *चित्र 5.10* - www.kalamkariart.org/index.php; *चित्र 5.11* www.oac.cdlib.org/fowler/F2E23434BA.jp; *चित्र 5.12 और 5.13* - *ट्राइबल आर्ट ऑफ मिडिल इण्डिया*, वेरियर एल्विन, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1951; *चित्र 5.14* - www.ethicpaintings.com/indian_painting_styles/pithorapaintings.html; *चित्र 5.15*- प्रोफ़ेसर नागराज पातुरी; *चित्र 5.16 और 5.17*- ''मण्डाला'' माइक्रोसाफ्ट®, एनकार्टा®, ऑनलाइन इनसाइक्लोपीडिया 2008 और Http://en.wikipedia.org/wiki/Mandalas

इकाई III

चित्र 6.2 - www.ancientweb.org/India/; *चित्र 6.4 से चित्र 6.7* - सुनील कुमार; *चित्र 6.8* - www.hua.umf.maine.edu/MagnaCarta/index.html; *चित्र 6.9* - chinesecalligraphistore.com/catalog/chinese-1; *चित्र 7.1* - सुनील कुमार; *चित्र 7.11* - कैलिको म्युजियम, अहमदाबाद; *चित्र 7.12*- www.estatelegacyvaults.com/elv/cool_nifty_great/; *चित्र 7.13* - अर्लिएस्ट वुड कट, 1423, प्रोसेस ऑफ़ ग्राफिक रिप्रोडक्शन इन प्रिंटिंग, हेराल्ड करवेन, फेबर एण्ड फेबर लि., लंदन, एम.सी.एम.एक्स.एल.आई.एक्स.; *चित्र 7.18* - जार्जटाउन फ्रेम शाप, 2902-1/2 एम स्ट्रीट एन डब्ल्यू वाशिंगटन, डीसी

© NCERT not to be republished

ग्राफ़िक डिज़ाइन – एक कहानी

अध्ययन की परिभाषा

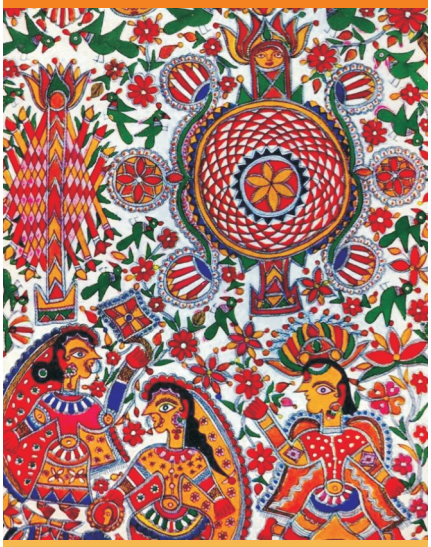

कक्षा 11 के लिए 'ग्राफिक डिज़ाइन' विषय की यह पुस्तक डिज़ाइन/रूपांकन के प्रति संवेदनशीलता और दृश्य समझ विकसित करने के लिए तैयार की गई है। 'डिज़ाइन कैसे करें' यह बताना ही इस पुस्तक का उद्देश्य नहीं है बल्कि यह तो क्रियामूलक पद्धति से विषय को सिखाती है। इसे संभव बनाने के लिए कि छात्र सावधानीपूर्वक तैयार की गई अभ्यासमालाओं, प्रायोगिक कार्यों और परियोजनाओं को संपन्न करते हुए अपना संपूर्ण पाठ्यक्रम पूरा करें यह सुझाव दिया गया है कि इसे अध्ययन के दौरान छात्राओं द्वारा तैयार की गई कुछ चुनी गई कृतियों को एक पोर्टफोलियो के रूप में संगृहीत किया जाए। इस प्रकार का कृति संग्रह (पोर्टफोलियो) अध्यापकों को हर समय यह जानने का अवसर देगा कि उनका अमुक छात्र किस प्रकार का सृजनात्मक कार्य कितनी लगन के साथ कर रहा है और उसका विकास किस गति से हो रहा है। इस प्रक्रिया के दौरान, छात्र मौलिक विचार उत्पन्न करने, सृजनात्मक संकल्पनाओं को अंतर्दृष्टि से देखने और उपयुक्त माध्यमों और सामग्रियों का प्रयोग करने के लिए प्रेरित होते हैं।

सोद्देश्य संग्रह पोर्टफोलियो होता है जो पाठ्यचर्या के संपूर्ण क्षेत्रों में छात्र द्वारा उपलब्धियों को दर्शाता है। छात्र को अपना यह पोर्टफोलियो साल भर तैयार करते रहना चाहिए। यह संग्रह कक्षा में और घर में करने के लिए दिए गए कार्यों, परियोजनाओं, प्रलेखनों, क्षेत्रीय दौरों की रिपोर्टों और अन्य सौंपे गए शैक्षिक कार्यों के माध्यम से, शिक्षार्थी के चिंतन तथा सृजनात्मक कौशल में हुए विकास और उसकी अभिवृत्ति तथा मूल्यों में हुए परिवर्तन को दर्शाता है। पुस्तक के प्रत्येक अध्याय में 'व्यावहारिक गतिविधियाँ' दी गई हैं जो पोर्टफोलियो में शमिल करने के लिए निर्धारित की गई हैं। पोर्टफोलियो शिक्षार्थियों को अपनी सृजनात्मक योग्यता तथा उनके द्वारा किए गए सूक्ष्म अवलोकन एवं निष्पादन की कुशलता के बारे में सोचने के लिए सहायता देता है। यह उन्हें अपने प्रगतिमान कार्यों पर विचार करने और अध्यापक की सहायता से अपने निजी कार्य की गुणवत्ता के बारे में निर्णय लेने में सहायक होता है।

पोर्टफोलियो के कुछ विशिष्ट उद्देश्य

छात्र में ऐसी योग्यता विकसित करना जिससे कि वह :

- ग्राफिक डिज़ाइन की मौलिक कृति की रचना, उसका प्रलेखन और परिरक्षण कर सके;
- इसके बारे में विवेचना कर सके;
- अपनी निजी कृति के विषय में ग्राफिक डिज़ाइन के मूल तत्वों और सिद्धांतों की दृष्टि से निरंतर चिंतन कर सके;
- अपने द्वारा रचित डिज़ाइनों के माध्यम से एक अवधि के संदर्भ में अपनी सर्जनात्मक योग्यताओं का परिवीक्षण और आकलन कर सके;
- ग्राफिक डिज़ाइन की कृतियों की रचना के संबंध में अपनी ताकतों और कमज़ोरियों को पहचान सके।

© NCERT not to be republished

पोर्टफोलियो में क्या रखा जाता है?

पोर्टफोलियो में छात्र की ग्राफिक डिज़ाइन की सर्वोत्तम कृतियों को जिसमें प्रारूप, कच्चे रेखाचित्र, लेख आदि शामिल होते हैं, संगृहीत किया जाता है। ये सब इस बात के साक्ष्य होते हैं कि छात्र अपने कौशल को प्राप्त करने के लिए किस प्रकार प्रगति कर रहा है। इसे छात्र द्वारा ग्राफिक डिज़ाइन के लिए अपेक्षित सृजनात्मक कौशल को प्राप्त करने की दिशा में की गई प्रगति का ब्योरा कहा जा सकता है।

वैसे तो पोर्टफोलियो कई प्रकार के बनाए जाते हैं पर उनमें से अधिकांश पोर्टफोलियो इन दो श्रेणियों में आते हैं : प्रक्रिया या पोर्टफोलियो और उत्पाद पोर्टफोलियो। इनके अलावा भी और कई तरह के पोर्टफोलियो होते हैं लेकिन उनमें अधिक स्पष्ट अंतर नहीं होता।

पहला चरण : पोर्टफोलियो के निर्माण की दिशा में उठाया जाने वाला पहला कदम है एक प्रक्रिया पोर्टफोलियो बनाना, जिसमें संगृहीत प्रलेखों से यह पता चलता है कि छात्र ने एक निश्चित अवधि में, पाठ्यचर्या में स्पष्ट उल्लिखित वांछित उद्देश्यों को प्राप्त करने की दिशा में कितनी प्रगति की है। इन प्रलेखों में कई चीज़ें शमिल होती हैं, जैसे छात्रों को हल करने के लिए दी गई डिज़ाइन संबंधी समस्या का विवरण अथवा छात्रों को दिया गया संक्षिप्त ब्योरा; संदर्भगत विवरण जिससे यह पता चले कि वे डिज़ाइन संबंधी समस्या को किस प्रकार हल करेंगे; मूल्यांकन का मानदंड कसौटी; घसीट कर लिखने या अर्थहीन अंकन जिससे यह पता चले कि छात्र किस दिशा में क्या सोच रहा है; सभी कच्चे नक्शे व रेखा सौंपे गए कार्य, परियोजनाओं, आदि के बारे में छात्र की सीधी सच्ची सोच; कार्य के बारे में अध्यापक की टीका-टिप्पणी; छात्र की कृतियों पर अध्यापक द्वारा किया गया संशोधन या लिखित टिप्पणी।

दूसरा चरण : दूसरा कदम है उत्पाद पोर्टफोलियो विकसित करना जिसे 'सर्वोत्तम कृतियों का पोर्टफोलियो' भी कहा जाता है। इनमें ऐसी परिष्कृत कृतियाँ शमिल होती हैं जिनसे छात्र द्वारा ग्राफिक डिज़ाइन के रूप में प्राप्त कुशलताओं और क्षमताओं का पता चलता है। छात्र अपनी सर्वोत्तम कृतियों का चयन स्वयं करता है अथवा इसके लिए अपने अध्यापकों या अभिभावकों की सहायता लेता है। इस प्रकार 'सर्वोत्तम कृतियों' का चयन भी सीखने की प्रक्रिया का ही एक भाग होता है। सदैव दो तरह की कसौटियाँ होती हैं। पहली श्रेणी की कसौटियाँ वे होती हैं जिनके बारे में (सौंपा गया) काम शुरू करने से पहले ही स्पष्ट रूप से बता दिया जाता है। दूसरी श्रेणी के अंतर्गत ग्राफिक डिज़ाइन के वे सिद्धांत आते हैं जिनका पालन किया जाना चाहिए। इनके बारे में इस पाठ्यपुस्तक में चर्चा की गई है। इन्हें 'चूक कसौटियाँ' कहा जा सकता है क्योंकि इनके पालन में चूक होना अच्छा नहीं माना जाता है। ये कसौटियाँ सभी प्रकार की परियोजनाओं और सौंपे गए कार्यों पर लागू होती हैं। अत: छात्रों को अपनी सर्वोत्तम कृतियों का चयन इन सभी कसौटियों के आधार पर करना चाहिए।

पोर्टफोलियो निर्माण में ये दोनों कदम अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं तथापि, छात्रों को अपने नए तरीके से भी पोर्टफोलियो बनाने की स्वतंत्रता दी जाती है। यदि छात्र किसी नए तरीके के लिए रुझान दर्शाता है अथवा कोई नए किस्म का पोर्टफोलियो बनाने के लिए अपनी इच्छा स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त करता है तो उसे उसके लिए अध्यापक द्वारा प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

पोर्टफोलियो की प्रमुख विशेषताएँ

मौलिकता

पोर्टफोलियो में अंकित और परिरक्षित कृतियाँ और परियोजनाएँ पाठ्यपुस्तक पर आधारित होनी चाहिए, पोर्टफोलियो में रखी गई सभी कृतियों की अध्यापक द्वारा जाँच की जानी चाहिए और उन पर अध्यापक के हस्ताक्षर होने चाहिए।

© NCERT not to be republished

प्रवाह और निरंतरता

पोर्टफोलियो की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि उसमें छात्र द्वारा तैयार की गई कृतियाँ पाठ्यचर्या की समस्त अवधि के दौरान समय-समय पर जोड़ी जाती हैं। उसमें छात्र की उच्च कोटि की कृतियों के अलावा साधारण किस्म की ऐसी कृतियाँ भी रखी जाती हैं जिनसे छात्र की प्रगति की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं का पता चलता हो। उनमें से कम-से-कम कुछ कृतियाँ तो ऐसी स्वत: पूर्ण होनी चाहिए जो छात्र के विकास को दर्शा सकें। इससे अध्ययन की प्रक्रिया की अधिक अच्छी जानकारी मिल सकती है।

मूल्यांकन की सुनिश्चित कसौटियाँ

छात्रों को अग्रिम रूप से यह बता दिया जाता है कि करने के लिए सौंपे गए कार्य या परियोजना आदि से क्या अपेक्षा की जाती है जिससे कि छात्र तदनुसार पोर्टफोलियो को व्यवस्थित कर सकें। इसके अलावा, इससे कार्य की गुणवत्ता पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।

एकीकरण और उपयोग

पोर्टफोलियो कुछ इस प्रकार का होना चाहिए कि उससे शैक्षिक गतिविधियों और जीवन के बीच अनुरूपता स्थापित हो सके। इस संबंध में छात्रों के साथ-साथ अध्यापकों को भी बड़ी भूमिका निभानी पड़ती है। छात्रों से यह दर्शाने के लिए कहा जाता है कि वे अपनी कृतियों और परियोजनाओं आदि के माध्यम से प्राप्त कौशल और ज्ञान को अपने वास्तविक जीवन की परिस्थिति में किस प्रकार उपयोग करेंगे।

एक सुव्यवस्थित पोर्टफोलियो अध्यापक के हस्तक्षेप की प्रभावकारिता के साथ-साथ छात्र के विकास को भी दर्शाता है। यह एक ऐसा उपयोगी दस्तावेज़ होता है जो परिवार, मित्रों और समुदाय के साथ बैठकर देखा-जाँचा जा सकता है।

पोर्टफोलियों का मूल्यांकन : स्वत: आकलन

छात्र द्वारा पोर्टफोलियो के आकलन का सर्वोत्तम तरीका है स्वत: आकलन यानी स्वयं छात्र द्वारा उसका आकलन या मूल्यांकन। स्वत: आकलन करने से, सृजनात्मक प्रक्रिया में छात्र की ताकतों और कमज़ोरियों तथा संबंधित क्षेत्रों में उसकी प्रगति का आकलन करने के लिए छात्र की क्षमता में सुधार होता है। इस प्रक्रिया से छात्र स्वयं यह जान सकते हैं कि उनके ज्ञान में कितनी वृद्धि हुई है, वे क्या सीख पा रहे हैं और किन-किन क्षेत्रों या विषयों में उन्हें और सुधार करने की आवश्यकता है, आदि-आदि। छात्र यह भी सीखते हैं कि अपनी उपलब्धियों और प्रगति की अधिक सटीक स्थिति जानने के लिए वे अपने अध्यापकों और अभिभावकों के साथ प्रभावी ढंग से कैसे व्यवहार करें। शिक्षार्थी के रूप में अपनी समझ-बूझ के विकास को जानने के लिए पोर्टफोलियो के आकलन का किस प्रकार उपयोग किया जाए यह जानने के लिए छात्रों को अपने अध्यापक के मार्गदर्शन और समर्थन की आवश्यकता होती है। छात्रों को यह भी कहा जाना चाहिए कि वे पोर्टफोलियो के आधार पर स्वत: किए गए अपने आकलन की एक रिपोर्ट तैयार करें। इस स्वत: आकलन की रिपोर्ट का उपयोग आगे चल कर मूल्यांकनकर्ताओं द्वारा भी किया जा सकता है।

पोर्टफोलियो का आकलन : अध्यापकों/मूल्यांकनकर्ताओं द्वारा

छात्र के पोर्टफोलियो का आकलन करते समय मूल्यांकनकर्ताओं को स्वयं छात्र द्वारा स्वत: किए गए आकलन पर भी ध्यान देना चाहिए। मूल्यांकनकर्ता छात्र के स्वत: आकलन से सहमत हो सकते हैं या नहीं भी होते; किंतु अंतिम आकलन में इस बात का उल्लेख अवश्य किया जाना चाहिए।

© NCERT not to be republished

पोर्टफोलियो का आकलन एक बहुमुखी प्रक्रिया है जिसमें निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं :

- यह एक निरंतर प्रक्रिया है जिसमें छात्र द्वारा उद्देश्यों को प्राप्त करने की दिशा में की गई प्रगति पर बराबर नज़र रखने के लिए रचनात्मक और संकल्पनात्मक दोनों प्रकार का अवसर मिलता है।
- यह सहयोगी चिंतन के लिए अवसर प्रदान करता है, जिसके अंतर्गत छात्र अपनी चिंतन प्रक्रिया के बारे में सोच सकते हैं और अंत:निरीक्षण कर सकते हैं, अपने बोध का परिवीक्षण करते हैं, ग्राफिक डिज़ाइन तैयार करने, समस्याओं का समाधान करने और सोच-समझ कर निर्णय लेने की अपनी पद्धतियों पर विचार करते हैं और विषयों तथा कौशलों के बारे में अपनी खुद की समझ-बूझ के बारे में सोचते हैं।
- यह छात्र के सीखने के अनुभव और उसके आधारभूत ज्ञान, कौशल और अभिवृत्तियों पर ध्यान केंद्रित करता है।
- पोर्टफोलियो में छात्र के कार्य के ऐसे नमूने संगृहीत होते हैं जो अध्ययन के अंत में केवल एक बार किए जाने वाले मूल्यांकन की बजाय संपूर्ण मूल्यांकन अथवा अध्ययन अवधि में समय-समय पर किए गए मूल्यांकन से संबंधित होते हैं।
- पोर्टफोलियो में ऐसी कृतियाँ होती हैं जो सौंपे गए भिन्न-भिन्न कार्यों, परियोजनाओं आदि से संबंध में भिन्न-भिन्न प्रकार की आकलन कसौटियाँ प्रस्तुत करती हैं।
- पोर्टफोलियो में तरह-तरह की कृतियाँ होती हैं और स्वयं छात्र, उसके सहपाठियों, अध्यापकों तथा माता-पिता/अभिभावकों द्वारा उनका मूल्यांकन और गुण विवेचन भी सदा संभव होता है।

कृतियों का मूल्यांकन सोच-समझकर किया जाए, इसके लिए यह आवश्यक है कि अध्यापकों के पास अपने छात्रों की प्रगति का मूल्यांकन करने के लिए बहु-आयामी कसौटियाँ हों। एक पूरी तरह तैयार किए गए पोर्टफोलियो के लिए कुछ कसौटियाँ निम्नलिखित हो सकती हैं :

- विचारशीलता जिससे यह स्पष्ट हो कि छात्र अपने बोध, सोच और समग्र चिंतन-शैली पर ध्यान देता रहा है।
- नवीनता, मौलिकता और विलक्षणता मुख्य मार्गदर्शी कसौटियाँ हैं।
- डिज़ाइन की संचारणीयता, उपयोगिता प्रयोग शक्ति और पुष्टता को कृति में महत्त्व दिया गया है।
- कृति के माध्यम से सौंदर्य, लालित्य और सहजता का भाव स्पष्ट झलकता है।
- कृति में सुस्पष्टता, यथार्थता और उपयुक्तता प्रदर्शित है।
- संबंधों में प्रगति और विकास पाठ्यचर्या संबंधी कौशलों की कुंजी और प्रत्येक सौंपे गए कार्य, परियोजना आदि के विशिष्ट सूचक हैं।
- प्रमुख संकल्पनाओं और कुशलताओं की समझ और उनका उपयोग।
- कार्यों तथा कार्य-विधियों की परिपूर्णतया, परिशुद्धता और उपयुक्तता पोर्टफोलियो में प्रस्तुत है।
- ग्राफिक डिज़ाइन के सिद्धांतों, जैसे कि दृश्य संतुलन, समानुपात, वैषम्य, समरसता, लय, रुचि का केंद्र आदि का प्रयोग और अन्वेषण ठीक से किया गया है जैसा कि इस पाठ्यपुस्तक में बताया गया है।

यह अत्यंत आवश्यक है कि अध्यापक और छात्र एक साथ मिलकर उन कसौटियों की प्राथमिकता निर्धारित करें जिनका उपयोग विभिन्न कार्यों तथा परियोजनाओं के लिए किया जाएगा और जिनके आधार पर छात्र की प्रगति का मूल्यांकन और आकलन रचनात्मक तथा संकल्पनात्मक दोनों रूपों में किया जाएगा। छात्र और

© NCERT not to be republished

अध्यापक एक साथ मिलकर यह पता लगाएँगे कि पाठ्यपुस्तक में दी गई गतिविधियों के अलावा और कौन-सी गतिविधियाँ विशेष रूप से महत्वपूर्ण या उल्लेखनीय हैं जिन्हें पोर्टफोलियो में स्थान दिया जाना चाहिए। अंततः संकल्पनात्मक मूल्यांकन की प्रक्रिया के अन्तर्गत किसी न किसी रूप में चर्चा या खोज की जाती है।

पाठ्यचर्या की पुस्तक में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि पोर्टफोलियो आकलन/मूल्यांकन के लिए 20 अंक अलग से निर्धारित किए जाएँगे। ये निरंतर आकलन के लिए होते हैं और छात्र को सभी इकाइयों के प्रत्येक अध्याय के अंत में दी गई गतिविधियों को संपन्न करना होगा। यह सुनिश्चित करने के लिए कि पोर्टफोलियो के कार्य को गंभीरता से लिया जाए, केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (सी.बी.एस.ई.)/पब्लिक स्कूल एक्ज़ामिनेशन बोर्ड ने भी एक बाह्य परिवीक्षण तंत्र की व्यवस्था की है जिसके अंतर्गत परीक्षा बोर्ड द्वारा नामांकित विशेषज्ञों द्वारा जाँच की जाएगी।

अध्ययन की अन्य परिभाषा

पाठ्यपुस्तक में प्रत्येक अध्याय के अंत में दी गई अभ्यासमाला और प्रायोगिकों के अलावा अनेक बॉक्सों में गतिविधियाँ और परियोजनाएँ भी दी गई हैं। बाक्स में सामग्री देने का तात्पर्य है अध्ययन प्रक्रिया को समृद्ध बनाना। यह मूल्यांकन के लिए नहीं होती। गतिविधियाँ, दौरे/योजनाएँ, परियोजनाएँ और प्रायोगिक पोर्टफोलियो के भाग होंगे और उनका मूल्यांकन किया जाएगा।

पुस्तक के अंत में विस्तृत ग्रंथ सूची और ग्राफिक कला व डिज़ाइन के क्षेत्र में प्रयोग की जाने वाली पारिभाषिक शब्दावली भी दी गई हैं। ग्रंथ सूची से ग्राफिक डिज़ाइन विषय की जानकारी बढ़ेगी। कला-संस्थाओं की एक सूची भी पुस्तक में दी गई है। यह सूची उन छात्रों के लिए जानकारी प्राप्त करने में सहायक सिद्ध होगी जो कला विषय में उच्च अध्ययन करना चाहेंगे।

© NCERT not to be republished

© NCERT
not to be republished

ग्राफ़िक डिज़ाइन

सूची

ग्राफ़िक डिज़ाइन – परिचय

ग्राफ़िक कला, डिज़ाइन और ग्राफ़िक डिज़ाइन

ग्राफ़िक डिज़ाइन के तत्व और सिद्धांत

इकाई I

ग्राफ़िक डिज़ाइन के मूल आधार

ग्राफिक डिज़ाइन, जिसे हिंदी में आलेखीय रूपांकन या अभिकल्पन कह सकते हैं, एक ऐसा विषय है जो अनेक प्रकार के कलात्मक तथा व्यावसायिक विषयों तथा शास्त्रों से जुड़ा है। ये विषय दृश्य संचार और प्रस्तुति पर आधारित होते हैं। विचारों और संदेशों का दृश्य निरूपण करने के लिए एक साथ अनेक प्रतीकों, आकृतियों या छवियों और शब्दों द्वारा कई तरीके काम में लाए जाते हैं। किसी ग्राफिक डिज़ाइन में वांछित परिणाम प्राप्त करने के लिए भिन्न-भिन्न मात्राओं में मुद्रणकला (Typography), दृश्य विधान (Visual) और विन्यास (Layout) की तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। इसमें प्रक्रिया (डिज़ाइनिंग) जिससे संप्रेषण उत्पन्न किया जाता है और उत्पाद (डिज़ाइन्स) दोनों शामिल होते हैं।

किसी डिज़ाइन में शुभंकर (Logo) या अन्य कलात्मक कार्य, सुगठित प्रलेख और डिज़ाइन संबंधी विशुद्ध सिद्धांत तथा रूप, रंग, संतुलन, समरसता जैसे वे तत्व शामिल होते हैं जो उस डिज़ाइन को एक समन्वित रूप देते हैं। संयोजन (Composition) ग्राफिक डिज़ाइन के सबसे महत्वपूर्ण अवयवों में से एक है जो उस स्थिति में अपना सर्वोपरि स्थान प्राप्त कर लेता है जब डिज़ाइन के कार्य में पहले से मौजूद सामग्री का उपयोग किया जाता है अथवा विभिन्न प्रकार के तत्वों को प्रयोग में लाया जाता है।

© NCERT not to be republished

© NCERT not to be republished

1
अध्याय

ग्राफ़िक डिज़ाइन परिचय

जब हम अपने चारों ओर दृष्टिपात करते हैं तो यह पाते हैं कि हम बहुत से चित्रों, छायाचित्रों और आकृतियों/छवियों से घिरे हैं। ये दृश्य वस्तुएँ ग्राफिक डिज़ाइन के ही नाना रूप हैं। ग्राफिक डिज़ाइन हमारी रोजमर्रा की ज़िंदगी का हिस्सा है जिसमें डाक टिकट जैसी छोटी चीज़ से लेकर बड़े-बड़े विज्ञापन पट्ट और कपड़े आदि पर छपे इश्तहार शामिल होते हैं। ग्राफिक डिज़ाइन सौंदर्यपरक एवं सुरुचिपूर्ण तरीके से हमें विचारों का आदान-प्रदान करने, संदेश देने, मन को प्रेरित करने, ध्यान आकर्षित करने और सूचना देने में सहायता देती है। ग्राफिक डिज़ाइन दृश्य संप्रेषण एवं संपर्क का एक प्रमुख साधन है और इसमें संचार के तरह-तरह के माध्यम और तरीके शामिल होते हैं जिनके द्वारा हम लक्ष्यगत दर्शकों तथा श्रोताओं तक अपनी बात पहुँचाते हैं। ये दृश्य साधन चिंतन, भाव, विचार तथा वास्तविकता का निरूपण करते हैं।

अपने विचारों का आदान-प्रदान करते या संदेश देते समय जब कोई व्यक्ति किसी भाषा का प्रयोग करता है तो इस क्रिया को 'शाब्दिक संचार' (verbal communication) कहा जाता है। रेडियो प्रसारण और लाउडस्पीकर पर की जाने वाली उद्घोषणाएँ शाब्दिक संचार के बहुत अच्छे उदाहरण हैं। लेकिन यदि कोई व्यक्ति भाषा का प्रयोग नहीं करता और अपने विचारों या भावों को व्यक्त करने के लिए किसी अन्य माध्यम का प्रयोग करता है तो उस क्रिया को 'अशाब्दिक संचार' (non-verbal communication) कहा जाता है। अशाब्दिक संचार दृश्य आकृतियों, शुभंकर (logo), अखबारी विज्ञापनों और संगीत, नृत्य, शारीरिक संकेतों या अभिनय आदि माध्यमों के द्वारा किया जाता है। फिल्में, टेलीविज़न, थिएटर, एनिमेशन (अनुप्राणन), मल्टीमीडिया (बहुविध संचार साधन) और इंटरनेट आदि संचार के कुछ ऐसे उदाहरण हैं जिनमें संचार के शाब्दिक और अशाब्दिक दोनों माध्यमों का सफलतापूर्वक प्रयोग किया जाता है।

संचार के अशाब्दिक माध्यमों के अंतर्गत, दृश्य माध्यमों का सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है। ग्राफिक डिज़ाइन का संबंध मुख्यत: दृश्य संचार से ही है। आधुनिक ग्राफिक डिज़ाइन पद्धति का डिज़िटल प्रौद्योगिकी में भी प्रयोग किया जाता है। आज अधिकांश ग्राफिक डिज़ाइनर नए-नए क्षेत्रों में कार्य कर रहे हैं; जैसे– नए संचार माध्यमों, अन्योन्य-सक्रिय डिज़ाइन, सूचना संबंधी वास्तुकला

© NCERT not to be republished

और ग्राफिकल यूज़र इंटरफेस (जी.यू.आई.) आदि। इसलिए आज किसी भी ग्राफिक डिज़ाइनर को अनेक प्रकार के तकनीकी कौशलों, सौंदर्यबोध, कल्पनाशील मन-मस्तिष्क और सृजनशीलता की आवश्यकता होती है। इतना सब कुछ बता देने के बाद भी आप यह सोच रहे होंगे कि आखिर यह ग्राफिक डिज़ाइन वास्तव में होती क्या है?

ग्राफ़िक डिज़ाइन सर्वत्र देखने को मिलती है

सूरज उगता है ...

चिड़िया चहचहाती है ...

... आँखें खुलती हैं ...

चित्र 1.1 मोर के पंख पर डिज़ाइन का एक बेहतरीन नमूना

आप बिस्तर पर जग जाते हैं और समाचारपत्र के शीर्षकों को पढ़ते हैं (यह मुद्रणकला का एक ग्राफिक डिज़ाइन है!)।

आप नाश्ता लेते हैं और दूध की थैली या बोतल पर छपा हुआ शुभंकर (logo) देखते हैं (यह भी एक ग्राफिक डिज़ाइन है)।

आप बाइक चलाते हैं और सड़क पर यातायात के संकेतों (ट्रैफिक साइन) को देखते हैं (यह भी ग्राफिक डिज़ाइन है)।

आप अपना कंप्यूटर खोलते हैं और 'आइकॉन' पर क्लिक करते हैं (यह भी ग्राफिक डिज़ाइन है)।

इसी तरह, ग्राफिक डिज़ाइन के और भी अनेक उदाहरण हो सकते हैं।

ग्राफिक डिज़ाइन हमारी जीवन-शैली में बहुत ज़्यादा रच-बस गई है। हम सुबह जब उठते हैं तब से लेकर रात को जब तक सो नहीं जाते हम तरह-तरह की ग्राफिक डिज़ाइनों से घिरे रहते हैं।

ग्राफ़िक डिज़ाइन वस्तुओं को बोधगम्य बनाती है

चित्र 1.2 डिज़िटल घड़ी

हम सवेरे उठते हैं और घड़ी में समय देखते हैं। घड़ी पर अंकित अंकों की पठनीयता और उसके डायल का रंग हमें प्रभावित करता है। फिर हम सूचना या खबरें जानना चाहते हैं और इसके लिए समाचारपत्र पढ़ते हैं। समाचारपत्र के सभी पृष्ठ समाचारों से भरे होते हैं। उन्हें पढ़ते समय हमारा ध्यान समाचारपत्र की पाठ्यसामग्री, अक्षरों के आकार और उसकी रूपरेखा पर भी जाता है।

चित्र 1.3 पुस्तक, पत्रिका और समाचारपत्र पर लिखित सामग्री और दृश्य चित्र दोनों होते हैं।

© NCERT not to be republished

क्या आप किसी ऐसे समाचारपत्र की कल्पना कर सकते हैं जिसमें पाठ्यसामग्री बिना स्तंभों में वर्गीकृत किए ऐसे सर्वत्र बिखरी पड़ी हो? ग्राफिक डिज़ाइन की सहायता से हम किसी भी विषय को अधिक आसानी से समझ सकते हैं। ग्राफिक डिज़ाइन स्पष्ट एवं कल्पनाशील दृश्यों के माध्यम से संदेश देने या विचारों का आदान-प्रदान करने में सहायक होती है। इस प्रकार ग्राफिक डिज़ाइन ने समाज को रचनात्मक रीति से हमेशा सकारात्मक योगदान देते हुए प्रभावित किया है। ग्राफिक डिज़ाइन लोगों की प्रवृत्तियों को, उनके सांस्कृतिक, आर्थिक और सामाजिक जीवन से जोड़कर समझने में सहायक होती है और इस प्रकार पर्यावरण तथा समाज के बारे में जागरूकता उत्पन्न करती है। ज़रा सोचिए, यदि किसी नए यंत्र के बारे में आपको कोई निर्देश पुस्तिका नहीं दी जाए तो आप उस यंत्र को कैसे चलाएँगे?

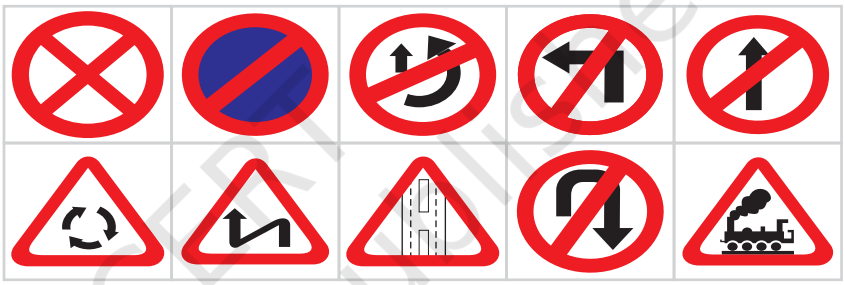

चित्र 1.4 यातायात के संकेतों का भी अर्थ होता है जिससे उनका अनुकरण करने को सूचना मिलती है

ग्राफ़िक डिज़ाइन सुरक्षा प्रदान करती है

आप घर से बाहर कदम रखते हैं और अपने चारों ओर अनेकानेक ग्राफिक आकृतियाँ या छवियाँ देखते हैं, जैसे, पास की दीवार पर लगा कोई इश्तहार (poster), दुकान पर लगा बिलबोर्ड और निओन साइन (चमकदार रोशनी में दिए गए संकेत) और अन्य कई तरह के संकेत तथा प्रतीक। क्या आप जानते हैं कि अगर सड़कों पर ऐसे संकेत या प्रतीक न हों तो रोज कितनी दुर्घटनाएँ होंगी?

प्राचीनतम सड़क संकेत मील के पत्थर थे जिनसे दूरी तथा दिशा का ज्ञान होता था; उदाहरण के लिए, रोम के सम्राटों ने अपने संपूर्ण साम्राज्य में पत्थर के खंबे लगवाए थे जिन पर लिखा गया था कि वहाँ से रोम नगर कितनी दूरी पर है। मध्ययुग में सड़कों के चौराहों पर बहु-दिशा सूचक संकेत लगाना एक आम बात हो गई। यातायात के अधिकांश संकेतों का बुनियादी स्वरूप रोम में 1908 में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय सड़क कांग्रेस के सम्मेलन में तय किया गया था। तब से उन संकेतों को अधिक यात्री-अनुकूल और अर्थपूर्ण बनाने के लिए इनमें समय-समय पर काफी परिवर्तन किए जाते रहे हैं।

चित्र 1.5 रोम साम्राज्य में प्रयुक्त मील का पत्थर

अब तो सभी देशों में यात्रियों को सूचना एवं सुविधा देने के लिए सड़कों के किनारे यातायात संकेत लगाना एक आम बात हो गई है। चूँकि भिन्न-भिन्न लोग अलग-अलग भाषाएँ बोलते, पढ़ते और लिखते हैं, इसीलिए संभव है कि उन्हें पराई भाषा-लिपि के शब्द पढ़ने या समझने में कठिनाई हो, इसलिए अब शब्दों की बजाय अंतर्राष्ट्रीय संकेतों, जो प्रतीकों के रूप में होते हैं, विकसित कर लिए

© NCERT not to be republished

ग्राफ़िक डिज़ाइन – एक कहानी

सड़क संकेतों से लेकर तकनीकी रिपोर्टों तक, अंतर-कार्यालयिक ज्ञापनों से लेकर सूचना या निर्देश पुस्तिका (manual) तक, सर्वत्र ग्राफिक डिज़ाइनें तरह-तरह की जानकारियाँ देती हैं। दृश्य प्रस्तुति के द्वारा मूल पाठ्य की पठनीयता बढ़ जाती है। ग्राफिक डिज़ाइन सूचना को बोधगम्य बना देती है, इसलिए ज़िंदगी आसान हो गई है। यदि दिशा-सूचक संकेत न लगाए जाएँ तो न जाने कितने लोग रास्ते से भटक जाएँगे!

गए हैं। ये प्रतीक अब अधिकांश देशों में प्रयुक्त होते हैं।

भारतीय राजमार्गों पर लगाए जाने वाले मील के पत्थरों की पृष्ठभूमि सफेद होती है और ऊपरी सिरा पीला या हरा होता है। उन पर सबसे नज़दीकी नगरों और स्थान के नाम और किलोमीटर में उनकी दूरी लिखी होती है। हमारे अविभाजित राजमार्गों पर लगे मील के पत्थरों पर दोनों ओर सूचना लिखा दी जाती है जिससे दोनों दिशाओं में स्थित निकटतम शहरों की दूरी बताई जाती है। मील के पत्थर के ऊपरी सिरे पर राजमार्ग का नंबर लिखा जाता है। मील के पत्थर पर लिखी गई संख्या यह बताती है कि यात्री ने कितनी दूरी तय कर ली है और कितनी बाकी है। समय के बदलाव के साथ यातायात के संकेतों की नई-नई शृंखलाएँ विकसित हो गई हैं जिनकी सूचना प्रणाली काफी सूझ-बूझ से भरी है। आज संकेत लिखने की ऐसी सामग्रियों का प्रयोग किया जाता है जिससे रात के अंधेरे में और कम रोशनी में भी उन्हें पढ़ा-समझा जा सकता है।

चित्र 1.6 विभिन्न रंगों के संकेत भिन्न-भिन्न निर्देश देते हैं। पैदल चलने वालों को सुरक्षापूर्वक सड़क पार करने में 'ज़ेब्रा क्रॉसिंग' सहायक होती है।

ग्राफ़िक डिज़ाइन और पहचान

यह स्पष्ट है कि मानव आदिकाल से ही रूपों और प्रतीकों से संबंधित रहा है और इनकी बदौलत ही मनुष्यों को संबंध और पहचान बनाने में सहायता मिली है। आरंभिक काल से ही लोग अपनी पहचान को प्रदर्शित करने के लिए झंडों का प्रयोग करते रहे हैं। झंडा कपड़े का एक टुकड़ा होता है जो अक्सर किसी डंडे या मस्तूल पर फहराया जाता है। इसका प्रयोग आमतौर पर कोई संकेत देने या पहचान बताने के लिए प्रतीकों के रूप में किया जाता है। पहले इसका प्रयोग विशेष रूप से ऐसे स्थानों पर किया जाता था जहाँ संचार या संदेश देने का कोई आसान तरीका नहीं होता था। आज भी इसका उपयोग रेलों, जहाज़ों, हवाई अड्डों पर संकेत देने

© NCERT not to be republished

चित्र 1.7 विभिन्न राष्ट्रों के झंडे

के लिए किया जाता है। झंडे परियोजनाओं, संस्थानों तथा राष्ट्रों की पहचान करने में भी सहायक होते हैं।

झंडों का आविष्कार और सर्वप्रथम प्रयोग प्राचीन भारतीयों द्वारा किया गया था। भारत और चीन की देखादेखी इनके पड़ोसी देश बर्मा, थाईलैंड और दक्षिण-पूर्व एशियाई देश भी इनका प्रयोग करने लगे। सामाजिक-सांस्कृतिक संस्थाओं या समूहों ने भी अपने धर्म, संघों, खेलों आदि की पहचान बनाने के लिए अपने-अपने झंडे अपना लिए। संस्थाएँ और संगठन अपने झंडों के माध्यम से अपनी विचारधाराएँ और सिद्धांत प्रस्तुत करते हैं। तथ्यत: हर संस्था अपने कतिपय विचारों तथा सिद्धांतों पर चलती है और वह अपने झंडों के माध्यम से अपनी पहचान बनाती है और लोगों का विश्वास जीतती है।

राष्ट्रीय ध्वज देशभक्ति के प्रतीक होते हैं और कई रंगों के होते हैं और ये रंग अनेक भावों के द्योतक होते हैं। अनेक राष्ट्रीय ध्वज और अन्य झंडे भिन्न-भिन्न प्रतीकात्मक डिज़ाइनों या रूप-रंग के होते हैं और झंडे आमतौर पर आयताकार होते हैं। सामान्यतया उनकी लंबाई-चौड़ाई का अनुपात 3:2 या 5:3 होता है और उनकी आकृति या आकार ऐसा होता है जो फहराने के लिए उपयुक्त हो। कुछ झंडे वर्गाकार, त्रिभुजाकार या अबाबील की पूँछ जैसे होते हैं जो आमतौर पर कई रंगों और प्रतीकों से बने होते हैं।

शुभंकर भी पहचान का एक अन्य रूप होता है। हमें अपने चारों ओर अलग-अलग तरह के अनेक लोगो, प्रतीक और छाप (ब्रांड) देखने को मिलते हैं।

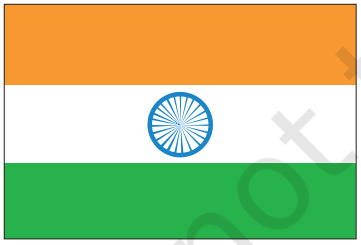

चित्र 1.8 भारतीय राष्ट्रीय ध्वज

भारत का राष्ट्रीय ध्वज भारत की भूमि और लोगों का प्रतीक है। हमारा राष्ट्रीय ध्वज एक तिरंगा फलक है जो तीन आयताकार फलकों या पट्टियों के मेल से बना है जिनकी चौड़ाई एकसमान होती है। सबसे ऊपर के फलक (पट्टी) का रंग केसरिया और सबसे नीचे के फलक का रंग भारतीय हरा है। बीच का फलक सफेद होता है और उसके केंद्र भाग में अशोक चक्र का चिह्न बना होता है। इस चक्र का रंग गहरा नीला (navy blue) होता है और इसमें समान दूरी पर 24 आरे बने होते हैं। अशोक चक्र झंडे के दोनों ओर सफेद फलक के बीचोंबीच बना होता है। झंडा आयताकार होता है जिसकी लंबाई और चौड़ाई का अनुपात 3:2 होता है।

संविधान सभा में जब इस झंडे को राष्ट्रीय ध्वज के रूप में अपनाया गया था तब डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने इसके रूपरंग का विश्लेषण करते हुए कहा था कि "इसका भगवा या केसरिया रंग त्याग और अनासक्ति का द्योतक है। बीच का सफेद रंग प्रकाश यानी सच्चाई के मार्ग का सूचक है जो हमारे आचार-व्यवहार के मामले में हमारा पथ-प्रदर्शन करेगा। हरा रंग भूमि और वनस्पति से हमारे संबंधों को दर्शाता है जिस पर हमारा सारा जीवन निर्भर होता है। अशोक चक्र धर्म यानी कानून का पहिया है। सत्य और धर्म उन लोगों के नियंत्रक सिद्धांत होने चाहिए जो इस ध्वज की छत्रछाया में काम करते हैं, इसके अलावा पहिया गति का भी द्योतक है। गति में ही जीवन होता है। भारत को गतिमान रहते हुए आगे बढ़ना होगा।"

© NCERT not to be republished

शुभंकर या लोगो किसी संस्था या संगठन की विचारधारा और सिद्धान्तों का प्रतीकात्मक दृश्य एवं शाब्दिक पाठ्य निरूपण होता है। लोगोटाइप एक ऐसा प्रतीक होता है जिसमें अक्षररूपों या टाइपफेसों का प्रयोग किया जाता है।

चित्र 1.9 विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के लोगो

चित्र 1.10 एड्स (एक्वायर्ड इम्यून डिफिसिएंसी सिन्ड्रोम)

चित्र 1.11 संस्थागत और गणितीय प्रतीक

ग्राफिक डिज़ाइनों में किसी उत्पाद या विचार को प्रभावकारी दृश्य संचार के माध्यम से बेचने की अद्भुत क्षमता होती है। लोगो, शब्दों या अक्षरों और रंग का इस्तेमाल किसी कंपनी की पहचान बनाने के लिए किया जाता है। निगमित क्षेत्र और उद्योग जगत में ब्रांड अपनाने का चलन बराबर बढ़ता जा रहा है। जब आप कोई चीज़ खरीदने बाज़ार में जाते हैं तो आपको चयन के लिए उस चीज़ के कई विकल्प होते हैं लेकिन इनमें से कुछ ही आपके ध्यान को आकर्षित करते हैं क्योंकि उनकी डिज़ाइन और पैकेटबंदी (पैकेजिंग) आकर्षक होती है। पैकेजिंग की डिज़ाइन भी ग्राफिक डिज़ाइन का ही हिस्सा है; और किसी वस्तु के चयन या पहचान में उसका भी महत्वपूर्ण स्थान होता है।

ग्राफ़िक डिज़ाइन अभिव्यक्ति एवं सूचना का माध्यम होती है

सड़क के आस-पास का हर संकेत आपको बुलाता है और आपका ध्यान आकर्षित करने की कोशिश करता है। सच तो यह है कि पढ़े-लिखे और अनपढ़ दोनों ही तरह के लोग दृश्य सूचनाओं या रूपांकनों से समान रूप से लाभान्वित होते हैं। आप बस या ट्रेन में कदम रखते हैं तो आपको अपने चारों ओर बहुत-सी जानकारी देखने को मिलती है। दुकानों, बड़े-बड़े वस्तु-भंडारों से लेकर शहर या कस्बे में आयोजित उत्सवों और सांस्कृतिक कार्यक्रमों आदि के बारे में जानकारी या सूचना देने का काम भी ग्राफिक प्रतीकों के माध्यम से होता है। प्राकृतिक आपदाओं, भूकंपों, अन्य आपदाओं, यहाँ तक कि युद्ध के दौरान भी सूचना देने का काम भी इस माध्यम से आसानी से किया जा सकता है।

सभी विषयों, विशेष रूप से भूगोल, विज्ञान, भाषा, इतिहास और गणित की पाठ्यपुस्तकों में सिद्धांतों और संकल्पनाओं को स्पष्ट करने के लिए रूपांकनों (ग्रफिक्स) का प्रयोग किया जाता है। पुस्तकों में आमतौर पर पाई जाने वाली ग्राफिक सामग्री इसका एक सामान्य उदाहरण है : मानचित्र और आरेख (diagram)। शिक्षण सामग्री को अधिक सुलभ, दिलचस्प और आसान बनाने के लिए पाठ्यपुस्तकों आदि में ग्राफिक डिज़ाइनों का इस्तेमाल किया जाता है।

ग्राफिक डिज़ाइन प्रयोगकर्ता की पारस्परिक सक्रियता और दृश्य संचार के साथ मिलकर सौन्दर्यात्मक सक्रिय वेबसाइट के माध्यम से सूचना प्राप्ति को एक लुभावना अनुभव बना देती है। वेबसाइट दृष्टि और अनुभूति दोनों को सक्रिय बनाकर प्रयोक्ता के ऑनलाइन अनुभव को बढ़ा देती है। वेबसाइट का हर पृष्ठ

© NCERT not to be republished

चित्र 1.12 ग्राफिक के साथ पाठ्यसामग्री

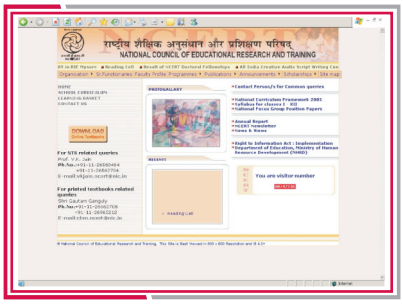

चित्र 1.13 सक्रिय आइकनों और दृश्यमान वस्तुओं के साथ एनसीईआरटी की वेबसाइट का होमपेज

> डिज़ाइन का काम केवल छवियाँ/आकृतियाँ बनाना ही नहीं होता, बल्कि यह नया चिंतन उत्पन्न करती है, मन-मस्तिष्क को उत्प्रेरित करती है, मन:स्थिति को बनाती या बदलती है और अंततोगत्वा जनसाधारण और समाज को बदल देती है।

प्रतीकों (आइकनों) से भरा होता है। आप सूचना की खोज में किसी आइकन को क्लिक करें और जानकारी की पूरी दुनिया आपके सामने खुल जाएगी। आप जितना ज़्यादा खोजते जाएँगे उतनी ही ज़्यादा जानकारी आपको मिलती जाएगी। ग्राफिक विचारों को अनुभवजन्य विचारों में परिवर्तित करने के साथ-साथ, आपको डिज़िटल माध्यम की बारीकियों को समझना भी ज़रूरी है।

ग्राफिक डिज़ाइन तैयार करने के लिए सबसे पहले सृजनशील मन-मस्तिष्क की अवश्यकता होती है। सूक्ष्म अवलोकन, समीक्षात्मक चिंतन, और विश्लेषणात्मक सोच सब मिलकर ग्राफिक डिज़ाइन की क्षमता को बढ़ा देते हैं। ग्राफिक डिज़ाइन के पारंपरिक उपकरणों जैसे– पेंसिल, पेन एवं ब्रश तो आवश्यक हैं ही इसके अतिरिक्त, समकालीन ग्राफिक डिज़ाइन के लिए डिज़िटल उपकरणों और प्रौद्योगिकी को समझना भी जरूरी होता है। साथ ही साथ संचारगत समाधान प्राप्त करने के लिए उपयुक्त उपकरणों का चयन भी ग्राफिक डिज़ाइन के कौशल की कुंजी है और निश्चित रूप से वह सौंदर्यपरक एवं प्रभावपूर्ण डिज़ाइन का मूल आधार है।

© NCERT not to be republished

प्रश्नावली

1. शाब्दिक संचार और अशाब्दिक संचार में क्या अंतर है, सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।
2. आपके विचार में ग्राफिक डिज़ाइन सुरक्षा प्रदान करने में कैसे सहायक होती है?
3. डिज़ाइन की पहचान करने में ग्राफिक डिज़ाइन कैसे योगदान देती है? चर्चा करें।

प्रायोगिक

कम से कम बीस शुभंकरों के नमूने इकट्ठा करें। उनमें से उन पाँच प्रतीकों को चुनें जिन्हें आप सबसे ज़्यादा पसंद करते हैं और उनकी ग्राफिक विशेषताओं का विश्लेषण करें।

भीख लेते हुए भिखारी, रेमब्रां की एचिंग

2
अध्याय

ग्राफ़िक कला डिज़ाइन और ग्राफ़िक डिज़ाइन

ग्राफिक कला और डिज़ाइन मानव जाति के इतिहास में गुहाचित्रों (गुफाओं में पाई जाने वाली चित्रकारी) से लेकर आधुनिक युग के चकाचौंध कर देने वाले निऑन साइन विज्ञापनपट्टों तक विभिन्न रूपों में बिखरी पड़ी है। ऐतिहासिक काल में और अपेक्षाकृत हाल में दृश्य संचार के विभिन्न माध्यमों में भी, विज्ञापन कला, ग्राफिक डिज़ाइन और ललित कला के बीच का अंतर बहुत कुछ धुँधला पड़ गया है और कहीं-कहीं तो उनका अलग समझा जाने वाला क्षेत्र परस्पर मिल गया है। सिद्धांत, नियम, पद्धतियाँ और भाषा जैसे अनेक ऐसे तत्व हैं जो इन तीनों कलाओं में समान रूप से पाए जाते हैं। ग्राफिक डिज़ाइन का मूल उद्देश्य सूचना या जानकारी को प्रस्तुत करना, विचारों, भावों और अभिव्यक्तियों को रूप प्रदान करना और मनुष्य के अनुभवों को कलाकृतियों के रूप में प्रस्तुत करना है।

ग्राफ़िक कला

अंग्रेज़ी के ग्राफिक शब्द की व्युत्पत्ति यूनानी (ग्रीक) भाषा के शब्द *ग्राफिकॉस* (graphikos) से हुई है। इसका तात्पर्य है लिखना, रेखाचित्र बनाना (जो शाब्दिक न होकर चित्रमय या प्रतीकात्मक हो) और 'कला' का अर्थ है ऐसा कौशल जो किसी सुन्दर वस्तु या सृजनात्मक कल्पना से उत्पन्न कृति के निर्माण में प्रयुक्त होती है। सामान्य रूप से ग्राफिक कला के क्षेत्र में शुभंकरों (लोगो) के रूपांकन से लेकर पुस्तक मुद्रण तक, प्रतीक के रूपांकन से लेकर कलात्मक छाप बनाने (print making) तक, वाणिज्यिक कलाओं से लेकर ललित कलाओं तक सभी कुछ शामिल हैं। रेखाचित्र, संकेत और प्रतीक भी चाहे वे मुद्रित हों या चित्रित, ग्राफिक कला के शीर्षक के अंतर्गत आते हैं लेकिन इस 'ग्राफिक कला' शब्द का प्रयोग अधिकतर छपाई या मुद्रण संबंधी गतिविधियों के लिए ही किया जाता है।

इतिहास में ग्राफिक डिज़ाइन की जड़ों तक पहुँचना संभव है। मनुष्य हमेशा यह इच्छा करता रहा है कि वह अपने ज्ञान, कुशलताओं और जीवन के अनुभवों को दूसरों के प्रति अभिव्यक्त करे और उन्हें आगे आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रखे। उसकी यही प्रेरक शक्ति विविध रूपों में प्रकट हुई है। मनुष्य ने सबसे पहले शारीरिक संकेतों, मुद्राओं और प्रतीकों के माध्यम से अपने विचारों

© NCERT not to be republished

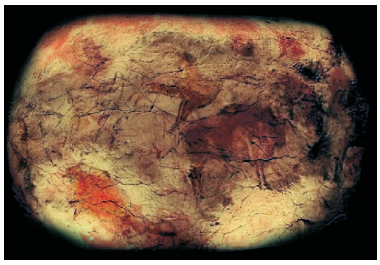

चित्र 2.1 गुहा-चित्र, अल्तामीरा, स्पेन

तथा मनोभावों को अभिव्यक्त करने और दूसरों तक पहुँचाने का प्रयत्न किया। आगे चलकर वह इस कार्य (भावाभिव्यक्ति) के लिए किस्सों-कहानियों आदि के रूप में शब्दों या भाषा का प्रयोग करने लगा, और इसके बाद तो उसने इस प्रयोजन के लिए कुछ दृश्य रूपों को अपना लिया जो गुफाओं में भित्तिचित्रों या शिलाचित्रों और मिट्टी, लकड़ी, धातु, कागज़ और किसी भी अन्य उपलब्ध सामग्री पर की गई चित्रकारी, नक्काशी, संगतराशी, लिखावट आदि के रूप में सुरक्षित हैं।

सन् 1940 में खोजी गई आरेखीय अभिव्यक्तियों को प्रागैतिहासिक कला का सर्वोत्कृष्ट और प्राचीनतम नमूना माना जाता है। उन आकृतियों के बारे में किए गए कार्बन-तिथि निर्धारण से ऐसा प्रतीत होता है कि ये रेखाचित्र 15000 से 17000 वर्ष पहले किसी समय दक्षिण-पश्चिमी फ्रांस के डोरडोन क्षेत्र में मौण्टिनेक के पास की गुफाओं में रचे गए थे। जहाँ तक चित्रलेखीय प्रतिरूपण (pictographic representation) का सवाल है, इनमें सबसे पुराने चित्र लगभग 5000 वर्ष पहले बनाए गए थे और सबसे हाल की लिखित भाषा लगभग 1000 वर्ष पुरानी है। इसी प्रकार यूरोप में, स्पेन के माउंट विस्पियरीज़ की अल्तामीरा गुफाओं में पाए गए गुहाचित्र पुरापाषाण युग के कला-शिल्पों जैसे ही हैं। ये सब ग्राफिक डिज़ाइन और ग्राफिक कला से उत्पन्न अन्य सभी क्षेत्रों के इतिहास में महत्वपूर्ण मील के पत्थर हैं।

चित्र 2.3 भीमबेटका के गुहा चित्र, भारत

भारत में, भोपाल के पास भीमबेटका की 600 से अधिक गुफाओं में ऐसी चित्रकारियाँ हैं जो भारत की प्राचीनतम प्रागैतिहासिक चित्रकारियाँ मानी जाती हैं। भीमबेटका की गुफाएँ यूनेस्को से मान्यताप्राप्त 24 विश्व धरोहरों में सबसे प्राचीन मानी जाती हैं। अति प्राचीन काल में इन गुफाओं को लोगों द्वारा आश्रय के रूप में काम में लाया जाता था। इस प्रकार पुरापाषाण युग से लेकर मध्ययुग तक की सभी कालावधियों में बने चित्र पाए जाते हैं। चित्र समय के साथ-साथ मानवता के विकास को प्रतिबिंबित करते हैं।

ये चित्र अति प्राचीन हैं और इनमें जीव-जन्तुओं को नाना रूपों में सक्रिय या आराम करते हुए बड़ी कुशलता के साथ चित्रित किया गया है। ये चित्रकारियाँ उनके कलाकारों की नक्शानवीसी (draughtsmanship) पैनी नज़र, याददाश्त और चित्रण कौशल को दर्शाते हैं, जिससे ऐसा प्रतीत होता है मानो उन्होंने चित्रण के लिए आवश्यक सामग्रियों की अपर्याप्तता की परिसीमाओं को पार कर दिया था। ये चित्र गुफाओं की ऊबड़-खाबड़ दीवारों पर बनाए गए हैं। उनमें से कुछ चित्रकारियों का अर्थ अभी तक जाना नहीं जा सका है।

क्या ये सृजनात्मक चित्र किसी जादुई शक्ति के प्रतीक हैं जिनके माध्मय से चमत्कार द्वारा उस शक्ति को प्रसन्न करके अनुकूल बनाने का प्रयत्न किया गया था?

क्या जानवरों को चित्रित करके शिकार करने की ताकत पाने की कोशिश की गई थी?

© NCERT not to be republished

अथवा वे आदिकालीन कलाकार थे जिनके पास देने के लिए कोई संदेश नहीं था लेकिन उनमें सृजन की अभिलाषा अवश्य थी?

इन प्रश्नों के उत्तर देना आसान नहीं है लेकिन एक बात निश्चित है कि यह उनके अनुभवों का सबसे पहला प्रलेखन अथवा निरूपण है।

चित्र 2.3 'लॉस कैप्रिकोस,' गोया का ताम्रपट्ट उत्कीर्णन (एक्वाटिन्ट)

विश्व की सभी सभ्यताओं में जीवन के अनुभवों के चित्रण और निरूपण के लिए ग्राफिक पद्धतियों का उपयोग किए जाने का पर्याप्त साक्ष्य मिलता है। किंतु, उन दिनों इसे ग्राफिक डिज़ाइन नहीं कहा जाता था। इतिहास बताता है कि यूरोप में पुनर्जागरण (renaissance) के दौरान और उसके बाद चित्रकला से ग्राफिक डिज़ाइन की उत्पत्ति हुई। प्रारंभ में इसे ग्राफिक कला कहा जाता था। ग्राफिक कलाओं को रेखाचित्रण, चित्रकला, उत्कीर्णन, शिलामुद्रण (lithography), काष्ठकला (wood-cut), छाप कला और मुद्रण प्रक्रिया आदि के रूप में परिभाषित किया जाता था।

सत्रहवीं तथा अठारहवीं शताब्दियों के दौरान उत्कीर्णकों (engrainers) ने अन्य कलाकारों की कृतियों की नकल की। इसके बाद छायाचित्रण (फोटोग्राफी) की तकनीकों ने छाप बनाने (print making) में उत्कीर्णन की प्रक्रिया का स्थान ले लिया। इसके लिए अधिकतर पुनरुत्पादक तकनीकें (reproductive technique) और तत्संबंधी प्रक्रियाएँ अपनाई गईं और इस क्रियाकलाप में सक्रिय कलाकारों तथा शिल्पकारों को ग्राफिक कलाकार कहा गया। अनेक पेशेवर कलाकार, जैसे ड्यूर जो व्यक्ति चित्र उकेरने वाला पहला कलाकार था, और लुकास क्रैनेक ने अपनी कृतियों के पुनरुत्पादन के लिए अम्लांकन (एचिंग) और काष्ठचित्रण का सहारा लिया। रेम्ब्रां ने 300 से भी अधिक प्लेटें तैयार कीं और ग्राफिक कलाओं के इस माध्यम की अभिव्यंजनात्मक संभावनाओं को खोजने का प्रयास किया। उन्नीसवीं शताब्दी में बहुत से प्रभाववादी और उत्तर-प्रभाववादी कलाकारों, जैसे गोया, मैने, डेगा, रेनॉयर, गौगें आदि ने सौंदर्यपरक और अभिव्यंजनात्मक माध्यम के रूप में शिलामुद्रण की प्रक्रिया को नए और मौलिक तरीकों से काम में लिया।

चित्र 2.4 भिन्न-भिन्न डिज़ाइन

आलेखन (डिज़ाइन) क्या है ?

आलेखन (*फ्रेंच-डिजिन; इटालियन-डिजेनो; संस्कृत-कल्प, रचना*)

पुनर्जागरण काल में, डिज़ाइन को इटली में चित्रकला का एक अभिन्न अंग समझा जाता था; तब वहाँ डिज़ाइन विषय की एक सुव्यवस्थित शब्दावली आविष्कृत की गई। पंद्रहवीं शताब्दी के आसपास, कलाशास्त्रियों ने यह पता लगाया कि चित्रकला के चार तत्व होते हैं अर्थात् डिज़ाइन, रंग, संयोजन (composition) और आविष्कार (invention)।

उस काल यानी पंद्रहवीं शताब्दी में, कला समीक्षक डिज़ाइन को दो भागों में बाँटा करते थे : आंतरिक डिज़ाइन (disegno interno) और बाह्य डिज़ाइन (disegno esterno) अपने विस्तृत अर्थ में डिजेनो का मतलब था एक

© NCERT not to be republished

सृजनात्मक विचार जो कलाकार के मन-मस्तिष्क में मौजूद होता था और अक्सर यह सोचा जाता था कि वह विचार प्रारंभिक आरेख (ड्रांइग) या संकल्पनाश्रित

© NCERT not to be republished

चित्र 2.7 एक्वाटिंट माध्यम में ग्राफिक प्रिंट

'डिजाइन करने' का अर्थ है कोई नई चीज़ जैसे नए किस्म का मोबाइल फोन बनाना या कोई अविष्कार करना।

'डिज़ाइन' करने का अर्थ है किसी कार्यक्रम या उत्सव के लिए योजना तैयार करना या उसे योजनाबद्ध और सुव्यवस्थित रीति से संपन्न करने के लिए व्यवस्था करना।

'डिज़ाइन करने' का अर्थ है कोई लक्ष्य या उद्देश्य अथवा अभिप्राय रखना, जैसे कोई ऐसा वाहन डिज़ाइन करना जिससे प्रदूषण नहीं होगा।

'डिज़ाइन करने' का अर्थ है किसी कलात्मक या अत्यंत कुशलतापूर्ण रीति से किसी चीज़ की रचना करना या किसी कार्य का निष्पादन करना जैसे, किसी विज्ञापन के लिए कोई कलाकृति तैयार करना।

इस प्रकार, हम देखते हैं कि संज्ञा या क्रिया के रूप में 'डिज़ाइन' शब्द के भिन्न-भिन्न संदर्भों में अनेक अर्थ या प्रयोग होते हैं। डिज़ाइन शब्द प्रक्रिया और उसके फलस्वरूप उत्पन्न वस्तु दोनों का द्योतक होता है। अब तक आपने यह भलीभांति समझ लिया होगा कि जब किसी संकल्पना की रचना कर ली जाती है और आप किसी विचार को विकसित करने की प्रक्रिया में जुट जाते हैं तो वह क्रिया के रूप में डिज़ाइन का सूचक होता है। जब आप स्वयं सुंदर प्रतिरूप (डिज़ाइन) बनाने लगते हैं तो वह डिज़ाइन का संज्ञा यानी मूर्तरूप होता है और अंत में किसी संकल्पना की एक नई डिज़ाइन भी होती है।

मोटे तौर पर, डिज़ाइन की दो अवस्थाएँ होती हैं। उनमें से पहली अवस्था मानसिक प्रक्रिया की होती है जिसमें कल्पना करना, मन में चित्र बनाना और नई संकल्पनाएँ या विचार उत्पन्न करना शामिल होता है। दूसरी अवस्था उन विचारों को अभिव्यक्त या मूर्तरूप प्रदान करने की होती है, जिसके लिए अभिव्यक्ति और/या संचार के किसी माध्यम का प्रयोग किया जाता है। जब मन-मस्तिष्क में कोई विचार उत्पन्न होता है तो वह अमूर्त रूप में होता है। फिर दूसरी अवस्था में यह किसी रूप में अभिव्यक्त किया जाता है जो देखा या समझा जा सकता है। कोई व्यक्ति संकल्पना का खाका खींच सकता है, उसे किसी कागज़ के टुकड़े पर लिख सकता है, उसे अपने हाव-भाव या शारीरिक संकेतों या मुद्राओं से अभिव्यक्त कर सकता है, इत्यादि। पहली अवस्था को आंतरिक डिज़ाइन यानी मानसिक आकृति या विचार उत्पन्न करने की अवस्था कह सकते हैं और दूसरी अवस्था को बाह्य डिज़ाइन यानी मानसिक आकृति या विचार को भौतिक रूप में अभिव्यक्त करना कहा जाता है। इसलिए, 'डिज़ाइन' की सबसे सरल परिभाषा निम्नलिखित होगी :

डिज़ाइन संकल्पनाओं या विचारों को, जो कुछ हद तक नए होते हैं, उत्पन्न करने और उन्हें अभिव्यक्त या निरूपित करने की एक सोद्देश्य अथवा साभिप्राय गतिविधि होती है। इस गतिविधि की उपज या परिणाम को डिज़ाइन कहा जाता है।

चित्र 2.6 विभिन्न वस्तुओं के रेखाचित्र

ग्राफ़िक डिज़ाइन का परिचय

© NCERT not to be republished

ग्राफिक डिज़ाइन ग्राफिक कलाओं से भिन्न होती है क्योंकि ग्राफिक डिज़ाइन लक्ष्य-प्रधान होती है यानी उसका कोई निश्चित लक्ष्य होता है जबकि ग्राफिक

चित्र 2.7 एक वस्त्र की डिज़ाइन

चित्र 2.8 एक मकान का वास्तुकलात्मक नक्शा

चित्र 2.8 किसी उपभोक्ता के अनुकूल पूरे उपकरण का भी डिज़ाइन किया जा सकता है अथवा उसकी आसानी के लिए उपकरण केवल आरेखीय चित्रों का भी हो सकता है

© NCERT not to be republished

ग्राफ़िक डिज़ाइन – एक कहानी

संचार (प्रस्तुतीकरण) की एक सोद्देश्य गतिविधि है। इसमें विचार उत्पन्न करने के लिए कल्पना एवं मानसदर्शन (visualisation) की प्रक्रिया शामिल होती है और वह इन विचारों तथा भावों को दृश्य भाषा के बुनियादी तत्वों; जैसे – बिंदु, रेखा, रंग, पोत, आकृति, रूप, द्विआयामी तथा त्रिआयामी अंतराल व टाइपफेस आदि का प्रयोग करते हुए दृश्य भाषा के मूल सिद्धांतों; जैसे – संतुलन, लय, अनुपात, सममिति (symmetry), विषमता और समरसता को ध्यान में रखते हुए बोध के माध्यम से अभिव्यक्त करती है।

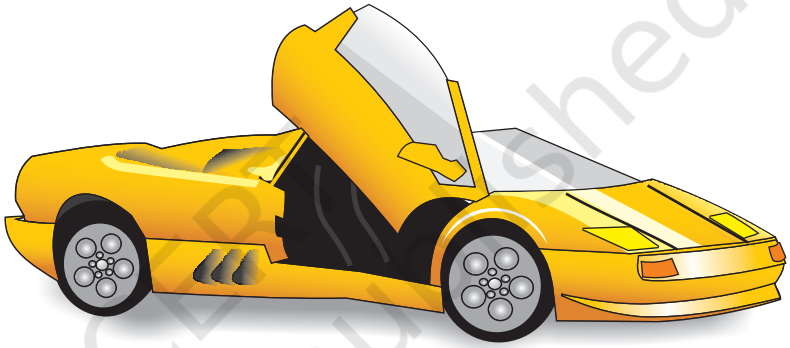

चित्र 2.10 एक आधुनिक मोटरगाड़ी

चित्र 2.11 सौर ऊर्जा चालित वाहन

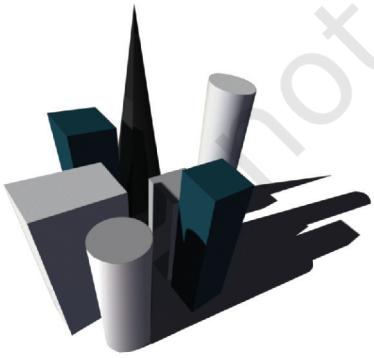

चित्र 2.12 संरचनात्मक डिज़ाइन

© NCERT not to be republished

चित्र 2.13 लेटरहैड डिज़ाइन

चित्र 2.14 लोगो डिज़ाइन

© NCERT not to be republished

© NCERT not to be republished

प्रश्नावली

1. ग्राफिक कला और ग्राफिक डिज़ाइन के बीच क्या अंतर होता है? निजी उदाहरण देते हुए स्पष्ट करें।

2. डिज़ाइन क्या है? ग्राफिक डिज़ाइन के उदाहरणों का प्रयोग करते हुए डिज़ाइन के बारे में डेविड पाइ की संकल्पनाओं का विस्तृत विवेचन करें।

3. अपने शब्दों में 'ग्राफिक डिज़ाइन' की परिभाषा दें।

प्रायोगिक

अपने विद्यालय के किसी उत्सव, वार्षिक समारोह या खेल दिवस के लिए एक निमंत्रणपत्र का डिज़ाइन तैयार करें।

© NCERT not to be republished

3
अध्याय

ग्राफ़िक डिज़ाइन के तत्व और सिद्धांत

ग्राफिक डिज़ाइन का विषय संचार या अभिव्यक्ति के लिए विचारों और संकल्पनाओं का निरूपण या प्रतिरूपण है। इसके लिए दृश्य माध्यमों की आवश्यकता होती है। कोई भी ग्राफिक डिज़ाइन बिंदुओं, रेखाओं, आकृतियों और रंगों की दृश्य भाषा के माध्यम से भावों की अभिव्यक्ति करती है। जब हम किसी कागज़ पर काली स्याही से कुछ लिखते हैं तो हम उसे 'पढ़ते' भी हैं क्योंकि पहले हम उसे देखते हैं और फिर उसका अर्थ समझते हैं। पढ़ना और कुछ नहीं बल्कि प्राथमिक एवं प्रमुख रूप से एक दृश्य प्रत्यक्षण (visual perception) होता है। इसी प्रकार जब हम कोई सुंदर चित्रकारी देखते हैं तो यह भी हमारे लिए एक दृश्य प्रत्यक्षण होता है। दृश्य प्रत्यक्षण के दो बुनियादी घटक होते हैं। पहला, इसके लिए कोई भौतिक माध्यम होना चाहिए, जैसे कि किसी कागज़ की सफेद सतह, काली स्याही या रंग जिनसे बिंदु, रेखाएँ, आकृतियाँ आदि बनाई जा सकती हैं। इस प्रकार की सामग्री को ग्राफिक डिज़ाइन के संदर्भ में 'माध्यम' (medium) कहा जाता है। भौतिक माध्यम दृश्य प्रत्यक्षण का साधन होता है। दूसरा, दृश्य प्रत्यक्षण आँखों के ज़रिये होता है, इसलिए दृश्य प्रत्यक्षण के लिए दृश्य संवेदनशीलता (visual sensitivity) का होना बहुत ज़रूरी है। इस प्रकार, भौतिक माध्यम और दृश्य संवेदनशीलता दोनों ही ग्राफिक डिज़ाइन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

किसी कागज़ पर स्याही से कुछ भी ऊलजलूल घसीट दिया जाए तो उसे लेखन नहीं कहते। इसी प्रकार, कागज़ पर किसी अटकल पच्चू तरीके से रंग लगा दिया जाए तो उसे सुंदर तसवीर नहीं कहा जा सकता। इसलिए, लेखन या चित्रण में एक अनुशासित एवं उचित दृश्य व्यवस्था होनी चाहिए। बिंदु, रेखाएँ, आकृतियाँ, रूप, रंग आदि ग्राफिक डिज़ाइन के बुनियादी तत्व होते हैं, जिनके बिना ग्राफिक डिज़ाइन तैयार करना संभव नहीं होता। इसी प्रकार, इन तत्वों के विन्यास या व्यवस्था के लिए समय के साथ ठीक पाए गए नियम व सिद्धांत हैं, जिनका पालन करने से ये तत्व सुंदर और प्रभावकारी दिखाई देंगे। इन नियमों को दृश्य संयोजन के सिद्धांत कहा जाता है। किसी भी ग्राफिक डिज़ाइनर के लिए यह

© NCERT not to be republished

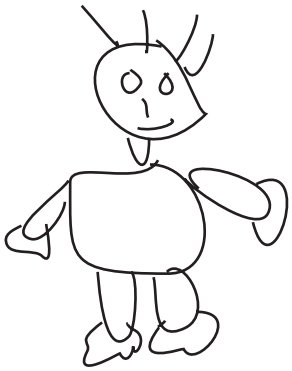

चित्र 3.1 ऊलजलूत रेखांकन

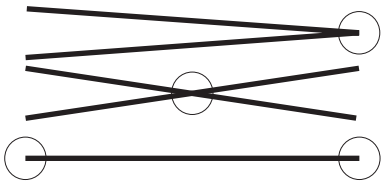

चित्र 3.2 बिंदु

चित्र 3.3 भिन्न-भिन्न मोटाइयों के डॉट यानी मोटे बिंदु

भिन्न-भिन्न मोटाई की क्षैतिज सरल रेखाएँ

ज़रूरी होता है कि वह अपनी डिज़ाइन में आधारभूत तत्वों और संयोजन संबंधी सिद्धांतों की भूमिका को जाने और समझे। ये सब ग्राफिक डिज़ाइन के मूल तत्व हैं। यहाँ आगे इन तत्वों तथा सिद्धांतों पर विस्तार से चर्चा की गई है।

आइए, पहले ग्राफिक डिज़ाइन के तत्वों की चर्चा करें; रचना के सिद्धांतों पर बाद में विचार किया जाएगा।

ग्राफ़िक डिज़ाइन के तत्व

इन तत्वों की तीन मुख्य श्रेणियाँ हैं :

- बुनियादी तत्व
- संबंधात्मक तत्व
- अभिप्रायमूलक तत्व

बुनियादी तत्व

संयोजन के बुनियादी तत्व (basic element) अमूर्त संकल्पनाओं के रूप में होते हैं। वास्तव में उनका कोई मूर्त अस्तित्व नहीं होता। पर वे किसी तसवीर या दृश्य प्रतिरूपण में मौजूद प्रतीत होते हैं।

बिंदु

गणित में, बिंदु (points) की परिभाषा देते हुए यह बताया गया है कि यह एक ऐसा सत्व या आकार (entity) होता है जिसकी लंबाई और चौड़ाई नहीं होती अर्थात् यह एक आयामरहित सत्व होता है। ग्राफिक डिज़ाइन में, बिंदु को एक डॉट (थोड़े मोटे बिंदु) के रूप में प्रस्तुत किया जाता है और यह एक स्थिति का सूचक होता है। यह किसी रेखा का आरंभ या अंत होता है। डॉट यानी इस मोटे बिंदु का एक भौतिक आयाम होता है जो एक अमूर्त संकल्पना जिसे बिंदु कहते हैं, का दृश्य प्रतिरूपण होता है। उदाहरण के लिए, हम यह महसूस करते हैं कि किसी त्रिकोण के किसी भी कोण पर या दो रेखाओं के मिलने के स्थान पर एक छोटा बिंदु होता है। यह डिज़ाइन का एक बुनियादी तत्व है।

किसी मोटे बिंदु यानी डॉट के बारे में एक रोचक धारणा और भी है। जरा सोचिए कि किसी पेड़ पर या आपकी खिड़की के पास कोई चिड़िया बैठी है। आप चिड़िया को स्पष्ट पूरी तरह देख सकते हैं। जब यह वहाँ से उड़ने लगती है और उड़ते हुए आपसे काफी दूर चली जाती है तो उसके अंग–पंख, पंजे, सिर आदि धुंधले दिखाई देने लगते हैं और तब आपको एक उड़ती हुई चिड़िया की सूरत/आकृति ही दिखाई देती है और ज्यों-ज्यों वह आगे दूर उड़ती चली जाती है तो उसकी आकृति भी धुंधली हो जाती है और आप केवल एक डॉट यानी धब्बा-सा देख पाते हैं। ज़रूरी नहीं कि यह डॉट गोलाकार ही हो। यह एक उड़ती हुई चिड़िया जैसा भी हो सकता है, और उसे पहचानना मुश्किल हो जाता है। इस प्रकार हमें यह जान लेना चाहिए कि डॉट किसी भी वांछित आकृति का हो सकता है। आगे हम 'डॉट' के लिए बिंदु शब्द का ही प्रयोग करेंगे।

रेखा

रेखा एक ऐसा एकआयामी सत्व या आकार होती है जिसकी लंबाई तो होती है पर चौड़ाई नहीं। ग्राफिक डिज़ाइन में, इसकी परिभाषा लाक्षणिक रूप में यह की जाती

© NCERT not to be republished

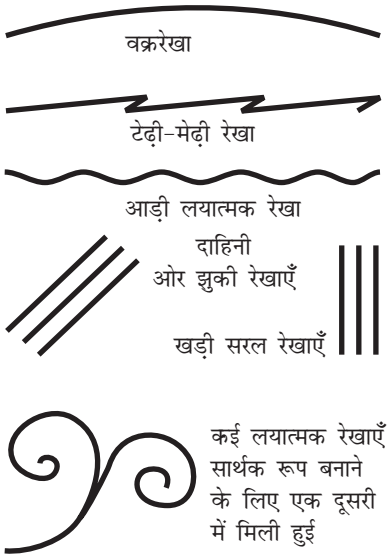

चित्र 3.4 भिन्न-भिन्न विशिष्टताओं वाली रेखाएँ

है कि 'रेखा घूमने के लिए लिया गया एक बिंदु है', यानी रेखा एक गतिमान बिंदु होती है। किंतु, ग्राफिक डिज़ाइन में चित्रित रेखा लंबाई और चौड़ाई भी रखती है। वहाँ रेखा बारीक या मोटी भी हो सकती है। इसकी बारीकी और मोटाई में भी अनेक अंतर हो सकते हैं।

रेखा की बारीकी या मोटाई एक दृश्य प्रभाव डालती है। किसी दृश्य रचना में मोटी रेखा भारी प्रतीत होती है तो बारीक या पतली रेखा हलकी। रेखाएँ कई प्रकार की हो सकती हैं। वे सरल, वक्र, टेढ़ी-मेढ़ी, सज्जात्मक, आलंकारिक, ऊर्ध्व, क्षैतिज, तिरछी, या मुक्त गति दर्शाने वाली हो सकती हैं।

प्रत्येक किस्म की रेखा अलग-अलग दृश्य प्रभाव उत्पन्न करेगी। यदि तरह-तरह की रेखाओं को एक साथ एक समूह में रखा जाए तो उनका दृश्य प्रभाव और भी अधिक होगा।

सरल क्षैतिज रेखाएँ प्रशांतता की भावना उत्पन्न करती हैं। क्षैतिज रेखाएँ स्थिर होती हैं। खड़ी या ऊर्ध्व रेखाएँ गतिशील प्रतीत होती हैं और वे ऊपर की ओर चलने का भाव दर्शाती हैं। झुकी हुई रेखाएँ अस्थिर होती हैं पर जिस संदर्भ में

गति विधि 1

समाचारपत्रों से रेखाओं की आकृतियाँ या तसवीर इकट्ठी करें। इकट्ठी की गई आकृतियों में रेखाओं के स्वरूप तथा प्रभाव का संक्षेप में वर्णन करें।

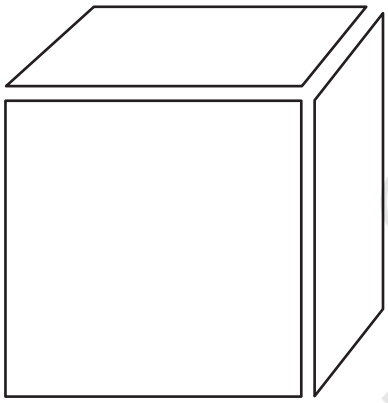

चित्र 3.5 त्रिआयामी वस्तु का दृश्य तल

उनका प्रयोग किया गया हो वे उसके अनुसार वृद्धि या क्षय का भाव दर्शाती हैं। वक्र रेखाएँ तरह-तरह की लयात्मकता का बोध कराती हैं, जबकि टेढ़ी-मेढ़ी रेखाएँ कठोरता का भाव व्यक्त करती हैं। सज्जात्मक और आलंकारिक रेखाएँ भारतीय परंपरा के प्रभाव को दर्शाती हैं। उपर्युक्त सभी मामलों में रेखाओं की मोटाई या बारीकी या तो दृश्य प्रभाव को घटा देती है या बढ़ा देती है।

इसलिए, ग्राफिक डिज़ाइन में रेखा का चित्रण उसकी अमूर्त संकल्पना का ही प्रतिरूपण नहीं होता बल्कि वह भावों, विचारों, संवेगों तथा अभिव्यक्ति का प्रतिरूपण और दृश्य प्रभाव भी होता है।

चित्र 3.6 रंग-संबंधी अंतर के कारण त्रिआयामी अंतराल (खाली जगह)

तल

तल को एक ऐसे सत्व के रूप में परिभाषित किया गया है जिसकी लंबाई और चौड़ाई तो होती है पर गहराई नहीं होती। यह दोआयामी चपटा या समतल होता है।

© NCERT not to be republished

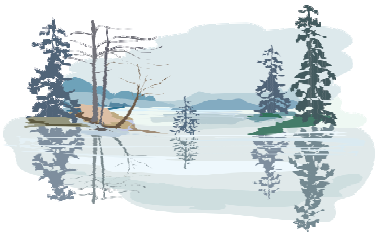

चित्र 3.7 त्रिआयामी अंतराल के दृश्य प्रभाव में पेड़ों के आकार, उनकी परछाई, रंग के गहरेपन या हलकेपन के कारण होने वाला अंतर

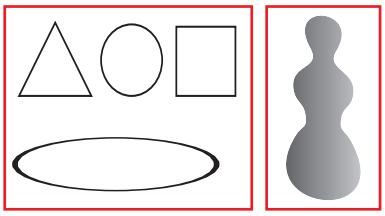

चित्र 3.8 दो और तीन आयामों वाले बुनियादी रूप

अंतराल

अंतराल को अनंत या अपरिमित विस्तार के रूप में परिभाषित किया गया है। इसे त्रिआयामों में बिंदुओं के संग्रह के रूप में भी परिभाषित किया जाता है। किंतु, ग्राफिक डिज़ाइन में इसे किसी रचना में मौजूद दृश्य प्रतिरूपण के रूप में परिभाषित किया जाता है। डिज़ाइन के अन्य तत्वों; जैसे- रेखा, रंग, रूप आदि का प्रयोग करके, दोआयामी सतहों में तीनआयामी सतहों या वर्ग का भ्रम पैदा किया जा सकता है। इसी प्रकार, किसी भौतिक अंतराल और संकल्पनात्मक अंतराल को भी किसी रचना में प्रस्तुत किया जा सकता है।

आकृति

किसी दोआयामी रूप की परिरेखा या सुपरिभाषित रूपरेखा को आकृति कहा जाता है। त्रिआयामी रूप के मामले में, आकृति किसी रूप का ढाँचा होगी। मनुष्यों, प्राकृतिक वस्तुओं या मानव-निर्मित चीज़ों के रूपात्मक रेखाचित्रों में प्रारंभ में आकृति यानी रूपरेखाएँ ही चित्रित की जाती हैं।

रूप

किसी व्यक्ति या पशु के शरीर, पेड़, पत्ते या वस्तु की किसी भी आकृति, रूपरेखा या संरचना को रूप कहते हैं। रूप को दो तरह से परिभाषित किया जाता है। ग्राफिक डिज़ाइन में, रूप को दृश्य रचना का एक बुनियादी तत्व माना जाता है। इसके अलावा, यह भी समझा जाता है कि संपूर्ण 'दृश्य संयोजन' एक रूप होती है। संयोजन के बुनियादी तत्व के तौर पर, रूप संयोजन की ऐसी आकृति होती है जो 'सार्थक' हो यानी जिसका कोई अर्थ या प्रयोजन हो।

आकृति केवल एक रूपरेखा (outline) होती है लेकिन जब उस रूपरेखा को किसी रंग, पोत आदि से भर दिया जाता है तो वह 'अर्थपूर्ण' हो जाती है और वह त्रिआयामी होने का भ्रम भी पैदा करने लगती है। ऐसी स्थिति में, आकृति 'रूप' बन जाती है। रूप भी दृश्य संरचना में उसकी स्थिति के कारण या किसी संयोजन में उसके स्थान के कारण महत्वपूर्ण बन जाता है। इसी प्रकार, एक रूप

चित्र 3.9 त्रिआयामी रूप

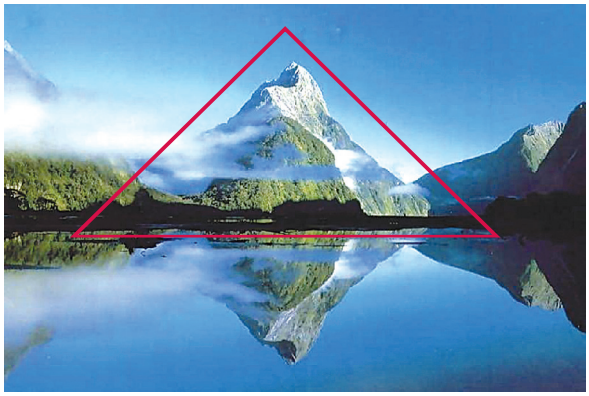

चित्र 3.10 रूप, एक रचना के संपूर्ण संयोजन को एक रूप माना जाता है, साथ ही, लाल रंग वाले त्रिभुज के भीतर के पहाड़ को भी एक अलग रूप माना जाता है।

© NCERT not to be republished

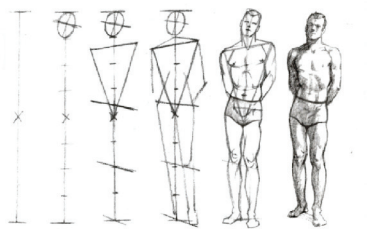

चित्र 3.11 बुनियादी रूप को भी एक बुनियादी संरचना (ढाँचा) माना जाता है, जैसा कि ऊपर दी गई आकृतियों में रेखाओं की सहायता से दिखाया गया है।

किसी संयोजन में अन्य बुनियादी तत्वों; जैसे – बिंदुओं, रेखाओं, रंग और अन्य रूपों के साथ अपने संबंधों के कारण 'अर्थपूर्ण' बन जाता है।

जब किसी संयोजन का समग्र दृश्य प्रभाव 'सार्थक या अर्थपूर्ण' होता है तो उस संपूर्ण रचना को 'रूप' माना जाता है। इस स्थिति में, समग्र प्रभाव सम्पूर्ण बुनियादी तत्वों का और उस रचना में उन तत्वों के विन्यास का संचित परिणाम होता है। साथ ही, यह संपूर्ण संयोजन के साथ उसके प्रत्येक भाग के संबंधों को भी दर्शाता है। चाहे रूप को एक बुनियादी तत्व माना जाए या संपूर्ण रचना, दोनों ही स्थितियों में 'रूप' सार्थक बन जाता है क्योंकि यह दर्शकों के मन में भाव या संवेग उत्पन्न करने के लिए एक मनोवैज्ञानिक प्रभाव उत्पन्न करता है। इसके अलावा भी, कोई रूप प्रभाव पैदा कर सकता है, यदि उसमें कुछ खास खूबियाँ हों। ऐसे मामलों में दर्शकगण आसानी से रूप को पहचान जाते हैं और काफी लंबे समय तक उसे याद रखते हैं।

चित्र 3.12 अनियमित विषय रूप वाली पत्ती

ग्राफिक डिज़ाइन में, लिखित पाठ्यसामग्री को भी, जो कि अक्षरों या वर्णों के रूप में होती है, रूप माना जाता है। किसी भी भाषा में, उसके प्रत्येक शब्द या वाक्य का एक अर्थ तो होता ही है, लेकिन उसके अलावा किसी दृश्य संयोजन में, उसमें प्रयुक्त शब्द या वाक्य को भी एक अलग दृश्य रूप माना जाता है। आप किसी शब्द या वाक्य से अधिकतम प्रभाव तभी प्राप्त कर सकते हैं जब किसी रचना में उनका भाषायी अर्थ और दृश्य व्यवहार एक-दूसरे का पूरक हो।

रंग

चित्र 3.13 रंगों के उपयुक्त मेल, रंगत, चमक, या छाया पाने के लिए उन्हें एक प्लेट में डालकर ब्रुश से मिलाया जाता है।

रंग दृश्य प्रत्यक्षण का एक बुनियादी और सारभूत गुण है और इसलिए यह ग्राफिक डिज़ाइन का सर्वाधिक प्रभावकारी तत्व होता है। क्या आप ऐसे विश्व की कल्पना कर सकते हैं जो केवल काले, सफेद और धूसर रंगों से बना हो? भौतिक विज्ञान, मनोविज्ञान, सांस्कृतिक अध्ययन और ज्ञान के अनेक विषयों या शास्त्रों में रंग का अध्ययन-अध्यापन किया जाता है। ललित कलाओं और ग्राफिक डिज़ाइन में, रंग का अध्ययन उसके दृश्य गुणधर्मों; जैसे – वर्ण (hue), चमक और मान (value) आदि को समझने के लिए किया जाता है।

धूसर पैमाना

धूसर पैमाना (grey scale) सफेद, काली और अन्य विभिन्न रंगतों की एक निर्धारित व्यवस्था है जो काले और सफेद रंगों को भिन्न-भिन्न अनुपातों में मिलाकर उत्पन्न की जाती है। जब काले और सफेद रंग को समान अनुपात में मिलाया जाता है तो उससे बनने वाली तान (tone) को धूसर या मध्यम धूसर कहा जाता है। यदि सफेद रंग की मात्रा अधिक और काले की कम हो तो परिणामी 'तान' या हलका धूसर (tint) कहलाएगी। यदि सफेद की मात्रा कम और काले की मात्रा ज़्यादा मिलाई जाए तो परिणामी तान को गहरा धूसर (shade) कहा जाएगा।

चित्र 3.14 धूसर रंग पैमाना

रंगत

रंगत (hue) का एक विशिष्ट गुण होता है जिससे रंग-विशेष की पहचान की जाती है। इस गुणवत्ता के कारण, आँखें एक रंग को दूसरे रंग से अलग करके पहचानती हैं। 'लाल' रंग को लाल इसलिए कहा जाता है क्योंकि आँखें रंग की

© NCERT not to be republished

चित्र 3.15 रंग की रंगत

चित्र 3.16 रंग मान

चित्र 3.17 रंग दीप्ति

'लालिमा' कही जाने वाली गुणवत्ता को पहचानती हैं। यह बात अन्य रंगों पर भी लागू होती है।

मान

धूसर पैमाने के संदर्भ में किसी वर्ण की रंगत के सापेक्षिक गहरेपन या हलकेपन को 'मान' (value) कहा जाता है। उदाहरण के तौर पर, नीले रंग के हलके मान को धूसर पैमाने के साथ तुलना करके चित्र में दिखाया गया है।

चमक/दीप्ति

दीप्ति (Luminosity) किसी रंग की रंगत के चमकीलेपन या ताज़गी को दर्शाने वाला गुण है। जब किसी रंग की रंगत शुद्ध होती है तो यह सबसे अधिक चमकदार होता है। जब किसी रंग की रंगत किसी दूसरे रंग यानी काले या सफेद रंग की रंगत के साथ मिला दी जाती है तो वह अपनी शुद्धता और चमक खो देती है। ग्राफिक डिज़ाइनर हमेशा किसी रंग की रंगत को सुरक्षित रखने की कोशिश करते हैं। जब आप भिन्न-भिन्न रंगतों को बार-बार मिलाते जाएँगे तो अंत में रंग एकदम मंदा या चमकरहित हो जाएगा। चित्र 3.17 में देखिए; आयत में दिया गया हरा रंग बाईं ओर सबसे ज़्यादा चमकदार है और वह ज्यों-ज्यों दाहिनी ओर के नीले रंग में अधिकाधिक मिलता जाता है, उसकी चमक कम होती जाती है।

बुनावट या पोत

दृश्य पोत (visual texture) किसी सतह की विशेषता होती है जो किसी दृश्य रचना में स्पर्श की अनुभूति उत्पन्न करती है। कई बार डिज़ाइनर अपनी डिज़ाइन में स्पर्शग्राह्य अनुभूति होने का भ्रम पैदा कर देते हैं। इसे नकली या कल्पित पोत कहा जाता है। डिज़ाइनर लोग कल्पित और वास्तविक अथवा दोनों किस्म को पोत का सहारा लेते हैं। जब हम किसी पत्थर या पेड़ की छाल पर अपनी उँगलियाँ चलाते हैं तो हमें स्पर्श की अनुभूति होती है। वह वस्तु छूने पर चिकनी या खुरदुरी महसूस होती है और कई बार तो उस स्पर्श की अनुभूति को शब्दों में व्यक्त करना बहुत कठिन होता है। डिज़ाइनर अपनी कृति में ऐसी स्पर्शानुभूति उत्पन्न करने के लिए किसी सतह पर रंगों और अन्य उपलब्ध सामग्रियों का प्रयोग करते हैं। डिज़ाइनर ऐसा ही प्रभाव या स्पर्शानुभूति से भ्रम उत्पन्न करने के लिए केवल रंगों का ही प्रयोग करते हैं। ऐसी अनुभूति या भ्रम उत्पन्न करने में सफल होने पर लोगों द्वारा डिज़ाइनर की कुशलता की प्रशंसा की जाती है। पोत विशिष्ट अनुभूति और भाव उत्पन्न करने और उसे बढ़ाने में भी सहायक होती है।

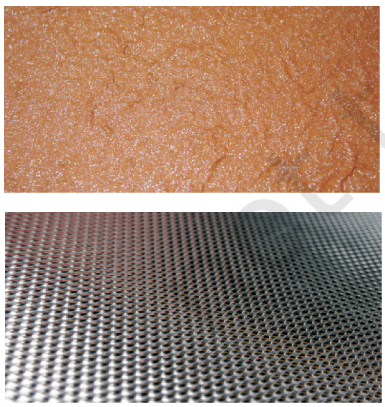

चित्र 3.18 विभिन्न प्रकार के पोत

संबंधात्मक तत्व

इस वर्ग में आने वाले तत्व किसी दृश्य संयोजन में बिंदु, रेखा और रूप जैसे आधारभूत तत्वों के स्थापन और उनके अंतरसंबंधों को अनुशासित करते हैं। इन तत्वों का ध्यान रखने से रचना के दृश्य प्रभाव में वृद्धि होती है।

© NCERT not to be republished

गतिविधि 2

सफेद कागज़ पर अपने आसपास पाई जाने वाली पोत या बुनावटों की छाप लें। ऐसा करने के लिए सबसे पहले अपने आसपास मौजूद किसी सतह को चुनें, फिर उसे एक कागज़ से ढकें, और फिर एक रंगीन पेंसिल से कागज़ के ऊपर आहिस्ता से खरोंचें और उस सतह की छाप अपने कागज़ पर उतारने की कोशिश करें। फिर, ऐसी ही कम-से-कम बीस छापें इकट्ठी करें और उनसे एक रचना तैयार करें। प्रत्येक छाप का आकार कम-से-कम 2×3 cm होना चाहिए और संपूर्ण रचना का आकार 10×15 cm होना चाहिए।

गतिविधि 3

अनेक ऐसी सामग्रियाँ इकट्ठी करें जिनकी सतहों की बुनावट अलग-अलग किस्म की हो और फिर उन्हें मिलाकर एक रचना तैयार करें। रचना का आकार 10×15 cm होना चाहिए।

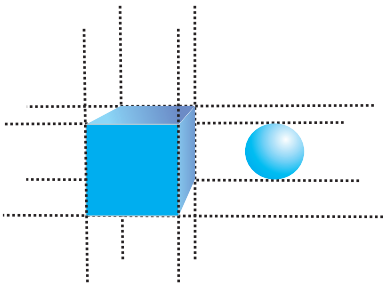

चित्र 3.19 संबंधात्मक तत्त्व

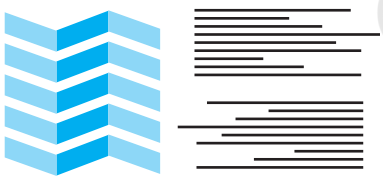

चित्र 3.20 संरेखित आकृति

संरेखण

जब किसी संयोजन में एक समूह के तत्वों को ऊर्ध्वाधर या क्षैतिज रूप में इस प्रकार दर्शाया या व्यवस्थित किया जाए कि वे सब एक ही रेखा में आएँ, तब इस व्यवस्था को संरेखण (alignment) कहा जाता है। तत्वों को तिरछे रूप में भी रखा जा सकता है।

दिशा

दिशा ग्राफिक डिज़ाइन के बुनियादी तत्वों की एक व्यवस्था है जो संयोजन में विभिन्न तत्वों को संगठित एवं सुव्यवस्थित करने में सहायक होती है। यह व्यवस्था समानांतर या कोणीय हो सकती है। दिशा का बोध हमेशा दर्शक, रचना के चौखटे (frame) और तत्संबंधी अन्य प्रमुख रूपों के संदर्भ में किया जाता है।

दृष्टि- आकर्षण

यह ग्राफिक तत्वों की एक ऐसी व्यवस्था है जो दर्शकों की दृष्टि को संयोजन में वांछित रीति से आगे बढ़ने में सहायता देती है या मार्ग दिखाती है। यह दरअसल दर्शकों को प्रत्याशित दिशा में आगे बढ़ने के लिए बाध्य करती है। उपर्युक्त दिशासूचक तत्व एक विशिष्ट आकर्षण उत्पन्न करते हैं जो नज़रों को आगे धकेलता है। इसे चाक्षुष या दृष्टि संवेग (visual momentum) भी कहा जाता है।

आकृति और भूमि

किसी संयोजन में दृश्य तत्व रिक्त स्थान या अन्तराल को भरते हैं। मुख्य आकृतियों या दृश्य तत्वों द्वारा भरा गया अंतराल सकारात्मक अंतराल (positive space) कहलाता है और शेष अंतराल नकारात्मक अंतराल (negative space) होता है।

© NCERT not to be republished

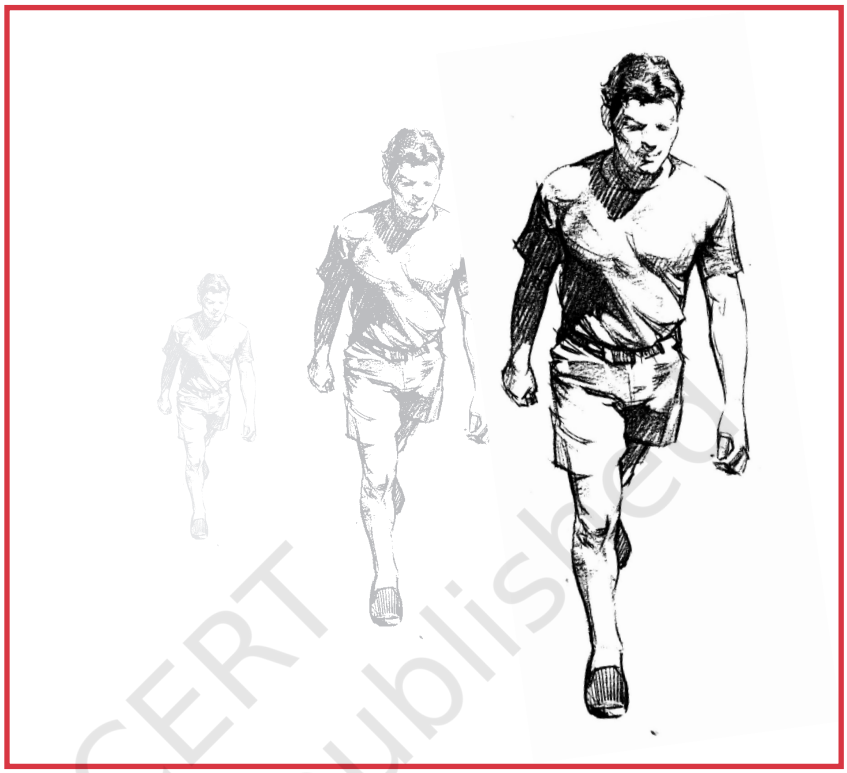

चित्र 3.21 नकारात्मक और सकारात्मक अंतराल। यहाँ दी गई आकृतियाँ सकारात्मक अंतराल को भरती हैं जबकि सफेद पृष्ठभूमि को नकारात्मक अंतराल माना जाता है।

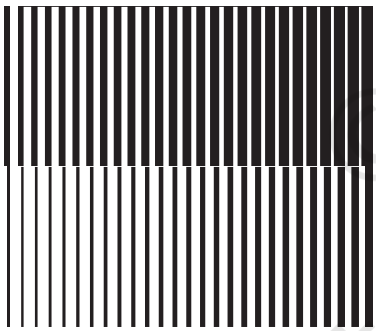

चित्र 3.22 रेखाओं की भिन्न-भिन्न मोटाई द्वारा रचित दृश्य गुरुत्व

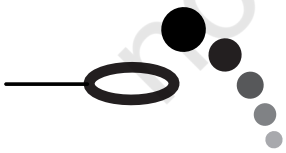

चित्र 3.23 किसी संयोजन में रूप एक सार्थक तत्व होता है।

दृश्य गुरुत्व

हममें से सभी लोग पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति यानी उसके गुरुत्व (gravity) को महसूस करते हैं और उसके साथ भारीपन या हलकेपन का संबंध जोड़ते हैं। इस प्रकार गुरुत्व का भाव हमारे मन में स्थित होता है। दृश्य संयोजन के संदर्भ में हम गुरुत्व के भाव को दृश्य भारीपन या हलकेपन, स्थिरता या अस्थिरता के रूप में अलग-अलग तत्वों या तत्वों के समूह पर आरोपित करते हैं। इसलिए, संयोजन के निचले भाग में स्थित बड़ी आकृतियाँ भारी प्रतीत होती हैं और ऊपरी भाग में स्थित छोटी आकृतियाँ हलकी प्रतीत होती हैं। दृश्य गुरुत्व को दृश्य भार (visual weight) भी कहते हैं।

अभिप्रायमूलक तत्व

सभी डिज़ाइनों का कोई-न-कोई प्रयोजन या अभिप्राय अवश्य होता है। ग्राफिक कृतियाँ लक्ष्यगत दर्शकों पर असर करती हैं। उदाहरण के लिए, किसी समाचारपत्र में दिया गया कोई विज्ञापन सूचना ही नहीं देता बल्कि उपयुक्त ग्राफिकों के कारण एक प्रभाव भी डालता है। यह कार्य अभिप्रायमूलक तत्वों (International elements) के उचित प्रयोग से संभव हो जाता है। अभिप्रायमूलक तत्व तीन तरह के होते हैं : सौंदर्य, विषयवस्तु और कार्य।

सौंदर्य

जब प्रकृति से प्रसूत कोई संकल्पना या विचार बिंदु, रेखा, रंग, पोत, आकृति आदि

© NCERT not to be republished

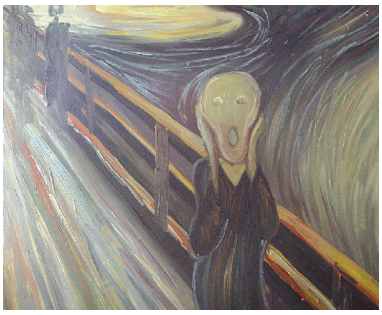

चित्र 3.24 'दि स्क्रीम' एडवार्ड मूंक 1893, नेशनल गैलरी, ओसलो। इस रचना में दी गई आकृतियाँ रेलिंग की दिशा का अनुसरण करते हुए सरेखित की गई हैं और संपूर्ण चित्रकारी एक दृष्टि-क्षेप उत्पन्न करती है। इसके अलावा, सभी रेखाएँ चित्रकारी में अभिव्यक्त मनोभावों को सहारा देने के लिए एक दृष्टि-क्षेप उत्पन्न करती हैं।

का प्रयोग करके अभिव्यक्त किया जाता है तो उसे प्रतिरूपण कहते हैं। किसी संकल्पना या प्राकृतिक रूपों का प्रतिरूपण सज्जात्मक तथा आलंकारिक होता है। यदि प्रतिरूपण में अनावश्यक ब्योरों को छोड़ दिया जाए और प्रतिरूपण कम-से-कम हो तब उसे अमूर्त प्रतिरूपण (abstract representation) कहा जाता है। सभी शैलियाँ अपना विशेष दृश्य और विषयगत प्रभाव उत्पन्न करती हैं।

गतिविधि 4

समाचारपत्रों और पत्रिकाओं से आकृतियाँ या तस्वीरें इकट्ठी करें और सौंदर्यपरक शैलियों के अनुसार उनका वर्गीकरण करें।

विषय वस्तु

किसी डिज़ाइन के संदेश या प्रसंग को विषयवस्तु कहा जाता है। ये प्रसंग ऐतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, पारिस्थितिक या वैज्ञानिक आदि हो सकते है।

गतिविधि 5

समाचारपत्रों और पत्रिकाओं से आकृतियाँ या तसवीरें इकट्ठी करें और विषयवस्तु की श्रेणियों के अनुसार उनका वर्गीकरण करें।

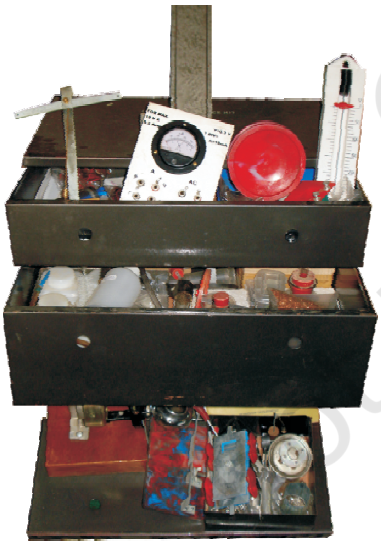

चित्र 3.25 कक्षा में प्रयोग करने वाले औज़ारों और अन्य सामग्री को रखने के लिए यह विज्ञान किट तैयार की गई है।

कार्य

डिज़ाइन का प्रयोजन या अनुप्रयोग प्रतिफल देना है। उदाहरण के लिए, डिज़ाइन सूचना प्रदान करने वाली हो सकती है, अर्थात् यह किसी वस्तु के बारे में जागरूकता पैदा कर सकती है अथवा कोई जानकारी दे सकती है। डिज़ाइन अभिव्यंजक हो सकती है, यानी विचारों या मनोभावों को अभिव्यक्त करने के लिए इसका उपयोग किया जा सकता है। कभी-कभी किसी यंत्र, मशीन या किट, जैसे विज्ञान किट आदि के संचालन के संबंध में आवश्यक हिदायतें देने के लिए भी डिज़ाइन का इस्तेमाल किया जाता है। किसी पाठ्यपुस्तक, अनुदेशात्मक नियम पुस्तक, शैक्षिक सीडी-रोम आदि का डिज़ाइन तैयार करने के लिए भी ग्राफिक डिज़ाइन को काम में लाया जा सकता है, अथवा शिक्षण उपकरण के रूप में भी इसका उपयोग किया जा सकता है। ऐसे सभी मामलों में ग्राफिक डिज़ाइन का काम अनुदेशात्मक या शिक्षणात्मक होता है। विज्ञापनों में कई बार ग्राफिक डिज़ाइन प्रभावोत्पादन के लिए भी प्रयुक्त होती है। जैसा कि ऊपर बताया गया है, ग्राफिक डिज़ाइन का कोई एक विशेष कार्य नहीं होता, बल्कि इसे कई प्रयोजनों के लिए उपयोग में लाया जा सकता है। ऐसे विज्ञापनों में प्रभावोत्पादन करना ग्राफिक डिज़ाइन का उपयोगी कार्य होता है।

© NCERT not to be republished

ग्राफ़िक डिज़ाइन के सिद्धांत

ग्राफिक डिज़ाइन के अनेक सिद्धांत हैं जिन्हें विकसित होने में काफी समय लगा है। इन सिद्धांतों को समझना और उन्हें व्यावहारिक प्रयोग में लाना एक विविधतापूर्ण कार्य होता है जो डिज़ाइनर की अभिवृत्ति एवं उसके समग्र दृष्टिकोण पर निर्भर करता है। इन सिद्धांतों का प्रयोग अनेक क्षेत्रों, जैसे ग्राफिक डिज़ाइन, औद्योगिक डिज़ाइन, ललित कलाओं और स्थापत्य या वास्तुकला के क्षेत्र में होता है। इन्हें पेशे की ज़रूरत के अनुसार समझा और उसका अर्थ निकाला जाता है। तथापि, उनके स्वरूप और उपयोगिता के बारे में सभी क्षेत्रों/शास्त्रों में कार्यरत डिज़ाइनरों में एक विशेष प्रकार का मतैक्य पाया जाता है। इन सिद्धांतों की कुछ परिभाषाएँ सभी क्षेत्रों में स्वीकार की जाती हैं। काफी हद तक यह माना जाता है कि ये सिद्धांत सामान्य किस्म के हैं जो डिज़ाइन की संवेदनशीलता से संबंधित होते हैं, और डिज़ाइनर लोग उनका प्रयोग डिज़ाइन के बुनियादी तत्वों को सुव्यवस्थित और संगठित करने के लिए करते हैं जिससे कि समग्र रचना आकर्षक एवं प्रभावोत्पादक दिखाई दे। सिद्धांत डिज़ाइन के बुनियादी तत्वों और विभिन्न घटकों के बीच के संबंध को अनुशासित करते हैं। ये सिद्धांत डिज़ाइन के घटकों के सौंदर्यपरक विन्यास के विषय में हैं। इसके अलावा, ये सिद्धांत यह भी बताते हैं कि समग्र डिज़ाइन के साथ उसके अलग-अलग हिस्सों का क्या संबंध होता है या होना चाहिए। यदि इन सिद्धांतों का सफलतापूर्वक प्रयोग किया जाए तो उससे डिज़ाइनर को अपने ग्राफिक संयोजन का उद्देश्य तथा दृश्य लक्ष्य प्राप्त करने में सहायता मिलेगी।

दृश्य संतुलन

किसी भी कलात्मक या डिज़ाइन संबंधी कृति में रूप यानी समग्र संरचना और अलग-अलग घटकों के साथ उसका संबंध, उसकी उपयुक्तता एवं एकता का ध्यान रखना बहुत आवश्यक होता है क्योंकि इनका ध्यान रखने से ही डिज़ाइन या कलाकृति की सुंदरता बनती और बढ़ती है। प्रत्येक कलाकृति या डिज़ाइन में उन बुनियादी तत्वों की एकरूपता होनी चाहिए जिनका कलाकार या डिज़ाइनर ने चित्रण किया है। डिज़ाइन का सौंदर्य या लालित्य उसकी एक ऐसी अभिव्यक्ति या गुण होता है जो डिज़ाइन के सिद्धांतों; जैसे – संतुलन, एकता, सुसंगतता और लयात्मकता के साथ विविधता के सुचारु कार्यान्वयन आदि से उत्पन्न होता है।

संतुलन

मनुष्य हमेशा अपनी रोजमर्रा की ज़िंदगी में जैसे साइकिल की सवारी में, संतुलन का अनुभव करता है। इसका प्रयोग गुरुत्वाकर्षण को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। ग्राफिक डिज़ाइनर अपनी रचना या डिज़ाइन में विभिन्न घटकों के दृश्य भार या दृश्य गुरुत्व का नियंत्रण करने के लिए इसी सिद्धांत का प्रयोग करते हैं। संतुलन का सिद्धांत डिज़ाइन को दृश्य स्थिरता प्रदान करता है। संतुलन तीन प्रकार का होता है: अरीय संतुलन, सममित या रूपात्मक संतुलन और असममित या अरूपात्मक संतुलन।

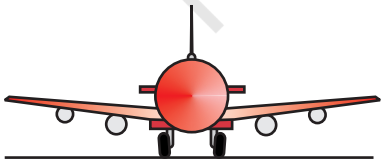

चित्र 3.26 वायुयान एक संतुलित रूप होता है

© NCERT not to be republished

अरीय संतुलन

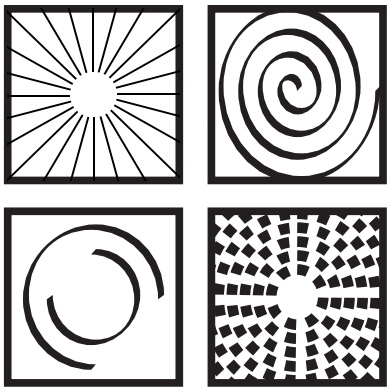

चित्र 3.27 अरीय संतुलन को दर्शाने वाले रूप

त्रिज्यात्मक या अरीय संतुलन (radial balance) में, दृश्य अक्ष बहुत हो सकते हैं और उन सभी अक्षों को एक ही बिंदु पर आकर मिलना चाहिए। कई बार ऐसा भी होता है कि अक्षों का यह सम्मिलन बिंदु संयोजन के केंद्र में नहीं होता। ऐसी स्थिति की संभावना का अध्ययन करना दिलचस्प होता है। इस प्रकार केंद्रबिंदु रचना में कहीं भी हो सकता है। थोड़े अधिक अभ्यास से आप इस स्थिति को भलीभांति समझ जाएँगे। अरीय संतुलन विकिरक दृश्य प्रभाव (radial visual effect) उत्पन्न करता है। अधिकांश फूलों में अरीय सममिति (radial symmetry) पाई जाती है।

गतिविधि 6

भिन्न-भिन्न फूलों की अरीय सममिति का अध्ययन और विश्लेषण करें।

सममित या रूपात्मक संतुलन

यह सर्वाधिक सामान्य संतुलन होता है और हम सभी इससे परिचित हैं। इस संतुलन को प्राप्त करने के लिए डिज़ाइनर लोग ग्राफिक तत्वों को संयोजन के एक हिस्से में रखते हैं फिर उसके शेष भाग में उसका प्रतिबिंब दिखाते हैं। आप संयोजन को ऊर्ध्वाधर, क्षैतिज और विकर्ण रूप में विभाजित कर सकते हैं। विभाजन की रेखा को दृश्य अक्ष (visual axis) कहते हैं। अधिक अच्छा यही होगा कि सममित संतुलन (symmetrical balance) में एक ही अक्ष हो। अरीय संतुलन और सममित संतुलन के बीच मुख्य अंतर यही होता है कि सममित संतुलन को एक ही दृश्य अक्ष की ज़रूरत होती है जबकि अरीय संतुलन के लिए बहुत-से अक्ष होने

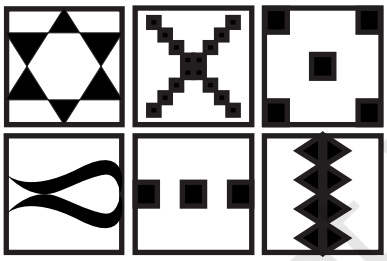

चित्र 3.28 रूपात्मक/सममित संतुलन

चित्र 3.29 आगरा का ताजमहल सममित संतुलित डिज़ाइन का एक उत्कृष्ट वास्तुकलात्मक उदाहरण है

© NCERT not to be republished

चाहिए, और उन सभी अक्षों का एक सम्मिलन बिंदु भी होना चाहिए। अरीय संतुलन एक तरह से सममित संतुलन का ही एक उन्नत और जटिल रूप होता है। सममित संतुलन और अरीय संतुलन दोनों ही दृश्य रूप में आकर्षक होते हैं और सभी सभ्यताओं में व्यापक रूप से प्रयोग में लाए जाते हैं। किंतु एक खास सीमा के बाद उसका पूर्वानुमान लगया जा सकता है और अपनी रोचकता खो बैठते हैं। बहुत-से लोग उन्हें पसंद नहीं करते। इसलिए, डिज़ाइनर लोग बड़ी सावधानी से सोच-समझकर ही उनका प्रयोग करते हैं।

असममित या अरूपात्मक संतुलन

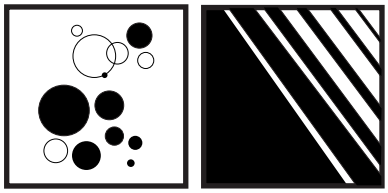

चित्र 3.30 असममित या अरूपात्मक संतुलन

अरूपात्मक संतुलन (asymmetrical or informal balance) तब प्राप्त होता है जब संयोजन के तत्व दृश्य अक्ष के साथ-साथ और/या आर-पार व्यवस्थित नहीं किए जाते। दूसरी ओर, अरूपात्मक संतुलन संपूर्ण संयोजन पर फैलाए गए सभी बुनियादी तत्वों के दृश्य भार के रूप में ही प्राप्त किया जाता है। इसे प्राप्त करने के लिए आपको संयोजन के किसी दृश्य अक्ष की कल्पना करनी होगी और फिर एक-एक कर सभी बुनियादी तत्वों को इस प्रकार व्यवस्थित करना होगा कि वे एक-दूसरे के प्रतिबिंब या आवृत्ति प्रतीत न हों। उदाहरण के लिए, यदि आप संयोजन में किसी एक स्थान पर एक बड़ा रूप रखें तब संयोजन का दूसरा भाग असममित संतुलन पैदा करेगा, क्योंकि हो सकता है कि बहुत-से तत्व अपेक्षाकृत छोटे आकार के हों लेकिन उनका दृश्य-भार बराबर हो। आप किसी संयोजन में दृश्य तत्वों को रखने की यह प्रक्रिया तब तक जारी रख सकते हैं जब तक कि आप उसके समग्र दृश्य संतुलन के बारे में संतुष्ट न हो जाएँ। अरूपात्मक संतुलन प्राप्त करने के लिए अभ्यास और गहरी समझ की ज़रूरत होती है। किंतु, ऐसा करना कठिन काम नहीं है क्योंकि मनुष्य में, संतुलन खोजने की प्रवृत्ति स्वाभाविक रूप से पाई जाती है और इसीलिए डिज़ाइनर लोग अपनी रचनाओं में अरूपात्मक संतुलन प्राप्त करने के लिए अपनी दृश्य संवेदनशीलता तथा अंतर्ज्ञान यानी सहज बुद्धि का सहारा लेते हैं।

लय

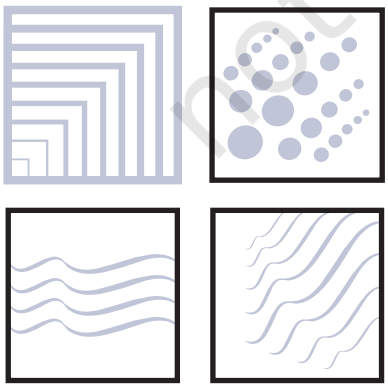

जब किसी संयोजन में कोई बुनियादी तत्व या मूलभाव दर्शकों की दृष्टि को शनैः शनैः सुरुचिसंपन्नता के साथ, संयोजन के एक भाग से अन्य भागों की ओर ले जाने के लिए, कुछ अंतर के साथ दोहराया जाता है तो इसे दृश्यात्मक लय कहते हैं। यदि कोई एक मूलभाव बार-बार दोहराया जाता है तो वह लय तो पैदा करेगा पर ऐसी लयबद्धता से नीरसता भी उत्पन्न होगी। लेकिन, मूलभाव को दोहराते समय यदि प्रत्येक परिवर्तन के साथ, अभिविन्यास

© NCERT not to be republished

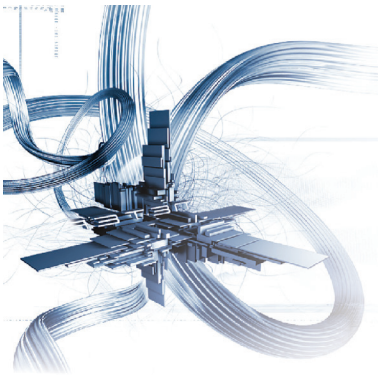

चित्र 3.31 लयात्मक रूप बिंदुओं और वक्र रेखाओं को बार-बार दोहराकर बनाए जाते हैं

(orientation), आकार, रंग या मूलभाव के किसी भी अन्य गुणधर्म की दृष्टि से थोड़ा-सा परिवर्तन होता हो तो परिणामी लय में कोई नीरसता नहीं आएगी। लय के रोचक प्रतिरूप को प्राप्त करने के लिए बुनियादी तत्वों और संबंधात्मक तत्वों को भलीभाँति संगठित एवं सुव्यवस्थित किया जा सकता है। किसी रचना में दृश्यक्रम लय (visual order) लय उत्पन्न कर सकता है।

अनुपात

अनुपात किसी संयोजन के विभिन्न घटकों में या उनके बीच, तथा किसी एक घटक या घटक समूह और संयोजन के समग्र 'रूप' के बीच पाए जाने वाले आपेक्षिक अनुपात को कहते हैं। अनुपात को एक गणितीय सूत्र के रूप में

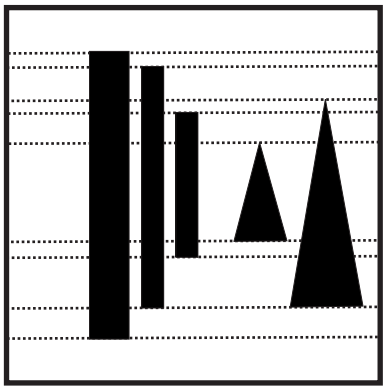

चित्र 3.32 मानव शरीर बचपन से जवानी तक समानुपातिक रूप से बढ़ता है। अन्य अंगों और संपूर्ण शरीर के साथ शरीर के प्रत्येक भाग का आपेक्षिक समानुपात बदलता जाता है

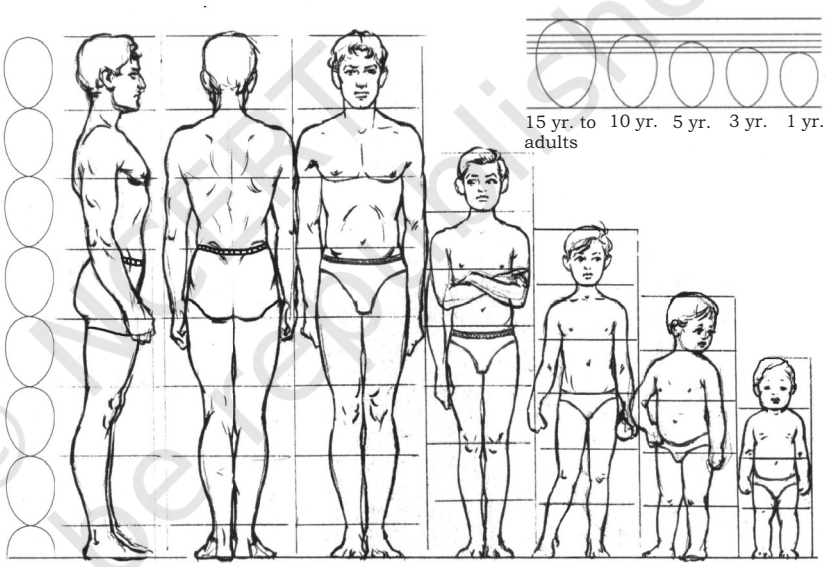

अभिव्यक्त किया जा सकता है; किंतु दृश्य संयोजन में, समानुपात दृश्य भार, आकार, दृश्य आकर्षण और घटकों के अन्य दृश्य संबंधात्मक गुणधर्मों की दृष्टि से पाया जाने वाला आपेक्षिक अनुपात होता है। कला और डिज़ाइन के क्षेत्र में कुछ सुस्थापित अनुपात स्वीकार किए गए हैं। 'स्वर्णिम माध्य' या 'स्वर्णिम अनुपात' (golden ratio) जो फिबोनाच्ची सीरीज़ (Fibonacci series) पर आधारित होता है। यदि किसी आयत की दो भुजाओं के बीच 1:1.618 का अनुपात हो तो उस आयत को स्वर्णिम आयत कहा जाता है। लीओनार्दो द विंची की सुप्रसिद्ध चित्रकारी 'लास्ट सपर' (अंतिम रात्रिभोज) में स्वर्णिम अनुपात का पालन किया गया है। ऐसे बहुत-से अनुपात सुविख्यात हैं और उनके फलस्वरूप दृश्य संयोजन रोचक बन जाता है। उदाहरण के लिए, निम्नलिखित में से कुछ अनुपातों के प्रयोग से रचनाएँ दिलचस्प बन सकती हैं : 1:1, 1:2, 2:3, 3:4, 4:5, 5:6

© NCERT not to be republished

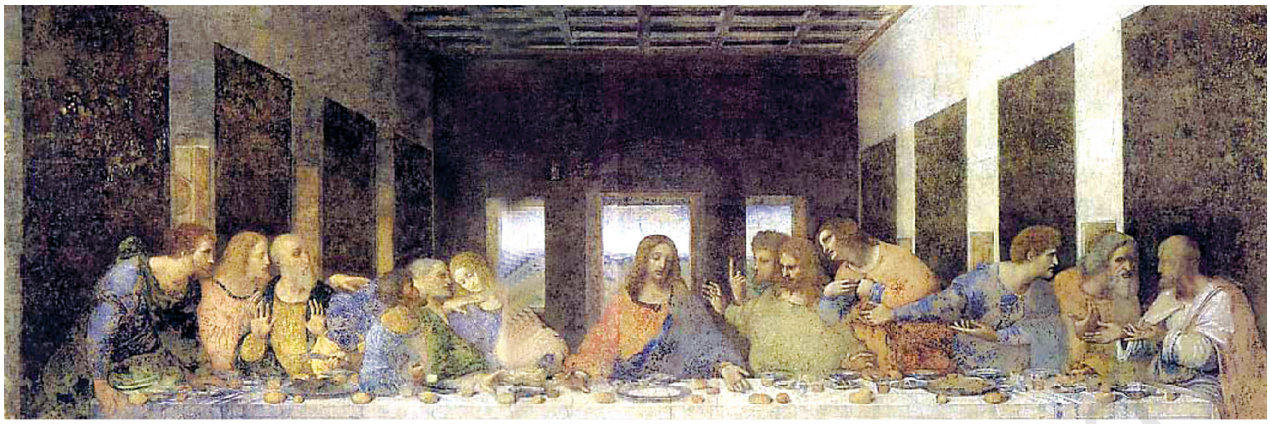

चित्र 3.33 लीओनार्दो द विंची की चित्रकारी 'लास्ट सपर' दृश्य रचना तथा आवयविक एकता (organic unity) के सभी तत्वों एवं सिद्धांतों का एक आदर्श उदाहरण है। मौलिक चित्रकारी में स्वर्णिम अनुपात का पालन किया गया है।

इसकी ऊँचाई और चौड़ाई का आपेक्षिक अनुपात 1:1, 6:8 है। चित्रकारी में दिखाया गया है कि ईसामसीह का चेहरा आकर्षण का केंद्र है। सभी मानव आकृतियाँ या तो उनको देख रही हैं अथवा उनके शरीर की क्रियाएँ उनके चेहरे की ओर निर्दिष्ट हैं। पृष्ठभूमि का सम्पूर्ण वास्तु-शिल्प भी मानो उनकी उपस्थिति को सुशोभित करने के लिए ही बना है। खिड़की के बीच से दृष्टिगोचर होता हुआ हलके रंग का आकाश उनके सिर के इर्द-गिर्द प्रभामंडल का आभास दे रहा है। हलका आकाश और आंतरिक भाग के गहरे रंग परस्पर अधिकतम वैषम्य उत्पन्न कर रहे हैं। इन सब विशेषताओं के कारण एक दृष्टि-आकर्षण उत्पन्न हो रहा है जिसके कारण हमारी आँखें दूर हट कर भी बार-बार उनके चेहरे पर आ टिकती हैं।

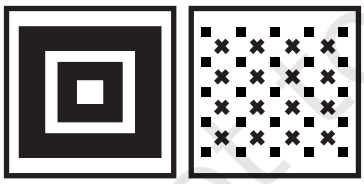

चित्र 3.34 दृश्य समरसता

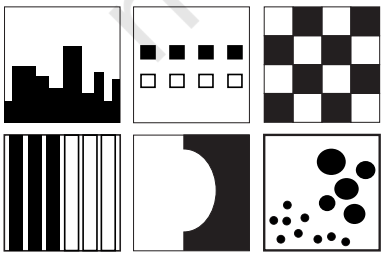

चित्र 3.35 दृश्य वैषम्य

समरसता

जब किसी रचना में दो या अधिक घटकों के बीच अनुरूपता या सामंजस्य पाया जाए तो उनका सम्मिलित रूप समरसता कहलाता है। यदि घटकों के बीच पूर्ण सामंजस्य तो न हो पर उनमें कोई अनुपात पाया जाए तो उसे समानुपातिक सामंजस्य कहते हैं। ऊपर कई रंग-योजनाओं पर चर्चा की गई है, वे समानुपातिक रंग समरसता के अच्छे उदाहरण हैं। समरसता रंग, रूप, आकार, आकृति आदि की भी हो सकती है। समरसता के सिद्धांत का यदि कुशलतापूर्वक पालन किया जाए तो उससे आनंददायक दृश्य प्रभाव उत्पन्न हो सकता है।

वैषम्य

जब किसी रचना के दो या अधिक घटक किसी गुण-धर्म के रूप में एक विरोधी दृश्य उत्पन्न करें तो उसके परिणामी प्रभाव को वैषम्य कहा जाता है। यह वैषम्य रंग, मान, आकार आदि में हो सकता है। वैषम्य समानुपातिक भी हो सकता है। उदाहरण के लिए, यदि सफेद और काला रंग एक साथ आएँ तो वे मान की दृष्टि से सर्वाधिक विपरीत दृश्य प्रभाव उत्पन्न करेंगे। धूसर पैमाने पर तान की दृष्टि से सफेद का सर्वोच्च मान (value) होता है और काले का सबसे कम। लेकिन, अगर धूसर और काले को पास-पास रखा जाए तो उनमें वैषम्य की मात्रा मध्यम होगी। धूसर पैमाने पर पास वाले किन्हीं दो धूसर मानों को एक साथ रखा जाए तो उनमें वैषम्य कम होगा। इस प्रकार, समानुपातिक वैषम्य की तीन श्रेणियाँ हो सकती हैं : उच्च, मध्यम और निम्न। यदि आप रंग-चक्र (colour wheel) पर दृष्टिपात करें तो कोई दो रंग जो रंग-चक्र पर आमने-सामने होंगे, उच्च रंग वैषम्य उत्पन्न करेंगे। इसलिए हमारे पास विषम रंगों के मानक जोड़े हैं; जैसे – पीला-बैंगनी, नारंगी-नीला और लाल-हरा। रंग-चक्र पर पास-पास दर्शाए गए कोई दो रंग निम्न कोटि का रंग वैषम्य उत्पन्न करेंगे। त्रिकों (triads) पर कोई दो रंग मध्यम श्रेणी का

© NCERT not to be republished

गतिविधि 7

रंग भी मान-वैषम्य उत्पन्न करता है। अब, रंग-चक्र से कोई दो रंग चुनें और यह पता लगाएँ कि उनमें मान-वैषम्य किस कोटि का है, यानी उच्च, निम्न या मध्यम कोटि का।

गतिविधि 8

रेखाओं की चौड़ाई या उनके व्यंजनात्मक स्वरूप की दृष्टि से उनमें उच्च, निम्न और मध्यम वैषम्य की विभिन्न संभावनाओं का पता लगाएँ।

रंग वैषम्य उत्पन्न करेंगे। वैषम्य कई तरह का हो सकता है; जैसे – मान-वैषम्य, रंग-वैषम्य, आकृति-वैषम्य, आकार-वैषम्य, रेखा-वैषम्य, आदि-आदि।

आकर्षण/रुचि केंद्र

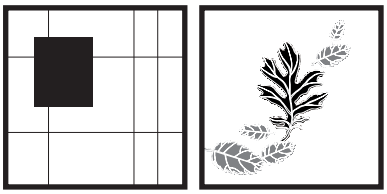

चित्र 3.36 दृश्य संयोजन में आकर्षण का केंद्र

कोई घटक या घटक-समूह इस प्रकार रखे जाते हैं कि वे दर्शकों के ध्यान को अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं। दृश्य संयोजन में सदैव कोई-न-कोई आकर्षण या रुचि का केंद्र होना चाहिए। ऐसा आकर्षण केंद्र वैषम्य के सिद्धांत के कुशलतापूर्ण प्रयोग से प्राप्त किया जा सकता है। इसके अलावा, यह किसी रचना में कतिपय तत्वों पर सोच-समझकर दिए गए बल के माध्यम से अथवा किसी रचना में अन्य तत्वों की उपेक्षा करके प्राप्त किया जाता है। आकर्षण का केंद्र तैयार करने का एक तरीका और भी है जिसके अंतर्गत किसी रचना में किसी एक तत्व या घटक को बाकी सभी घटकों से अलग रखा या दिखाया जाता है। अलग-थलग दिखाया गया घटक निश्चित रूप से दर्शक का ध्यान आकर्षित करेगा।

अवयवी एकता

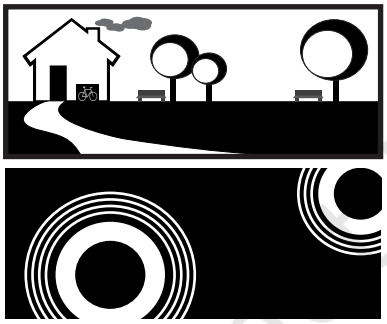

चित्र 3.37 विभिन्न रूपों में अवयवी एकता

अवयवी एकता संयोजन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण सिद्धांत है। यह किसी संयोजन की ऐसी गुणवत्ता होती है जो इसे देखने में पूर्णता प्रदान करती है। ऐसी किसी रचना में न तो आप कोई अतिरिक्त तत्व जोड़ सकते हैं और न ही आप किसी तत्व को हटा सकते हैं। यह किसी रचना में दृश्यात्मक पूर्णता प्राप्त करने की स्थिति है। प्रकृति से इसका एक उदाहरण लें; यदि किसी पेड़ की कोई शाखा काट दी जाए तो उसे देखकर आप हमेशा यह महसूस करेंगे कि पेड़ से कोई चीज़ गायब हो गई है क्योंकि उसकी शाखा काट देने से पेड़ की अवयवी एकता अस्त-व्यस्त हो जाती है। किसी दृश्य रचना में, अवयवी एकता तत्वों के अनुकूल, उपयुक्त और कुशलतापूर्ण प्रयोग और संयोजन के सिद्धांतों का भलीभांति पालन करने से ही प्राप्त की जा सकती है।

abcdefghijklmnopq
rstuvwxyz

© NCERT not to be republished

गतिविधि 9

प्रकृति का अवलोकन करें और यह पता लगाएँ कि डिज़ाइन या संयोजन के सिद्धांत कैसे अभिव्यक्त होते हैं और वे अवयवी एकता को प्राप्त करने में किस प्रकार योगदान देते हैं। समाचारपत्रों या अन्य किसी भी उपलब्ध स्रोत से प्राकृतिक वस्तुओं के चित्र और छायाचित्र एकत्रित करें और संतुलन, लय, समानुपात, वैषम्य, समरसता, आकर्षण का केंद्र के सिद्धांतों की उपस्थिति पहचानें और तदनुसार अपनी सामग्रियों का वर्गीकरण करें। संक्षेप में यह बताएँ कि चित्र या छायाचित्र में कोई सिद्धांत-विशेष किस प्रकार दिखाई दे रहा है।

चित्र 3.38 रंग-चक्र, एक या दो द्वितीयक और/या तृतीयक रंगों को प्राथमिक रंगों के साथ मिलाकर एक नया रंग प्राप्त किया जाता है।

© NCERT not to be republished

गतिविधि 10

पेंसिल की सहायता से 10cm व 5cm का एक आयत खींचें। कंपास का इस्तेमाल करते हुए, आयत के भीतर किसी भी आकार का एक वृत्त खींचें (यह वृत्त आयत के केंद्र में नहीं होना चाहिए)। फिर भिन्न-भिन्न आकारों के चार अन्य आयत या वर्ग खींचें। ये आयत या वर्ग एक-दूसरे को तथा वृत्त को भी अतिव्याप्त कर सकते हैं। अब भिन्न-भिन्न आकार के तीन त्रिभुज इस प्रकार खींचें कि कुल मिलाकर संपूर्ण रचना अच्छी दिखाई दे। ये त्रिभुज आपस में एक-दूसरे को और वृत्त तथा आयतों को भी अतिव्याप्त कर सकते हैं। अब आपके सामने जो रचना बनी है, उसके कई भाग हैं। अब इस रचना को अनुरेखित (trace) करें और उसकी कम से कम दस प्रतियाँ तैयार करें। अब उपर्युक्त रंग-योजना का प्रयोग करते हुए इन रचनाओं में रंग भरें।

प्रश्नावली

1. ग्राफिक डिज़ाइन के तत्वों और ग्राफिक डिज़ाइन के सिद्धांतों में क्या अंतर है? अपने निजी उदाहरण देते हुए स्पष्ट करें।
2. अपने निजी उदाहरण देते हुए, संतुलनों के विभिन्न प्रकारों को स्पष्ट करें।
3. अवयवी एकता क्या होती है?

प्रायोगिक

1. एक कंपास लें और उसकी सहायता से एक सफेद कागज़ के बीच में एक वृत्त खींचें। अब कागज़ को ऊर्ध्वाधर रूप में और फिर क्षैतिज रूप में तहों में मोड़ें। फिर इसे खोलें। मोड़े गए कागज़ की ऊर्ध्वाधर और क्षैतिज रेखाएँ वृत्त के लिए सममिति के अक्ष का काम करती हैं। इस प्रकार वृत्त चार भागों में बँट जाता है। इनमें से एक भाग में पेंसिल से कोई आकृति खींचें; अच्छा यह होगा कि यह आकृति वृत्त के केंद्र और दोनों अक्षों को स्पर्श करे। अब इस आकृति को वृत्त के सबसे नज़दीकी चतुर्थांश में अनुरेखित करें (अध्यापक महोदय अनुरेखण की प्रक्रिया को समझा सकते हैं), ताकि वह एक प्रतिबिंबित आकृति (mirror image) की तरह दिखाई दे। अब आपके पास ड्राइंग (रेखाचित्र) बना हुआ आधा वृत्त है। इस चित्र को आप वृत्त के शेष आधे भाग में अनुरेखित करें। इस प्रकार आपने अरीय सममिति की रचना कर ली है। आप इस प्रयोग का आठ या सोलह मोड़ों पर अभ्यास कर सकते हैं। इस अभ्यास को तीन, छह, पाँच या चाहे जितने मोड़ों पर दोहराना अधिक दिलचस्प होगा।
2. उन्नीस भागों वाला एक धूसर पैमाना बनाएँ।
3. किसी भी एक रंग के लिए एक ऐसा मान पैमाना बनाएँ जो आपके धूसर पैमाने के साथ मेल खाता हो।
4. एक चौबीस रंगों वाला रंग-चक्र बनाएँ जैसा कि चित्र 3.38 में दिखाया गया है।

© NCERT not to be republished

ग्राफ़िक डिज़ाइ

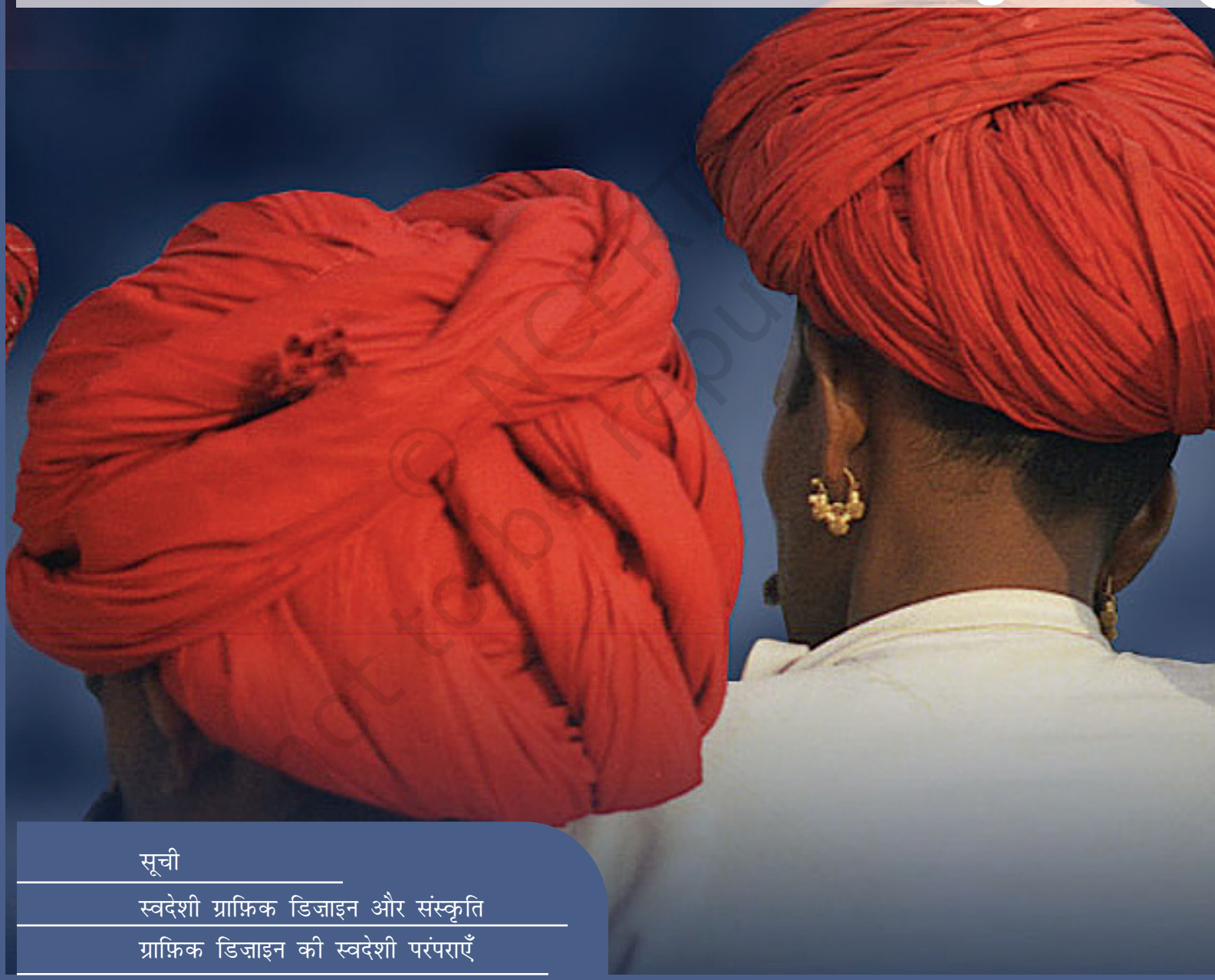

सूची

स्वदेशी ग्राफ़िक डिज़ाइन और संस्कृति

ग्राफ़िक डिज़ाइन की स्वदेशी परंपराएँ

© NCERT not to be republished

इकाई II

ग्राफ़िक डिज़ाइन और समाज

भारत में अतिप्राचीन काल से ही, विश्व के साथ मानव के संबंधों को अभिव्यक्त करने और उसके संबंध में अपने आंतरिक भावों एवं विचारों को प्रकट करने के लिए संकेतों के रूप में एक अत्यंत सरल एवं अर्थपूर्ण भाषा का प्रयोग किया जाता रहा है। इस प्रकार की भावाभिव्यक्ति में सक्षम इन विभिन्न डिज़ाइनों, संकेतों की क्षमता को ऐसे विभिन्न प्रतीकों में देखा जा सकता है जो हमारी रोज़मर्रा की ज़िंदगी में ही नहीं बल्कि राजनीतिक, धार्मिक और सामान्य गतिविधियों में भी देखने को मिलते हैं। ये प्रतीक **रंगोली, कोलम, अल्पना, मेंहदी** या अन्य किसी भी रूप में हो सकते हैं और इनकी जड़ें निश्चित रूप से हमारे समाज में गहराई तक फैली हुई हैं।

© NCERT not to be republished

© NCERT not to be republished

4
अध्याय

स्वदेशी ग्राफ़िक डिज़ाइन और संस्कृति

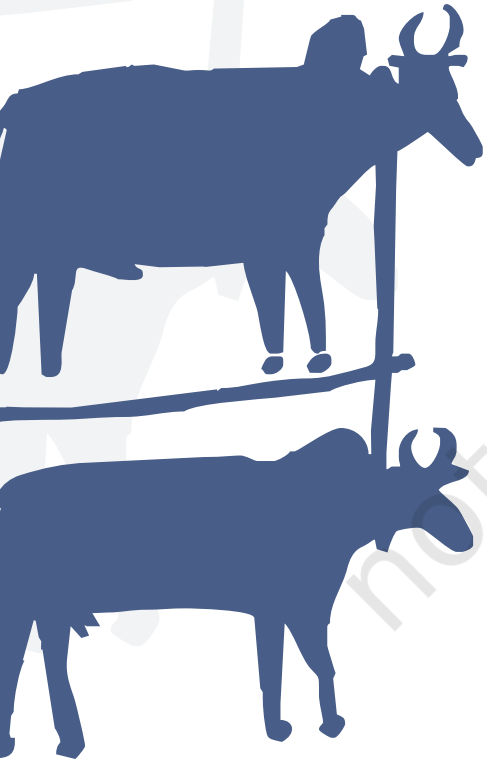

'स्वदेशी' (indigenous) शब्द का सामान्य अर्थ है 'किसी खास क्षेत्र या पर्यावरण अथवा परिवेश में उत्पन्न हुआ या उत्पन्न किया जा रहा'। इसलिए इस अर्थ में किसी भी जातीय (ethnic) समूह या समुदाय और उनकी कलात्मक तथा सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों एवं पद्धतियों को किसी क्षेत्र या स्थान विशेष के संदर्भ में स्वदेशी (देशी) कहा जा सकता है।

भारतीय संदर्भ में 'डिज़ाइन' का अर्थ देने वाले शब्दों का प्रयोग सर्वप्रथम वैदिक साहित्य में किया गया है। वैदिक सूक्तों में सर्वदा यह माना गया है कि संपूर्ण ब्रह्माण्ड की रचना एक पूर्व-निर्धारित योजना के अनुसार की गई है। ऋग्वेद के दसवें मंडल (अध्याय) में 'अघमर्षणम्' नामक एक सूक्त है। इस सूक्त का विषय सृष्टि की रचना है जिसमें यह बताया गया है कि विश्व की रचना किस क्रमिक प्रक्रिया के अंतर्गत हुई। सूक्त में कहा गया है कि विश्व की रचना पूर्व-निर्धारित योजना के अनुसार ही की गई थी। इस सूक्त में डिज़ाइन की प्रक्रिया को व्यक्त करने के लिए 'कल्प' शब्द का प्रयोग किया गया है। 'कल्प' संस्कृत भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है कल्पना-प्रसूत रचना या योजना। इसी प्रकार ब्रह्मसूत्र (एक दर्शनशास्त्रीय ग्रंथ जो वैदिक ज्ञान का सार प्रस्तुत करता है) के दूसरे अध्याय में यह कहा गया है कि विश्व की रचना भी एक पूर्व-निर्धारित रूप है। इस संदर्भ में ब्रह्मसूत्र में 'रचना' शब्द का प्रयोग किया गया है जिसका अर्थ है कि विश्व की भी एक डिज़ाइन, संयोजन या संरचना है। इसके अलावा ब्रह्मसूत्र के अध्याय 221 में यह भी कहा गया है कि चूँकि विश्व एक पूर्व-निर्धारित योजना यानी डिज़ाइन के अनुसार ही बना है, इसलिए डिज़ाइन का बनाने वाला भी कोई होना चाहिए। इस प्रकार यह संकेत दिया गया है कि इस विश्व यानी डिज़ाइन का कोई डिज़ाइनर भी होना चाहिए, अर्थात् सृष्टि का कोई सृष्टिकर्ता भी अवश्य है। अत: यह कहा जा सकता है कि 'कल्प' और 'रचना' दो ऐसे शब्द हैं जिनसे डिज़ाइन या कल्पना-प्रसूत रचना अथवा संगठित ढाँचा बनाने की गतिविधि का बोध होता है। डिज़ाइन की वैदिक संकल्पना के अतिरिक्त, हमें आगे चलकर ललित कलाओं तथा वास्तुकला, स्थापत्यकला विषयक अनेक ग्रंथों में और अन्य श्रेण्य या प्राचीन साहित्य में भी डिज़ाइन तथा

© NCERT not to be republished

चित्र 4.1 विशेष प्रकार की जनजातीय पगड़ी और चित्रित चेहरा जनजातीय व्यक्ति की पहचान तथा प्रतिष्ठा का सूचक है

चित्र 4.2 पगड़ी क्षेत्र-विशेष के पहनावे की सूचक होती है

चित्र 4.3 मेंहदी की डिज़ाइन

तत्संबंधी कलात्मक गतिविधियों पर चर्चा मिलती है। इन ग्रंथों में कलात्मक और स्थापत्य संबंधी डिज़ाइन की पद्धतियों के बारे में नियमों तथा विधियों आदि का विधान किया गया है। ये डिज़ाइन के सैद्धांतिक आधार होते हैं, जिनका कलाकार को पालन करना होता है। भारत में डिज़ाइन बनाना अनेक समुदायों के पेशे का अभिन्न अंग होता है। जो समुदाय कला या शिल्प की चीज़ें, लकड़ी का काम, जेवर-गहने, धातु, पत्थर, मिट्टी के बर्तन, कपड़े, खिलौने, चित्र, स्थापत्य आदि बनाने का पेशा करते थे, उनमें परंपरागत रूप से डिज़ाइन तैयार करने की कुशलता होती थी और वह पीढ़ी-दर-पीढ़ी विरासत में मिलती रहती थी।

स्वदेशी डिज़ाइन की पद्धतियाँ ज्ञान-विज्ञान या जिज्ञासा के विस्तृत क्षेत्र से जुड़ी हैं। यह क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है और इसमें विभिन्न प्रकार की कार्यात्मक, धार्मिक, सामाजिक तथा संचार संबंधी गतिविधियों से संबंधित जटिल साज-सज्जाओं और अलंकरणों से लेकर विभिन्न प्रकार के धार्मिक प्रतीक-यंत्र, भित्ति-चित्र, स्त्रियों द्वारा फर्श पर बनाई जाने वाली अल्पना व कोलम, शरीर पर गोदवाये जाने वाले टैटू (गोदना), हाथों-पैरों पर रचाई जाने वाली मेंहदी और सिर पर पहनी जाने वाली विभिन्न प्रकार की पगड़ियों आदि से संबंधित डिज़ाइन शामिल हैं। इन अभिव्यक्तियों का उपयोग रूपात्मक विशेषताओं के साथ, विभिन्न प्रकार की धार्मिक तथा धर्मनिरपेक्ष आवश्यकताओं के अनुसार किसी विशेष संदर्भ या परिवेश में किया जाता है।

भारत जैसे देश में जहाँ विभिन्न प्रकार की सामाजिक-सांस्कृतिक परंपराएँ और रूढ़ियाँ एवं रीति-रिवाज प्रचलित हैं, डिज़ाइन के रूप स्थान और जातीय समूहों की विशेषताओं के अनुसार बदलते रहते हैं। इस प्रकार भिन्न-भिन्न वर्गों की वेश-भूषा, रहन-सहन तथा रीति-रिवाज भिन्न-भिन्न और अपनी विशिष्टता लिए हुए होते हैं। जैसा कि स्पष्ट है, स्वदेशी डिज़ाइन की पद्धतियाँ भी भिन्न-भिन्न कार्य रूपों, जैसे धार्मिक और सामाजिक रीति-रिवाजों में भिन्न-भिन्न किस्म की होती हैं। ऐसा होना स्वाभाविक भी है क्योंकि तत्संबंधी धार्मिक तथा धर्मनिरपेक्ष उपयोगिता की आवश्यकताएँ भी भिन्न-भिन्न होती हैं। उदाहरण के लिए, राजस्थान में पगड़ी पहनने की शैली हर 15 किलोमीटर पर बदलती रहती है।

इस प्रकार, सामाजिक और धार्मिक जीवन ने भारत में विभिन्न क्षेत्रों के डिज़ाइन रूपों को प्रभावित किया है। इन डिज़ाइन रूपों का कई तरह से वर्गीकरण किया जा सकता है। इनमें से वर्गीकरण का एक तरीका है कर्मकांडीय और उपयोगितावादी।

कर्मकांडीय

गोदना (tatoo) और मेंहदी की डिज़ाइनें कर्मकांडीय स्वदेशी ग्राफिक डिज़ाइनों के सर्वोत्तम उदाहरण हैं जो प्राचीन काल से आज तक चली आ रही हैं। ये डिज़ाइनें कुछ विश्वासों तथा धार्मिक पद्धतियों के साथ जुड़ी हुई सामाजिक क्रियाओं में प्रयुक्त होती हैं। स्वदेशी डिज़ाइनें सतही अलंकरण तथा सजावटी तरीके, जैसे कि दीवारों या वस्तुओं पर अंकित किए जाने वाले रेखाचित्रों के रूप में भी पाई जाती हैं। आभूषणों और पगड़ियों आदि के विभिन्न रूप भी इसी श्रेणी में आते हैं। हम प्राय: देखते हैं कि लड़कियाँ शादी-विवाह और तीज-त्योहारों के

© NCERT not to be republished

चित्र 4.4 शरीर को सजाने वाला गोदना (टैटू)

टैटू शरीर पर बनाया जाने वाला एक स्थायी निशान या छाप होता है। कई बार ऐसा भी होता है कि टैटू वाला व्यक्ति अपने शरीर से उस टैटू के निशान को मिटाना चाहता है लेकिन उसे हटाने की प्रक्रिया बहुत मंहगी और तकलीफदेह होती है। कुछ मामलों में तो हटाने की कोशिश किए जाने के बाद भी टैटू पूरी तरह नहीं हटते, उनका कुछ अंश शेष रह जाता है या उनका धब्बा स्थायी रूप से बना रहता है।

चित्र 4.5 दीपक रखने के लिए दीवार में बना हुआ आला या दीपघर

अवसरों पर मेंहदी से अपने हाथ-पैरों को सजाती हैं। यह केवल सजावट के लिए ही नहीं लगाई जाती बल्कि इसके कई सौंदर्यशास्त्रीय उद्देश्य भी होते हैं।

मेंहदी शारीरिक कला का एक अल्पकालीन या अस्थायी रूप है जो एक पौधे की पत्तियों को पीसकर या उनके पाउडर को पानी में मिलाकर तैयार किए गए गाढ़े घोल (paste) से बनाया जाता है। यह पौधा ज्यादातर मध्य एशिया क्षेत्र और एशिया-प्रशांतमहासागरीय क्षेत्रों में पाया जाता है जहाँ का मौसम गर्म और सूखा होता है। मेंहदी के पौधे की पत्तियों को सुखाकर और बारीक पीसकर पाउडर जैसा बना लिया जाता है। फिर उस पाउडर में उचित मात्रा में पानी, यूकलिप्टस का तेल, चाय, काफी और चूना मिलाकर मिश्रण बनाया जाता है और फिर उस पेस्ट से हाथ-पैरों पर तरह-तरह के सुन्दर डिज़ाइन बनाए जाते हैं। कुछ ही समय बाद जब मेंहदी रच जाती है तो उसे पानी से धोकर उतार दिया जाता है। मेंहदी उसके औषधीय गुणों के कारण भी परंपरागत रूप से इस्तेमाल की जाती रही है। भारत में इसका प्रयोग इसलिए लोकप्रिय हुआ क्योंकि यहाँ की तपती हुई गर्मी में इसका लेप ठंडक पहुँचाता था। भारत में आज भी धार्मिक रीति-रिवाजों और उत्सवों पर मेंहदी लगाई जाती है। मुख्य रूप से स्त्रियाँ ही मेंहदी रचाती हैं। मेंहदी डिज़ाइन की सुंदर टेढ़ी-मेढ़ी रेखाएँ तथा बेल-बूटे इसके स्त्रियोचित स्वरूप का प्रमाण हैं।

मेंहदी के अलावा, शरीर को सजाने के कुछ अधिक स्थायी रूप पच्चाकोट्टू गोदना, ऊलकी आदि प्रचलित हैं। इन्हें आप टैटू कह सकते हैं जिसका अर्थ है कि नुकीली चीज़ से अंकित करना। प्रारंभ में टैटू डिज़ाइनों का इस्तेमाल अलग-अलग जनजातियों की पहचान के लिए किया जाता था। कुछ समुदाय अपनी प्रतिष्ठा के प्रतीक के रूप में भी इसका प्रयोग करते थे। एक स्थायी जनजातीय पहचान के रूप में इसका प्रयोग किए जाने के अलावा यह शरीर सजाने के लिए भी काम में लाया जाता था, हालांकि यह अत्यंत कष्टदायक प्रक्रिया थी। इस क्रिया को बड़ी सावधानी से संपन्न किया जाता था क्योंकि अगर किसी व्यक्ति के शरीर पर गलत टैटू गोद दिया गया तो उसे अपने से भिन्न जनजाति का समझा जाने का खतरा हो जाता था और उसे स्थायी रूप से बाहरी व्यक्ति भी माना जा सकता था।

टैटू डिज़ाइन बनाने की प्रक्रिया में एक तीखे दाँतों वाले कंघे को काजल की काली स्याही में डुबोया जाता है और फिर उसके दाँतों को चमड़ी में चुभोया जाता है। इससे तकलीफ तो होती है फिर भी बहुत लोग अपने शरीर, खास तौर से अपनी बाँहों पर गोदवाते हैं। जनजातीय टैटू डिज़ाइनों का आधार जनजातीय कला होती है जो स्थानीय और स्वदेशी जातियों द्वारा व्यवहार में लाई जाती है। ऐसा माना जाता है कि इन गोदनों या टैटुओं को लगाने से उर्वरता, जननक्षमता और सुंदरता बढ़ती है, साथ ही उनका जादुई असर भी होता है। इसके अलावा, वे व्यक्ति के सामाजिक स्तर और उसकी जनजातीय पहचान में भी सहायक होते हैं।

उपयोगितावादी

सामाजिक रीति-रिवाजों के अनुसार स्वदेशी डिज़ाइनों के रूप उनके उद्देश्यों, बनाने के तरीकों और भौतिक मूल्यों पर निर्भर करते हैं। विभिन्न वस्तुओं की

© NCERT not to be republished

चित्र 4.6 घड़ा और कलशी

डिज़ाइन के पीछे जो भाव या अभिप्राय निहित होता है वही उनके रूप, व आकार-प्रकार आदि का निर्णय करता है और इसी विशिष्ट प्रयोजन के अनुसार उन डिज़ाइनों में आवश्यक परिवर्तन और समायोजन किया जाता है। उदाहरण के लिए, बर्तनों के आकार-प्रकार और रूप-रंग में उनके उपयोगिता तथा स्थान-विशेष के अनुसार काफी अंतर पाया जाता है। पात्रों के रूप और नाम उनके इस्तेमाल के अनुसार अनेक होते हैं, जैसे, हाँडी यानी पकाने का बर्तन, कलशी यानी पानी लाने या भरने का छोटा घड़ा आदि। कुछ पात्र काफी बड़े होते हैं; जैसे - बड़े घड़े, मांट या कुंडियाँ, जिनमें छोटे घड़ों से लाकर पानी इकट्ठा किया जाता है, उनका मुँह चौड़ा होता है ताकि उनमें से आवश्यकतानुसार पानी दूसरे बर्तनों की सहायता से निकाला जा सके। घड़े सरंध्र बालूदार चिकनी मिट्टी से बनाए जाते हैं जिससे वाष्पीकरण की प्रक्रिया से पानी ठंडा रहता है।

सिर पर, कमर के सहारे और हाथों से उठाकर ले जाने वाले बर्तनों के रूप अलग-अलग होते हैं। इसी प्रकार चावल, तेल, दूध जैसी चीज़ें रखे जाने वाले पात्र भी विशेष आकार-प्रकार के होते हैं। सामान भरकर रखे जाने वाले भिन्न-भिन्न किस्मों के संग्रहण पात्रों के स्थानीय नाम और रूप अलग-अलग होते हैं, कुछ चपटे, कुछ चौड़े या लंबे होते हैं। किसी की गर्दन मोटी या सँकरी होती है। यह सब इस बात पर निर्भर करता है कि वे किस काम में लिए जाते हैं।

भिन्न-भिन्न आकारों और रूपों के बड़े-बड़े नाँदों में डालकर घरेलू पशुओं या अन्य जानवरों को चारा खिलाया जाता है। और बड़े आकार के गोल पेंदे वाले कटोरों या कड़ाहों में धान को डालकर सेला या उसना चावल बनाया जाता है।

विभिन्न प्रकार की धार्मिक क्रियाओं में काम आने वाले पात्रों का आकार-प्रकार और रूप-रंग भी उन क्रियाओं की आवश्यकताओं के अनुसार ही निर्धारित होता है।

किसी धार्मिक स्थल या मंदिर-मठ आदि के वास्तु-रूप का डिज़ाइन तत्संबंधी धर्म-विशेष का द्योतक होता है। उनका वास्तुगत परिवेश पूजा-अर्चना के लिए उपयुक्त होता है। उदाहरण के लिए, मठ-मंदिरों के ऊँचे शिखरबंद और गर्भगृह तक पहुँचाने वाली लंबी-ऊँची सीढ़ियाँ तथा आँगन आदि उनके

© NCERT not to be republished

चित्र 4.7 सिंह-शीर्ष और स्तम्भ

धार्मिक महत्व, दूरी, उत्कृष्टता व सम्मान के सूचक होते हैं।

आइए, अब हम उस प्रतीक पर विचार करें जो हमें अक्सर हमारे नोटों, सिक्कों, सरकारी संस्थाओं, रक्षा संगठनों के नामपट्टों, डाकटिकटों तथा राष्ट्रपति भवन के शिखर जैसे स्थानों पर देखने को मिलता है।

इन सभी स्थानों में क्या पाया जाता है? यह सिंह-शीर्ष (lion capital) है।

सिंह-शीर्ष सम्राट अशोक द्वारा सारनाथ में बुद्ध के प्रथम धर्मोपदेश की स्मृति में बनाया गया था, इसे अब स्वतंत्र भारत के प्रतीक के रूप में अपनाया गया है। राजाज्ञा स्तंभ कहे जाने वाले ये शीर्ष स्तंभ प्रारंभ में एक लंबे स्तंभ यानी खंभे के सिर पर रखे जाते थे और ये स्तंभ ऐसे धार्मिक स्थलों पर स्थापित किए जाते थे जो बुद्ध के जीवन की घटनाओं से जुड़े होने के कारण तीर्थस्थल माने जाते थे। और ये स्तंभ तीर्थयात्रियों के लिए मार्गदर्शक का काम करते थे। क्या ये स्तंभ आजकल के बड़े विज्ञापनपट्टों (होर्डिंग) के समान नहीं होते? ये स्तंभ और होर्डिंग, दोनों ही विज्ञापन या प्रचार का काम करते हैं – एक धर्म का प्रचार करता है तो दूसरा किसी व्यापारिक वस्तु का। दोनों को आँख के स्तर से ऊँचा प्रदर्शित किया जाता है और अधिकतम ध्यानाकर्षण के लिए उन्हें किसी महत्वपूर्ण या ऊँचे स्थान पर रखा जाता है। इनका यात्रियों तथा दर्शकों पर काफी प्रभाव पड़ता है और वे उसकी ओर आकर्षित होते चले जाते हैं।

यह स्तम्भ बौद्ध धर्म के पहले से प्रचलित अक्ष शीर्ष (मुंडी) की एक अतिप्राचीन परंपरा की पराकाष्ठा का द्योतक है। अक्षमुंडी एक ऐसे बिंदु का प्रतीक है जो आकाश और पृथ्वी को आपस में जोड़ता है। यह स्तंभ पृथ्वी और आकाश के बीच यात्रा या संवाद स्थापित करने का माध्यम बनता है। अक्षमुंडी सभी संस्कृतियों में विभिन्न रूपों में पायी जाती है।

स्वदेशी डिज़ाइनों के कर्मकांडीय और उपयोगितावादी वर्गीकरण पर ऊपर इसलिए चर्चा की गई है ताकि स्वदेशी डिज़ाइनों को अधिक अच्छी तरह समझा जा सके। लेकिन हम आमतौर पर यह पाते हैं कि डिज़ाइनों को एक से अधिक श्रेणी के अंतर्गत वर्गीकृत किया जा सकता है। स्वदेशी डिज़ाइन को समझने के लिए पाठक को इन पर कई परिप्रेक्ष्यों से दृष्टिपात करना होगा। स्वदेशी डिज़ाइन हमेशा कोई खास अर्थ रखती है। इनका रूप भी आकर्षक एवं सौंदर्यपरक होता है जो किसी डिज़ाइन का अभिन्न एवं महत्वपूर्ण पहलू होता है। अंतिम बात यह है कि डिज़ाइन किसी आवश्यकता से ही उत्पन्न होती है और उसका एक विशिष्ट कार्य या प्रयोजन होता है जो उसे पूरा करना होता है। इसलिए, स्वदेशी डिज़ाइन को निम्नलिखित से समझा जा सकता है।

चित्र 4.8 लहँगा

संदर्भगत परिप्रेक्ष्य

वस्तुएँ विभिन्न संदर्भों में अपना अर्थ, महत्व या उपयोगिता संबंधी मूल्य बदल लेती हैं। कपड़े का एक आयताकार टुकड़ा शरीर के अलग-अलग भागों पर भिन्न-भिन्न तरीकों से बाँधा या लपेटा जा सकता है। और वह अपनी स्थिति के अनुसार कपड़े की अलग-अलग चीज़ें बन जाता है। जब इसे सिर के चारों ओर

© NCERT not to be republished

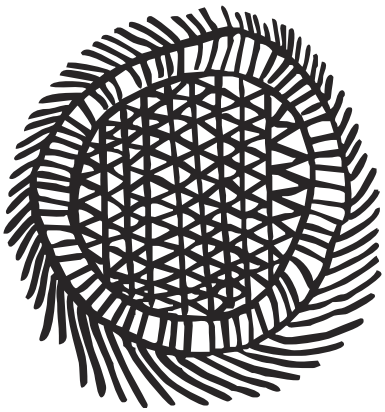

चित्र 4.9 प्रतीकात्मक सूर्य

लपेटा जाता है तो यह पगड़ी का काम देता है। जब वह शरीर के ऊपरी भाग पर लपेटा जाता है तो वह शॉल या उत्तरीय बन जाता है और जब उसे कमर के चारों ओर लपेटकर शरीर के नीचे के भाग को ढका जाता है तो यह अंतरीय, अधोवस्त्र, कच्छा या लहँगा बन जाता है।

सांकेतिक परिप्रेक्ष्य

भारत में अति प्राचीन काल से ही विश्व के साथ मानव के संबंधों को अभिव्यक्त करने और उसके संबंध में अपने आंतरिक भावों एवं विचारों को प्रकट करने के लिए संकेतों के रूप में एक अत्यंत सरल एवं अर्थपूर्ण भाषा का प्रयोग किया जाता रहा है। इस प्रकार डिज़ाइनें किसी न किसी रूप में अर्थपूर्ण बन जाती हैं। डिज़ाइनों का सांकेतिक परिप्रेक्ष्य उनके प्रयोगकर्ताओं में एक समझ पैदा करता है जिससे स्वदेशी डिज़ाइनों के पारस्परिक संबंधों का पता चलता है। चूँकि ग्राफिक प्रतीक देखने में आकर्षक और प्रभावी होते हैं इसलिए इनके संबंध में विचारणीय विषय और महत्वपूर्ण हो जाते हैं।

दूसरी ओर, भावों या प्रतीकों को आत्मसात् करने की जो क्षमता होती है वह भी उनके कार्य का एक अन्य पहलू होता है। संकेतों की इस क्षमता को विभिन्न प्रतीकों में देखा जा सकता है जो हमारी रोजमर्रा की ज़िंदगी में ही नहीं बल्कि राजनीतिक, धार्मिक, सामान्य गतिविधियों में भी देखने को मिलती है। डिज़ाइनों की यह क्षमता देखने वालों को अपनी ओर आकर्षित और प्रभावित करती है।

देवी-देवताओं को चित्रित करने वाले प्रतीकात्मक डिज़ाइन को अंगदेव के अद्भुत रूप में भी देखा जा सकता है। अंगदेव बस्तर (छत्तीसगढ़) की मुड़िया जनजाति के इष्ट देव हैं। इसका एक निश्चित रूप होता है जो दो लट्ठों को दो

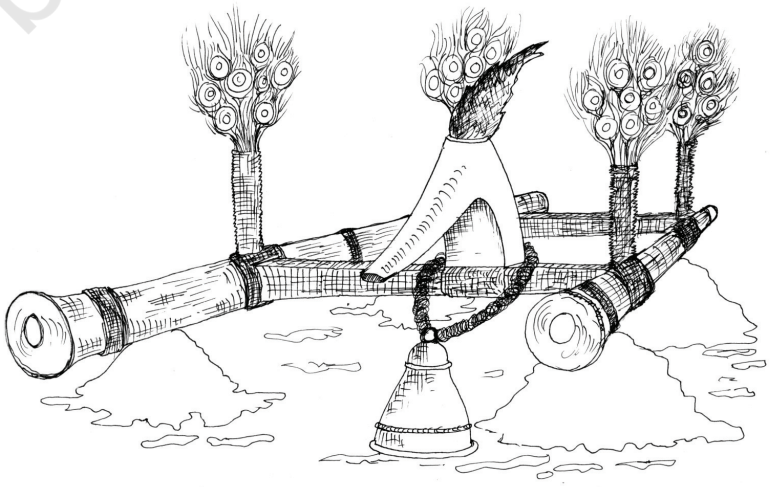

चित्र 4.10 अंगदेव

© NCERT not to be republished

आड़ी बल्लियों के साथ बाँधकर तैयार किया जाता है; उसके जोड़ों पर मोर पंख लगाए जाते हैं।

लट्ठों की ऊपरी सतह पर दोनों ओर सिक्के चिपकाए जाते हैं। भक्त लोग अंगदेव को अपने कंधों पर उठाकर ले जाते हैं। बीच का खंबा स्वयं अंगदेव का प्रतीक होता है। अंगदेव हलके काले रंग से रँगा होता है जिससे उसकी उपस्थिति में प्रबलता का आभास होता है। जब भक्त लोग उसे कंधे पर उठाकर तेज़ी से चलते हैं तो उनकी प्रशंसा और गुणगान करते हैं ।

कार्यात्मक परिप्रेक्ष्य

कार्य के अनुसार ही रूपांकन किया जाता है, यह बतलाने के लिए साँची स्तूप से एक उदाहरण लें। यक्षी की आकृतियों वाला टोड़ा (ब्रैकेट) एक वास्तुकलात्मक डिज़ाइन है। टोड़े में दिखाया गया है कि यक्षियाँ सरदल (lintel) के बोझ को उठाए हुए हैं। उनके शरीर की मुद्रा से बोझ के भारीपन का एहसास होता है। बोझ के कारण उनके पाँव भी मुड़े हुए दिखाए गए हैं।

चित्र 4.11 यक्षी

आप जानते हैं कि शहरों में जगह की कमी होती है। वहाँ कम से कम जगह का अधिक से अधिक उपयोग कैसे किया जाता है, आइए यह देखें। छोटी-छोटी दुकानों या सड़क के किनारे बनी हुई छोटी-छोटी दुकानों जैसे चाय की गुमटी को ऊपर-नीचे कई तल्लों में बाँट लिया जाता है। ऊपरी तल्ला रोज़मर्रा की लेन-देन या कारोबार के लिए होता है जबकि नीचे का हिस्सा काम करने या सामान रखने के लिए काम में लिया जाता है। इस प्रकार कार्य की दृष्टि से जगह की व्यवस्था किए जाने का अनुभव दृश्य स्थान तथा ग्राफिक संवेदनग्राहिता के हमारे भाव को पुष्ट करने में योगदान देता है।

© NCERT not to be republished

चित्र 4.12 धार्मिक कर्मकांड में उपयोग करने के लिए बनाई गई मिट्टी की मूर्ति (ईडर, गुजरात से प्राप्त)

चित्र 4.13 कर्मकांड में बनाए जाने वाले कुछ स्थानीय प्रतीक

सांस्कृतिक तथा सामाजिक रूपों का महत्त्व

हमारा सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन विभिन्न प्रकार के रूपों के सृजन करता है जिनका अपना महत्व होता जैसे–

- पगड़ी किसी वर्ग, जाति, पेशा या धार्मिक पहचान की सूचक होती है।
- मंगलसूत्र स्त्री के विवाहित होने की पुष्टि करता है।
- स्वास्तिक धार्मिक चिह्न का द्योतक होता है; त्रिभुज और उलटे त्रिभुज जैसे ज्यामितीय आरेख जिन्हें यंत्रों या दीवारों की सजावटों में देखा जाता है, नारी और पुरुष की सृजन संबंधी शक्ति या क्षमता के सूचक होते हैं। इसी प्रकार मंडल की आकृतियाँ संपूर्ण ब्रह्मांड का सूक्ष्म रूप दर्शाती हैं।
- अपने शहीदों या मृतकों की याद में जनजातीय समुदायों द्वारा निर्मित स्मारक स्तंभ (जैसे, भीलों द्वारा वीर पुरुषों के लिए बनाए जाने वाले गाथा और स्त्रियों के लिए बनाए जाने वाले सती स्तंभ; ऐसे ही स्मारक स्तंभ कोरकु जनजातियों द्वारा भी बनाए जाते हैं जिन्हें शिडोली मुण्डा कहते हैं, इसी प्रकार माड़िया जनजाति के स्मारक स्तंभ पेड़ के संपूर्ण तने को उकेर कर बनाए जाते हैं)।
- विवाह स्तंभ जिन्हें मंगरोही खंभ कहा जाता है, गोंड जनजाति के लोगों द्वारा बनाए जाते हैं। ये स्तंभ जननक्षमता के प्रतीक होने के साथ-साथ बुरी नज़र को भी दूर भगाने वाले समझे जाते हैं। गोंड लोग अपनी धार्मिक क्रिया संपन्न करने के बाद इन स्तंभों को नदी में बहा देते हैं।

© NCERT not to be republished

चित्र 4.14 बस्तर से प्राप्त मिट्टी का हाथी जो मनौती पूरी होने पर पूजा जाता है।

- बुरी नज़र से बचने के लिए झाड़ू और चप्पलों को बाँस के लंबे लट्ठे में बाँधकर, भवनों के निर्माण स्थलों पर लगाया जाता है।
- मनौती पूरी होने पर चढ़ाई जाने वाली आकृतियाँ; जैसे – मिट्टी के बने घोड़े, बैल, हाथी और ऊँट।
- पेड़ों के नीचे स्थापित पत्थरों के रूप में देवी-देवता, ध्वजदंड, त्रिशूल, लट्ठे के ऊपर लगाए गए मोर पंख (गोंड लोगों द्वारा चंडी) या, नदीतल से निकाले गए चिकने गोलाकार पत्थर जो एक-दूसरे पर स्थापित किए जाते हैं, शिव का प्रतीक माने जाते हैं।

प्रश्नावली

1. 'स्वदेशी डिज़ाइन' शब्द से आप क्या समझते हैं? कुछ उदाहरण देते हुए स्पष्ट करें।
2. शारीरिक डिज़ाइन शब्द से आप क्या समझते हैं? मेंहदी के डिज़ाइन और शरीर पर गोदे गए टैटू में क्या अंतर होता है?
3. स्मारक स्तंभ शब्द से आप क्या समझते हैं? कुछ उदाहरण देकर स्पष्ट करें।
4. राजाज्ञा स्तंभ क्या होते हैं? आप 'अक्ष मुंडी' शब्द से क्या समझते हैं?
5. प्रतीकों की रचना में संस्कृति की भूमिका पर संक्षेप में चर्चा करें। उदाहरणों के साथ अपने उत्तर को स्पष्ट करें।
6. समाज और वस्तुएँ अपनी धार्मिक क्रिया और उपयोगिता से जुड़े होते हैं, इस कथन को स्पष्ट करें।

प्रायोगिक

1. पाँच परंपरागत या समकालीन रूपों/वस्तुओं के रोज़मर्रा के उपयोगों का पता लगाएँ और उनके कार्यों का चित्रात्मक विश्लेषण करें।
2. अपने आसपास के परिवेश से कुछ (तीन से पाँच) डिज़ाइनें इकट्ठी करें और उन्हें अधिक प्रभावी तथा सौंदर्यशास्त्रीय दृष्टि से आकर्षक बनाने के लिए उनके रूप में कुछ परिवर्तन करें।
3. किसी नमूने का डिज़ाइन तैयार करें और उसे त्रिआयामी रेखाचित्र में बदलें।

© NCERT not to be republished

5
अध्याय

ग्राफ़िक डिज़ाइन की स्वदेशी परंपराएँ

क्या ग्राफिक डिज़ाइन एक आधुनिक विचारधारा यानी नए ज़माने की देन है अथवा हम पुराने ज़माने में भी ऐसी कला-पद्धतियों को अपनाए हुए थे जिन्हें ग्राफिक डिज़ाइन यानी आलेखीय रूपांकन की पद्धतियाँ कहा जा सकता है? क्या केवल शहरी पढ़े-लिखे लोग ही ग्राफिक डिज़ाइन करते हैं अथवा हमें जनजातीय तथा ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों और समुदायों में भी जो आमतौर पर आधुनिक तरीके से शिक्षित नहीं होते, ऐसी कला परंपराएँ मिल सकती हैं?

आप क्या सोचते हैं? जी हाँ, हमें पूर्व-आधुनिक और पारंपरिक लोगों और समुदायों में भी ऐसी अनेक कलात्मक गतिविधियाँ देखने को मिल सकती हैं जो ग्राफिक डिज़ाइन की श्रेणी में आती हैं। ये कलाकृतियाँ अनेक प्रकार की होती हैं और घरों की देहली से लेकर कोनों, दीवारों, छतों, सामने के आँगनों आदि में सर्वत्र भाँति-भाँति के चित्रांकनों के रूप में देखी जा सकती हैं। इनकी सूची बनाई जाए तो वह बहुत लंबी होगी। जिसमें हाथकरघे का कपड़ा, मिट्टी से की गई सजावट, गोदना, हाथों और हथेलियों पर की जाने वाली डिज़ाइनें, जैसे कि मेंहदी रचाना, धार्मिक चित्र मांडना, जंतर-ताबीज़, यंत्र आदि और भारत के अनेक किलों एवं मंदिरों की छतों, दीवारों आदि पर अंकित डिज़ाइनें शामिल होंगी। ये सभी कलाकृतियाँ आधुनिक या समकालीन ग्राफिक डिज़ाइन की पद्धतियों से भिन्न होती हैं। इसलिए इन्हें स्वदेशी ग्राफिक डिज़ाइन की परंपराएँ अथवा ग्राफिक डिज़ाइन की पारंपरिक पद्धतियाँ कहा जा सकता है।

वर्तमान में प्रचलित भारतीय स्वदेशी ग्राफिक डिज़ाइनों और नमूनों (motif) को उनकी अपनी-अपनी परंपरा के आधार पर निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया जा सकता है :

- वैदिक और आरंभिक डिज़ाइन परंपराएँ
- लोक प्रचलित और लोकप्रिय परंपराएँ
- जनजातीय डिज़ाइन पद्धतियाँ
- तांत्रिक डिज़ाइन पद्धतियाँ

© NCERT not to be republished

चित्र 5.1 एक यज्ञ अनुष्ठान

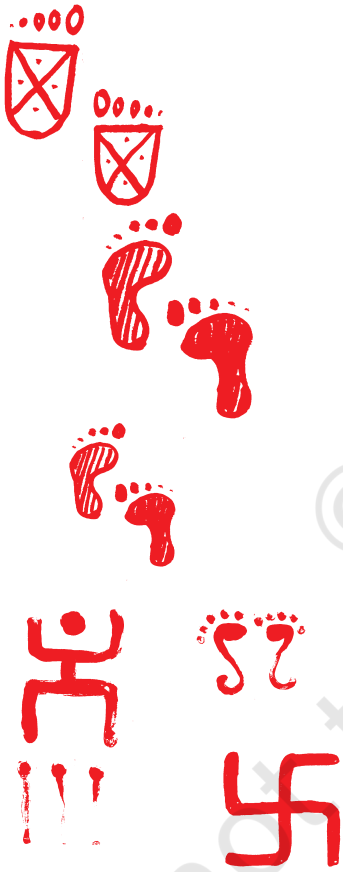

चित्र 5.2 वैदिक प्रतीक

वैदिक और आरंभिक डिज़ाइन परंपराएँ

उपर्युक्त परंपराएँ कुछ सीमा तक परस्पर जुड़ी हुई हैं। और अनेक ऐसे संभव तरीके हैं जिनके द्वारा इन भिन्न-भिन्न शृंखलाओं को एक दूसरे के साथ जोड़ा जा सकता है। आरंभिक परंपराओं के बीच का संबंध तो सर्वज्ञात तथा निर्विवाद है, और इस विषय में कोई मतभेद नहीं है। आरंभिक डिज़ाइन पद्धतियों के बारे में व्यापक रूप से यह स्वीकार किया जाता है कि वे वैदिक पद्धति का ही परवर्ती और लोकप्रिय रूप हैं। लेकिन क्या तांत्रिक पद्धति का वैदिक पद्धति से कोई संबंध है अथवा इसकी एक स्वतंत्र परंपरा है या ये पद्धतियाँ लोक/जनजातीय परंपराओं से निकली हैं – इस समस्या का अभी तक कोई समाधान नहीं हुआ है। लेकिन इस बात की पूरी संभावना है कि पौराणिक और तांत्रिक दोनों ही प्रकार की परंपराएँ एक ओर वैदिक परंपराओं से और दूसरी और लोक और जनजातीय परंपराओं से जोड़ी जा सकती हैं।

वैदिक धार्मिक कर्मकांड में यज्ञ ऐसे धार्मिक अनुष्ठान होते हैं जिनके द्वारा अग्नि में आहुति देकर विभिन्न सामग्रियों को विभिन्न देवी-देवताओं को अर्पित किया जाता है। यज्ञों, श्राद्ध कर्मों, विवाह-संस्कार जैसी धार्मिक क्रियाओं में मंडल/वृत्त, वर्ग और त्रिभुजों जैसी आकृति बनाकर भिन्न-भिन्न देवी-देवताओं को निरूपित किया जाता है और उनके माध्यम से उनसे संबंधित देवी-देवताओं का आह्वान किया जाता है। उदाहरण के लिए, श्राद्धकर्म में, श्राद्धकर्ता द्वारा एक वृत्त यानी गोल घेरा बनाया जाता है और उसमें विराजमान होने के लिए पितृजन की आत्मा का आह्वान किया जाता है और इसी प्रकार 'विश्वेदेवा' कहे जाने वाले देवताओं को बुलाने के लिए उँगली से एक वर्ग तैयार किया जाता है।

यज्ञों में विभिन्न वैदिक देवी-देवताओं को बुलाने के लिए गोबर-मिट्टी से पुते फर्श पर या बनाई गई वेदी पर चावल के सफेद आटे से कई प्रकार की आकृतियाँ बनाई जाती हैं जो अपेक्षाकृत अधिक जटिल होती हैं।

वैदिक संस्कृति की सर्वाधिक महत्वपूर्ण ध्वनि है ओऽम् जिसे 'प्रणव' कहा जाता है। इसे देवनागरी लिपि में ॐ के रूप में प्रस्तुत किया जाता है जो हमारी संस्कृति में एक अत्यंत महत्वपूर्ण ग्राफिक प्रस्तुति है। ऐसे और भी कई

© NCERT not to be republished

लोक-प्रचलित प्रतीक हैं, जैसे स्वास्तिक, जिनका मूल वैदिक ग्राफिक प्रतीकवाद में खोजा जा सकता है।

लोक प्रचलित और लोकप्रिय परंपराएँ

अनेक ग्रामीण परंपराएँ हैं जिन्हें न तो वैदिक और न ही आधुनिक कहा जा सकता है। इन परंपराओं को आमतौर पर 'लोक' परंपराओं के अंतर्गत वर्गीकृत किया जाता है। इन परांपराओं के बारे में यह विवाद प्रचलित है कि क्या ये परंपराएँ वैदिक काल से पहले की हैं अथवा नहीं। इस विषय में सच्चाई कुछ भी हो, उनमें से अधिकांश परंपराएँ या तो वैदिक परंपरा से प्रभावित हैं अथवा आमतौर पर किसी न किसी रूप में उससे जुड़ी हैं। इस बात के भी प्रमाण मिलते हैं कि लोक परंपराओं ने वैदिक परंपरा को प्रभावित किया था। ऐसे साक्ष्य भी मिलते हैं कि कुछ लोक परंपराओं को वैदिक परंपरा ने आत्मसात् कर लिया था और उनका अलग अस्तित्व नहीं रहा। लेकिन लोक परंपरा का एक बहुत बड़ा भाग ऐसा भी देखने को मिलता है जिस पर वैदिक परंपरा का कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

चित्र 5.3 दीवार पर बनाया गया स्वास्तिक

लोक और पौराणिक परंपराओं में ऐसी लोकप्रिय सांस्कृतिक और कलात्मक पद्धतियाँ शामिल हैं जो धार्मिक या पंथनिरपेक्ष किस्म की हो सकती हैं। ये पद्धतियाँ अधिकतर रीति-रिवाजों, पेशेवर या कलात्मक परंपराओं के रूप में विकसित हुई हैं। ऐसी लोक और पौराणिक डिज़ाइन संबंधी परंपराओं में से कुछ के बारे में नीचे चर्चा की जा रही है।

देहली यानी प्रवेश द्वार की सजावट

भारत के गाँवों में ऐसी परंपरा है कि आगे के आँगन या देहली को गोबर या मिट्टी से लीपा-पोता जाता है और विशेष रूप से तैयार की गई दीवारों और आँगन पर तरह-तरह के चित्रांकन किए जाते हैं। देहली को घर के भीतर और बाहर की दुनिया के बीच की खाली जगह माना जाता है। मोटे तौर पर तो इस स्थान का

चित्र 5.4 सामने के आँगन की सजावट जिसमें तेल का दीपक रखने के लिए खाली जगह रखी गई

© NCERT not to be republished

प्रयोजन केवल सजावट करने के लिए ही प्रतीत होता है, लेकिन कुछ अध्ययनों से पता चला है कि इस पद्धति का मूल उर्वरता के भाव और अलौकिक विश्वासों में खोजा जा सकता है।

आमतौर पर, ये चित्रांकन पाउडर यानी आटे या चूने से किए जाते हैं। भारत के अधिकतर भागों में इसके लिए सफेद पाउडर का इस्तेमाल किया जाता है। कुछ भागों में यह सफेद पाउडर कच्चे सफेद पत्थर को कूट-पीसकर तैयार किया जाता है। लेकिन आजकल अधिकतर जगहों में इस काम के लिए चावल के आटे का इस्तेमाल किया जा रहा है।

यद्यपि अलग-अलग क्षेत्रों में इन चित्रांकनों के नाम अलग-अलग होते हैं। उनमें प्रयुक्त की जाने वाली सामग्री अलग-अलग किस्म की होती है और ये घर के किस भाग में बनाए जाएँ इसमें भी भिन्नता होती है, मगर एक बात में

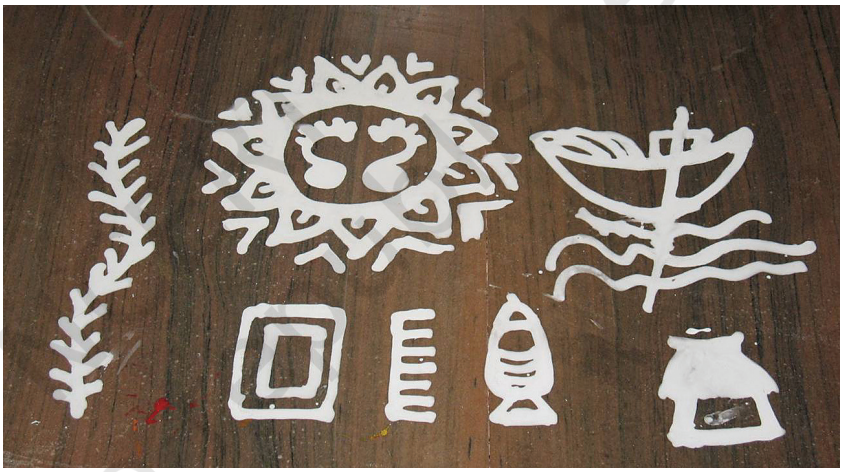

चित्र 5.5 फर्श पर देहली की सजावट

चित्र 5.6 फर्श पर डिज़ाइन बनाते हुए

एकरूपता अवश्य होती है कि घर की देहली पर ये चित्रांकन सर्वत्र स्त्रियों द्वारा ही किए जाते हैं और उन्हें इसकी शिक्षा पीढ़ी-दर-पीढ़ी यानी माँ से बेटी को दी जाती है। सामाजिक व्यवस्था की दृष्टि से देखा जाए तो ऐसा प्रतीत होता है मानो इस लैंगिक अनन्यता ने स्त्रियों के लिए कार्यक्षेत्र को घर की देहली तक सीमित कर दिया है।

फर्श को सजाने की इस पद्धति को भिन्न-भिन्न प्रदेशों में अलग-अलग नामों से पुकारा जाता है; जैसे- 'अल्पना' या 'अल्पोना' बंगाल में; 'अरिपन' बिहार में; 'झुनिति' उड़ीसा में; 'मांडणा' राजस्थान और मध्यप्रदेश में; 'साथिया' गुजरात में; 'रंगोली' महाराष्ट्र में;, 'मुग्गु' आंध्रप्रदेश में और 'कलामेज़ुतु', 'कोलम' कर्नाटक, तमिलनाडु और केरल में; और उत्तर प्रदेश में इसे 'चौक पूरना' या 'अरिपन' कहते हैं।

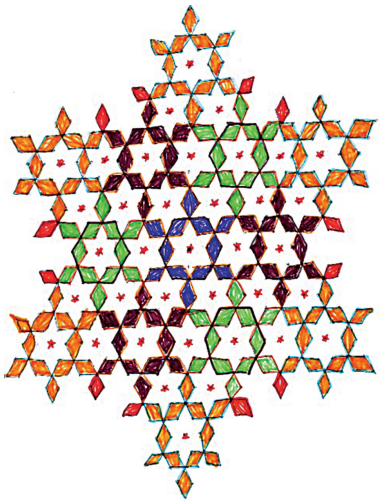

केरल में, डिज़ाइन की बाहरी रेखाओं पर फूल सजाए जाते हैं, जबकि उड़ीसा, राजस्थान और उत्तर भारत के अन्य भागों में चित्र चावल के आटे और पानी के मिश्रण से बनाया जाता है और यह मिश्रण उँगली, कपड़े के टुकड़े या किसी ब्रुश से लगाया जाता है। उत्तर भारत में यह चित्रांकन अधिकतर धार्मिक उत्सवों या व्रतों के दौरान ही किए जाते हैं जबकि दक्षिण भारत में 'कोलम' रोजाना तैयार किया जाता है।

अल्पना/अल्पाना/अरिपन/रंगोली/झुनिति

अल्पना बंगाल में घर की स्त्रियों द्वारा तीज-त्यौहारों और धार्मिक उत्सवों-पर्वों के दिनों में अपने घरों के सामने बनाई जाती है। इसका चित्रांकन उँगली के चारों ओर कपड़े का छोटा टुकड़ा लपेटकर और उस उँगली को पिसे हुए चावलों के पानी मिले घोल में डुबोकर किया जाता है।

चित्र 5.7 चित्रांकन के भिन्न-भिन्न रूप

© NCERT not to be republished

ये चित्रांकन भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं और तरह-तरह की धार्मिक क्रियाओं या व्रतों से जुड़े होते हैं, जैसे केवल विवाहिताओं द्वारा किए जाने वाले 'नारी-व्रत' और कुँवारी कन्याओं द्वारा किए जाने वाले 'कुमारी व्रत', अथवा स्त्रियों की ओर से पुरोहितों द्वारा किए जाने वाले 'शास्त्रीय व्रत'। व्रत ऐसे धार्मिक कृत्य या अनुष्ठान होते हैं जो कुछ विशेष इच्छाओं या मनौतियों को पूरा करने के लिए पीढ़ी-दर-पीढ़ी चले आ रहे नियमों के अनुसार संपन्न किए जाते हैं; ये नियम किसी विशेष पंथ या संप्रदाय तक ही सीमित नहीं होते। जैसा कि स्पष्ट है, ये चित्रांकन साधारण या अल्पविकसित कुशलता वाले लोगों द्वारा किए जाते हैं। वे मामूली शक्ल-सूरत की साधारण तसवीरें बनाते हैं। इनका प्रयोग अल्पना के माध्यम से लोगों द्वारा अपनी इच्छाओं-आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति के लिए भिन्न-भिन्न रूपों और गाथाओं में किया जाता है।

अल्पना के कुछ रूपों में अलंकरण का भाव भी व्यक्त होता है जो कि विभिन्न किस्म के बेलबूटों और कमलपुष्पों के रूप में चित्रित किया जाता है। लेकिन जब अल्पना के इन नमूनों को व्रत या मनौती आदि के धार्मिक अनुष्ठानों के संदर्भ से अलग करके देखा जाता है तब वे केवल सजावट की वस्तुएँ ही रह जाती हैं।

बिहार के मिथिला क्षेत्र में 'अरिपन' ब्राह्मण और कायस्थ स्त्रियों द्वारा तैयार की जाती है जो धार्मिक अनुष्ठानों से जुड़ी होती है। वे घर और आँगन के मिट्टी से लिपे-पुते फर्श पर अपनी उँगलियों से सुंदर किनारी बनाती हैं। उसमें गहरे लाल सिंदूर से सुंदर बिंदियों से नमूने बनाए जाते हैं। उसमें हल्दी, चावल या गेहूँ का आटा जैसी सामग्री का प्रयोग किया जाता है जिसे 'अरिपन' कहा जाता है।

चित्र 5.8 कलामेजुतु

स्त्रियों द्वारा घर की देहली पर किए जाने वाले अल्पना आदि चित्रांकनों को यहीं छोड़कर अब केरल के मंदिरों में बालू से की जाने वाली चित्रकारी की चर्चा करते हैं। इस चित्रकारी के लिए अधिक कार्य-कुशलता की आवश्यकता होती है जो कलाकार को परंपरागत रूप से निर्धारित नियमों के माध्यम से प्राप्त होती है।

'कलामेजुतु' एक अस्थायी किस्म का चित्रांकन होता है जो मंदिर के सामान्य उत्सवों या किसी बड़े धार्मिक अनुष्ठान के समय किया जाता है और उस अनुष्ठान के संपन्न होने के बाद उसे तुरंत मिटा दिया जाता है। यह रंगीन चित्रांकन हाथों से ही किया जाता है, यानी इसे बनाने में किसी उपकरण या औज़ार की आवश्यकता नहीं होती है। इसमें प्राकृतिक खनिजों, वनस्पतियों या दोनों से निकाले गए रंगद्रव्यों का प्रयोग होता है।

कोलम

'कोलम' मुख्य रूप से इस विश्वास के साथ बनाया जाता है कि इससे घर-परिवार में सुख-संपत्ति आएगी। कोलम का एक आकर्षक पहलू यह भी है कि कोलम मोटे चावल जैसी जिन चीज़ों से बनाया जाता है उन्हें खाने-चुगने के लिए छोटे जीव-जंतु या पक्षी चले आते हैं और ऐसा समझा जाता है कि उनके साथ घर में

© NCERT not to be republished

चित्र 5.9 कोलम

सुख-समृद्धि भी चली आती है। दूसरे, यह दैनिक जीवन में समरसतापूर्ण सह-अस्तित्व का पाठ पढ़ाता है। आज जबकि दुनिया में चारों ओर मानवीय मूल्यों की अवहेलना की जा रही है और संपूर्ण पर्यावरण का ह्रास हो रहा है, इसका महत्व और बढ़ गया है।

दूसरी ओर, यह भी समझा जाता है कि इन डिज़ाइनों से देहली पवित्र हो जाती है और घर पवित्र होकर बाहर की अशुभ, अशुद्ध और खतरों भरी दुनिया से सुरक्षित रहता है। ऐसा माना जाता है कि कोलम की बंद रेखाएँ प्रतीकात्मक रूप से दुष्टात्माओं को अन्दर प्रवेश करने से रोक देती हैं। यदि देहली को लगातार कोलम बनाकर पवित्र न रखा जाए तो अशुभ शक्तियाँ घर के भीतर घुस आएँगी और फिर परिवार के स्वास्थ्य और सुखों को नष्ट कर देंगी। इसीलिए देहली पर से ही उन अशुभ शक्तियों को भगा देने के लिए कोलम बनाया जाता है।

कोलम की रचना का मूल आधार बिंदियाँ (पुल्ली) होती हैं जिन्हें आपस में जोड़कर तरह-तरह के डिज़ाइन और नमूने बनाए जाते हैं।

किसी भी संस्कृति में भिन्न-भिन्न स्तरों के कलाकार होते हैं। कुछ में मामूली किस्म की कार्य-कुशलता होती है जिसके आधार पर वे आस-पास दिखाई देने वाले तथ्यों या घटनाओं को चित्रित करने की कोशिश करते हैं, जबकि कुछ उच्चकोटि के कलाकार होते हैं और स्वयं वस्त्रों आदि पर अपने मौलिक और अधिक जटिल तथा सुंदर डिज़ाइन तैयार करते हैं।

भारत-भर में सर्वत्र विभिन्न प्रकार से फर्श-सज्जा की जाती है और किसी क्षेत्र विशेष से संबंधित फर्श पर की जाने वाली सजावट की विशेषताओं तथा भावों के विषय में शोधकार्य करना रोचक होगा।

© NCERT not to be republished

चित्र 5.10 रामायण की घटनाओं के साथ एक कलमकारी

कलमकारी

कलमकारी सूती वस्त्र पर हाथ से बनाई गई या ठप्पे से छापी गई चित्रकारी की

© NCERT not to be republished

चित्र 5.11 इकत कपड़ा

भीतर घुसने से रोकता है। क्योंकि दोनों (मोम और रंग) एक दूसरे को रोकते हैं। कई रंगों के लिए इस प्रक्रिया को कई बार दोहराया जाता है। कभी-कभी कपड़े की हर पट्टी (हिस्से) को अगली पट्टी से अलग रखते हुए अलग-अलग रंगों में रँगना होता है। जब धागे तैयार हो जाते हैं तब उन्हें करघे में लगाया जाता है। इकत कपड़ों को सँकरे करघों पर हाथ से बुना जाता है। इस प्रक्रिया में बहुत मेहनत करनी पड़ती है। जब रँगे हुए धागों को ताने के तौर पर काम मे लिया जाता है तब बुनकर को कपड़े का नमूना दिखाई दे सकता है। धागों को आगे-पीछे सुव्यवस्थित किया जाता है जिससे कि उनका एक दूसरे के साथ सही-सही मेल बैठ सके।

दोहरे इकत बनाना बहुत कठिन होता है। इसके लिए ताना और बाना दोनों को बड़ी सावधानी से टाइ-डाई किया जाता है ताकि जब कपड़ा बुन रहा हो तो वांछित नमूना सही-सही उभर सके। इसमें सबसे बड़ी चतुराई यह है कि ताने और बाने के धागों को सही ढंग से रँगा जाए ताकि वांछित डिज़ाइन बन सके और फिर उन्हें कपड़े के रूप में एक साथ ठीक से बुना जाए। कपड़ा सूती, रेशमी या दोनों का मिला-जुला रूप हो सकता है। अब रंगों और उनके मिश्रित रूपों को अधिकाधिक रूप में प्राकृतिक स्रोतों से लिया जा रहा है। अब पुरानी और नई पीढ़ी के बुनकर, समाज की बदलती हुई रुचियों को ध्यान में रखते हुए, परंपरागत डिज़ाइनों को छोड़कर नई-नई डिज़ाइनें अपनाने लगे हैं।

जनजातीय डिज़ाइन पद्धतियाँ

जनजातीय समाज अपने धार्मिक अनुष्ठानों को चित्रमय लेखन के साथ संपन्न करता रहा है जिन्हें भारत के विभिन्न भागों में दीवारों की सजावट के रूप में भी काम में लिया जाता था जैसा सावरा, मधुबनी, वरली आदि। ये सभी चित्रलेख उनके लोक और कर्मकांडीय कृत्यों, पौराणिक कथाओं, इतिहास और रोज़मर्रा की ज़िंदगी की झलक भी पेश करते हैं जैसा कि वरली के भित्तिचित्रों में दिखाई देता है। आकृतियाँ और रेखाचित्र बनाना ही इन लोगों के लिए अपने पैतृक ज्ञान, लोक साहित्य और सद्भावनाओं को दूसरों तक पहुँचाने का माध्यम था।

इन भित्तिचित्रों में चित्रात्मक वृत्तांतों को प्रस्तुत करने की आरम्भिक

© NCERT not to be republished

चित्र 5.12 एक जनजातीय डिज़ाइन

शब्दावली यानी संकेतों का प्रयोग किया गया है। जैसे किसी भाषा के वर्ण उसके मूल तत्व होते हैं उसी प्रकार इन चित्रलेखों के मूल तत्व वर्ग, वृत्त, त्रिभुज, अर्धवृत्त जैसी आकृतियाँ हैं जिससे ये कलाकार भावों और विचारों को व्यक्त करते हैं। वृत्त और त्रिभुज की जानकारी उसे प्राकृतिक दृश्यों को देखने से मिली। वृत्त की जानकारी सूर्य और चंद्रमा से मिली और पहाड़ों तथा पेड़ों को देखकर उसने त्रिभुज बनाना सीखा। ऐसा प्रतीत होता है कि वर्ग का आविष्कार मनुष्य ने स्वयं अपनी बुद्धि से किया। वर्ग किसी धार्मिक अहाते या ज़मीन के टुकड़े का सूचक होता है।

सावरा या वरली चित्रलेखों में पाई जाने वाली आकृतियाँ दो त्रिभुजों के मिलने से बनती हैं। एक बिंदु पर मिले हुए दो त्रिभुजों में ऊपरी त्रिभुज मानव शरीर के ऊपरी भाग का द्योतक होता है। सिर का भाग एक छोटे वृत्त के रूप में दर्शाया जाता है और एक उससे भी छोटा वृत्त बड़े वृत्त के साथ मिलकर स्त्री की आकृति को दर्शाता है। जब किसी वृत्त के साथ दो टाँगें और दो हाथ दर्शाने के लिए चार रेखाएँ जोड़ दी जाती हैं तो वह मानव आकृति का सूचक होता है। इसी प्रकार अन्य कई संकेत वृत्तांतों की विभिन्न जटिलताओं के सूचक होते हैं। इन वृत्तांतों का एक ऐसा चित्रलेख प्रस्तुत किया जाता है जो इन दीवारी सजावटों या अलंकरणों का आवश्यक पहलू बनता है।

सावरा चित्रलेख : एक चित्र-विशेष का अध्ययन

उड़ीसा में सावरा (सौरा) वहाँ के जनजीवन का परंपरागत रूप है। सफेद रंग में चित्रित विशद् चित्रलेखों को 'इत्तल' या 'इदित्तल' भी कहा जाता है। ये चित्र उनके घरों की भीतरी और बाहरी दोनों प्रकार की दीवारों पर बनाए जाते हैं। सावरा या इत्तल अपने इष्टदेव को प्रसन्न करने के लिए बनाया जाता है। अपने इष्टदेव जलीयसुम को उसकी प्रशंसा के द्वारा प्रसन्न करने के लिए चित्र में यह दर्शाने का प्रयत्न किया जाता है कि वह कितना अधिक शक्तिशाली व्यक्ति है, उसके पास कितने अधिक नौकर-चाकर हैं, वह कितने शानदार तरीके से शादी रचाता है, इत्यादि।

इन प्रतीकों की संदेश-सूचक क्षमता की प्रभावकारिता को गहराई से जानने के लिए, आइए एक सावरा चित्रलेख को बारीकी से देखें। सावरा चित्रलेख या इत्तल मृतकों की यादगार में, बीमारियों को दूर भगाने के लिए, उर्वरता में वृद्धि करने के लिए और कतिपय पर्वों के अवसरों पर तैयार किए जाते हैं। ऐसे चित्रलेख को चित्रित करने के लिए पहले घर की किसी दीवार को लाल चिकनी मिट्टी से पोता जाता है; फिर उस पर चावल के आटे और पानी के मेल से तैयार किए गए मिश्रण से चित्रकारी की जाती है। यह मिश्रण ऐसी टहनी से लगाया जाता है जिसका सिरा इस कार्य के लिए विशेष रूप से तैयार किया जाता है।

हाशिये में दिए गए चित्रलेख को ध्यान से देखिए। इसके मध्यभाग में एक आयताकार अहाता बना हुआ है जो राजमहल का सूचक है। इसमें नाचते हुए लोग दिखाए गए हैं। मानव आकृतियों को बुनियादी ग्राफिक तत्वों; जैसे–त्रिभुजों, वृत्तों और हाथ-पैरों के लिए मामूली रेखाओं के मेल से चित्रित किया गया है। इस अहाते से बाहर चित्रित एक पेड़ पर खुशी से नाचते हुए बंदर दिखाए गए हैं। जलीयसुम की माँ, बहनें और बेटियाँ एक कतार में नाचती हुई उस भवन की ओर

© NCERT not to be republished

चित्र 5.13 एक सावरा चित्रलेख

आ रही हैं और अपने कधों पर बंदूकें लिए हुए सैनिक उनकी रक्षा कर रहे हैं। सूरज, चाँद और तारों को वृत्त, अर्धवृत्त और बिंदुओं के रूप में उस दृश्य पर चमकता हुआ दर्शाया गया है। एक अन्य देवता हाथी पर बैठकर विवाहोत्सव में शामिल होने के लिए आ रहे हैं। हाथी का चित्र बनाने के लिए पहले त्रिभुजों की सहायता से उसका शरीर बनाया गया है और फिर उसमें टाँगें, पूँछ और सूँड़ लगाई गई हैं और अंत में शरीर में सफेद रंग भरा गया है और सवार को हाथी पर बैठा दिया गया है। घोड़े का आकार भी मानव आकृति की तरह ही दो विपरीत त्रिभुजों के मेल से बनाया गया है और उसे एक ओर झुका हुआ दिखाया गया है। कुम्हार चावल की मदिरा पीने के लिए बर्तन ला रहा है। एक स्थानीय मुखिया घोड़ी पर चढ़कर आ रहा है और उसके पीछे घोड़ी का बच्चा आ रहा है। वह शादी में दावत के लिए दो बकरियाँ ला रहा है। दो आदमी देवता के नौकरों द्वारा मारे गए सांभर ला रहे हैं। वनाधिकारी भी अपने परिवार सहित समारोह में उपस्थित हुआ है और वे सब समानांतर रेखाओं से दर्शाई गई कुर्सियों पर विराजमान हैं। जलीयसुम के कुत्ते टाइगर ने एक अनचाहे मेहमान को पकड़ लिया है और एक दूसरे कुत्ते ने एक गिरगिट पर आक्रमण कर दिया है और एक आदमी अपने कमान से उस पर तीर चला रहा है।

लहरदार या टेढ़ी रेखाओं या बिंदियों जैसे सामान्य चिह्नों से चित्रांकन की ग्राफिक शोभा तो बढ़ती ही है, साथ ही वे बालों, पंखों, पत्तियों आदि के आनुष्ठानिक प्रतीक भी होते हैं। इस प्रकार इन निश्चित तत्वों के संयोजन के साथ और भी अनेक सूचक-संकेत होते हैं जिनसे चित्रात्मक गद्य-पद्य में सपनों तथा लोकथाओं को विस्तार से सफलतापूर्वक अभिव्यक्त किया जाता है। यह सब इन आकर्षक डिज़ाइनों की सादगी में दृष्टिगोचर होता है।

पिठोरा-भीलों की चित्रकारी : एक स्थिति अध्ययन

पिठोरा चित्रकारी गुजरात और मध्य प्रदेश के राठवा, भील और नायक जनजातियों के लिए, दीवारों पर बने रंगीन चित्रों के अलावा भी और बहुत कुछ हैं। वे परिवार या समुदाय में शादी-विवाह, बच्चे के जन्म जैसे समारोहों तथा तीज-त्योहारों के आगमन की सूचना देती हैं। इन आनंदोत्सवों की खुशी एवं खुशहाली पिठोरा चित्रकारियों में उनके रंगों और सजीव आकृतियों में दृष्टिगोचर होती है। घरों की दीवारों पर की जाने वाली इन चित्रकारियों के बारे में ऐसा सोचा जाता है कि इनसे घरवालों का भाग्य चमक जाएगा और उनके जीवन से गरीबी दूर भाग जाएगी।

इन चित्रकारियों में अधिकतर बाबा पिठोरा और पिठोरी देवी की शादी के जुलूस का चित्रण किया जाता है। पिठोरा बाबा और पिठोरी देवी जनजातीय लोगों द्वारा पूजे जाने वाले देवी-देवता हैं। हिंदू पौराणिक कथाओं में उल्लिखित अन्य देवी-देवताओं, जीव-जंतुओं और चरित्रों को भी इन चित्रकारियों में शामिल किया जाता है। इन चित्रों को बनाने की संपूर्ण प्रक्रिया परंपरा तथा संस्कृति द्वारा प्रेरित कला पद्धति को प्रतिबिंबित करते हुए उसकी याद को तरोताज़ा बना देती है। इसके अलावा, ये चित्र जनसाधारण के दैनिक जीवन को भी चित्रित करते हैं। इसलिए,

© NCERT not to be republished

इन चित्रों में किसानों, स्त्रियों, पशुओं और जीव-जंतुओं तथा अन्य वस्तुओं को भी प्रस्तुत किया जाता है।

चित्रकारी की सामग्रियाँ रंजक द्रव्यों को दूध और महुआ के पेड़ से बनी शराब के साथ मिलाकर तैयार की जाती हैं। पिठोरा चित्रों में धार्मिक अनुष्ठान की पद्धति अधिक और कलात्मकता कम देखने को मिलती है। पिठोरा चित्रकारी के लिए घर की पहली दीवार को सही स्थान माना जाता है। जिन दीवारों पर ये चित्रकारियाँ की जानी होती हैं, उन्हें सर्वप्रथम गाय के गोबर और मिट्टी के गाढ़े मिश्रण से पोता जाता है। यह पुताई का कार्य परिवार की कुँवारी कन्याओं द्वारा किया जाता है। फिर इस पर खड़िया मिट्टी की परत चढ़ाई जाती है, इस कार्य को लीपना कहते हैं। लीपने के बाद, चित्रकारी का कार्य पुरुषों द्वारा किया जाता है। जबकि अल्पना, कोलम, वरली या मधुबनी चित्रकारी बनाने का काम स्त्रियों द्वारा ही किया जाता है।

चित्र 5.14 भीलों द्वारा बनाया गया एक चित्र

हाशिये पर दिए गए पिठोरा चित्र का अवलोकन करें। यह एक आयताकार अहाते के भीतर चित्रित की जाती है जिसके बीच में नीचे की ओर एक दरवाज़ा-सा होता है। भीलों के जनजातीय जीवन से संबंधित किसी भी चीज़ को इस आयताकार चित्रकारी में शामिल किया जा सकता है; जैसे-बाघ, हाथी, बकरे, ऊँट, बरगद के पेड़, कीड़े-मकोड़े, बिच्छू, गिरगिट, मधुमक्खी के छत्ते, देवी-देवता और पौराणिक चरित्र, खेत जोतता हुआ किसान, मक्खन बनाती हुई स्त्रियाँ और शिकार करते हुए शिकारी, आदि। इन सब में प्रमुख हैं बाबा पिठोरा और देवी-देवताओं के घोड़ों के चित्र जो बड़े आकार के होते हैं और बीचोंबीच चित्रित किए जाते हैं। बाबा पिठोरा तथा देवी-देवताओं को या तो घोड़े पर चढ़े हुए दिखाया जाता है अथवा घोड़ों के रूप में ही चित्रित किया जाता है। घोड़ा बल-वीर्य और उर्वरता का द्योतक होता है, जिसे भील जाति सबसे अधिक महत्व देती है।

तांत्रिक डिज़ाइन पद्धतियाँ

तंत्र भारत में प्रचलित धार्मिक पद्धतियों की एक महत्वपूर्ण परंपरा है। हालांकि तंत्र क्या है और उसका मूलस्रोत क्या है, इस विषय में विद्वानों की राय एक जैसी नहीं है। तंत्र का सबसे स्पष्ट और प्रचलित पहलू यह है कि यह ग्राफिक आकृतियों के एक अन्य प्रकार 'यंत्र' से जुड़ा है।

यंत्र तंत्र-परंपरा के तीन आवश्यक तत्व में से एक है। ये तत्व हैं : मंत्र अर्थात ऐसे शब्द जिन्हें जादू-टोना माना जाता है, यंत्र यानी ग्राफिक आकृति और तंत्र यानी वास्तविक क्रिया; जैसे-ध्यान, भेंट, चढ़ावा आदि। तांत्रिक (तंत्र की क्रिया करने वाला व्यक्ति) अपना पूरा ध्यान यंत्र पर केंद्रित कर देता है और उसी का चिंतन-मनन करता है। ऐसा समझा जाता है कि ऐसा करने से उसे अलौकिक शक्तियाँ और अनुभव प्राप्त हो जाएँगे। चूँकि तंत्र का अभ्यास अक्सर पढ़े-लिखे लोगों द्वारा किया जाता है इसलिए ऐसा साहित्य बड़ी मात्रा में उपलब्ध है जिसमें

© NCERT not to be republished

यंत्र की आकृतियों के प्रत्येक तत्व का सैद्धांतिक अर्थ समझाया गया है। इस साहित्य में बताया गया है कि तंत्र संबंधी तत्वमीमांसा इन रेखाचित्रों में किस प्रकार प्रतिपादित की गई है। लेकिन इस परंपरा का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि इनके बारे में यह विश्वास किया जाता है कि ये यंत्र अपना वांछित प्रभाव अवश्य दिखलाते हैं, भले ही इन पर ध्यान लगाने वाला व्यक्ति उनके अर्थ को जानता हो या नहीं।

चित्र 5.15 तंत्र डिज़ाइन

मंडल

हिंदू और बौद्ध तंत्रवाद में धार्मिक कृत्यों को संपन्न करने के लिए एक प्रतीकात्मक डिज़ाइन का इस्तेमाल किया जाता है। ऐसी डिज़ाइन का प्रयोग ध्यान और चिंतन के साधन के रूप में भी किया जाता है। इस प्रयोजन के लिए एक डिज़ाइन तैयार किया जाता है जिसे मंडल कहते हैं।

मंडल की संकल्पना वैदिक युग में भी प्रचलित थी। ऋग्वेद के सभी सूक्तों को दस वर्गों में विभाजित किया गया है जिन्हें मंडल कहते हैं। मंडल चक्रीय गुण-धर्म का सूचक होता है। वैदिक काल में वेदों के सूक्तों को चक्रीय रीति से उच्चारित करने की परंपरा थी। उदाहरण के लिए, ऋग्वेद के दसवें मंडल में एक सौ इक्यानवे सूक्त हैं। अत: इनका उच्चारण करने के लिए 191 वैदिक ऋषि (पुरोहित) मंडल बनाकर (गोलाकार घेरे में) बैठते थे। सर्वप्रथम पहला पुरोहित इस मंडल के पहले सूक्त का उच्चारण करता था। फिर 96वाँ पुरोहित दूसरा सूक्त बोलता था। इसके बाद दूसरा पुरोहित तीसरे सूक्त का उच्चारण करता था और चौथा सूक्त 97वाँ पुरोहित उच्चारित करता था। इस प्रकार बारी-बारी से मंडल के सभी सूक्तों का एक-एक कर सभी 191 पुरोहितों द्वारा उच्च स्वर में बोला जाता था। इस व्याख्या में दो रोचक ग्राफिक नमूने देखने को मिलते हैं। पहला, सम्भवत: एक मंडल यानी गोलाकार घेरा बनाकर बैठना प्रतीकात्मक रूप से संचार के घटनाक्रम के चक्रीय स्वरूप का द्योतक होता है। और दूसरा, मंत्रोच्चार का स्वरूप व्यासीय रूप से विपरीत अनुक्रम को दर्शाता है जिससे यह प्रकट होता है कि मंडल व्यासीय रूप से विपरीत बिंदुओं को जोड़ने से बनता है। इस सम्पूर्ण कर्मकांड का प्रतीकात्मक अर्थ क्या है? आज किसी को सही रूप में ज्ञात नहीं है किन्तु यह तो स्पष्ट ही है कि इस चक्रीय मंत्रोच्चार की परंपरा के कारण वैदिक सूक्तों के वर्गीकरण की प्रणाली को 'मंडल' नाम दिया गया था।

मंडल में बुनियादी तौर पर सम्पूर्ण विश्व का निरूपण होता है, यह एक ऐसा अभिषिक्त या पवित्र किया गया क्षेत्र है जो देवी-देवताओं को स्थापित करने के लिए निर्धारित होता है और विश्व की सभी शक्तियों को एकत्रित करने का स्थल होता है। मनुष्य (सूक्ष्म ब्रह्मांड) मानसिक रूप से मंडल में प्रवेश करके उसके केंद्र की ओर बढ़ते हुए, विघटन और पुनर्घटन की ब्रह्मांडीय प्रक्रियाओं के जरिये सादृश्य के आधार पर मार्गदर्शन प्राप्त करता है।

मंडल प्रतीकों से परिपूर्ण होते हैं। उनकी यह प्रतीकात्मकता बौद्धधर्म की

© NCERT not to be republished

चित्र 5.16 एक मंडल

शिक्षाओं और परंपराओं के विभिन्न पहलुओं की द्योतक होती है। इसीलिए मंडल के निर्माण को एक पवित्र और धार्मिक कार्य माना जाता है जिसके द्वारा बुद्ध के उपदेशों तथा शिक्षाओं का प्रचार किया जाता है। तांत्रिक (तिब्बती) बौद्धधर्म में मंडल को धार्मिक कला के कार्य माना जाता है। मंडल शब्द संस्कृत भाषा से आया है जिसका सामान्य अर्थ है वृत्त यानी गोल घेरा। और मंडल प्राथमिक रूप से उनके संकेंद्री वृत्तों और अन्य ज्यामितीय आकृतियों से अलग पहचाने जाते हैं। मंडल अपनी ज्यामितीय आकृतियों के अलावा और भी बहुत कुछ महत्व रखते हैं। वे प्रतीकात्मकता की दृष्टि से बहुत समृद्ध और अर्थ की दृष्टि से बहुत पवित्र होते हैं। मंडल को आमतौर पर रँगी हुई बालू को सावधानी से स्थापित करके तैयार किया जाता है और इसीलिए तिब्बती भाषा में इसे 'दुल-त्सोन-क्यिल-खोर' यानी रंगीन चूर्णों (पाउडरों) का मंडल कहा जाता है। आगे चलकर मंडल की संकल्पना का प्रयोग अनेक धार्मिक एवं सांस्कृतिक क्रियाओं में किया जाने लगा। चीन, जापान और तिब्बत में काँसे और पत्थर के मंडल भी बनाए जाते हैं जो त्रिआयामी होते हैं।

मंडल का निर्माण

मंडल बनाने की प्रक्रिया एक धार्मिक कर्मकांड के रूप में होती है जिसमें चिंतन-मनन और ध्यान की कठोर क्रियाएँ शामिल होती हैं। इसे संपन्न करने में कई दिनों बल्कि सप्ताहों का समय भी लग सकता है। किसी मंडल के निर्माण कार्य में भाग लेने से पहले, बौद्ध भिक्षुकों को काफी लंबे समय तक कला और दर्शनशास्त्रीय अध्ययन करना होता है और यह अवधि तीन साल तक की भी हो सकती है। परंपरा के अनुसार, एक अकेले मंडल पर एक साथ चार भिक्षुक कार्य करते हैं। मंडल को चार बराबर के भागों में बाँटा जाता है और प्रत्येक भिक्षुक को एक सहायक सौंपा जाता है जो रंग भरने के काम में सहायता करता है और मुख्य

© NCERT not to be republished

भिक्षुक विस्तृत रूपरेखा पर अपना काम जारी रखता है।

मंडल निर्माण का कार्य केंद्र से बाहर की ओर बढ़ते हुए किया जाता है। इसके लिए सर्वप्रथम वृत्त के बीचोंबीच एक बिंदु लगाया जाता है। केंद्रीय बिंदु लगाने के बाद, मंडल को किसी देव-विशेष को समर्पित किया जाता है। इस बिंदु पर आमतौर पर इस देवता की आकृति चित्रित की जाती है, हालांकि कुछ मंडल शुद्ध रूप से ज्यामितीय ही होते हैं।

फिर केंद्रबिंदु से चारों दिशाओं की ओर रेखाएँ खींच दी जाती हैं, जिससे त्रिभुजाकार ज्यामितीय आकृतियाँ बन जाती हैं। फिर उन रेखाओं की सहायता से एक वर्गाकार प्रासाद अथवा महल बनाया जाता है जिसके चार द्वार होते हैं। इस स्थिति तक आते-आते भिक्षुक आमतौर पर अपने-अपने चतुर्थांश तक ही सीमित रहते हैं। भीतरी वर्ग से, भिक्षुक बाहर आते हैं और संकेंद्री वृत्तों की शृंखला की ओर बढ़ते हैं और आगे-पीछे के क्रम से मंडल के चारों ओर घूमते हुए काम करते हैं। जब तक प्रत्येक अनुभाग का काम पूरा नहीं हो जाता वे इसी तरह बाहर की ओर बढ़ते हुए काम करते रहते हैं। इससे मंडल की रचना में निश्चित रूप से संतुलन बना रहता है।

छत्र

अंतहीन गाँठें

चित्र 5.17 बौद्ध धर्म में ग्राफिक प्रतीक

मंडल के बीच में स्थित वर्गाकार संरचना अधिष्ठाता देवताओं के लिए प्रासाद और बुद्ध के सारतत्व (essence) को रखने के लिए मंदिर का काम देती है। वर्गाकार मंदिर के चारों अलंकृत द्वार अनेक भावों एवं विचारों के प्रतीक होते हैं; जैसे-

- चार असीम भाव : दया, करुणा, सहानुभूति और धृति (धैर्य)।
- चार दिशाएँ : पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण।

देवताओं की आकृतियाँ वर्गाकार प्रासाद या मंदिर के भीतर बनाई जाती हैं, ये आमतौर पर पाँच ध्यानी बुद्धों (महाप्रज्ञ बुद्धों) की होती हैं। इन देवताओं की प्रतिमाएँ प्रतीकात्मकता से परिपूर्ण होती हैं। ध्यानी बुद्धों में से प्रत्येक बुद्ध एक दिशा (केंद्र, दक्षिण, उत्तर, पूर्व और पश्चिम), ब्रह्मांड तत्व (जैसे रूप और चेतना), पार्थिव तत्व (वायु, जल, पृथ्वी, अग्नि और आकाश), और एक खास तरह की प्रज्ञा का प्रतीक होता है। प्रत्येक बुद्ध को एक खास बुराई; जैसे-अज्ञान, ईर्ष्या या घृणा आदि को वश में करने की शक्ति प्राप्त है। पाँचों ध्यानी बुद्ध आमतौर पर शक्ल-सूरत में एक जैसे होते हैं लेकिन आकृति की दृष्टि से वे किसी खास रंग, मुद्रा (हाथ का संकेत) और पशु के साथ निरूपित किए जाते हैं।

वर्गाकार मंदिर के बाहर अनेक संकेंद्री वृत्त बने होते हैं। सबसे बाहर का वृत्त आमतौर पर सुंदर कुंडलित कृति से सजाया जाता है जो आग के घेरे जैसा दिखाई देता है। यह अग्निचक्र मानव के उन विभिन्न जन्म-रूपों का प्रतीक होता है, जिनसे होकर वह भीतर के पवित्र क्षेत्र (निर्वाण) में पहुँचता है। यह अज्ञान के जलने-मिटने का द्योतक है। भीतर की ओर का अगला वृत्त वज्रपात का चक्र होता है जो अविनाशिता और प्रदीप्ति का सूचक है। इसके बाद का चक्र आठ समाधि क्षेत्रों का है जो मानवीय चेतना के उन आठ पहलुओं को दर्शाते हैं जो किसी व्यक्ति को जन्म-मरण के बंधन में बाँधे रखते हैं। अंततः सबसे भीतर का चक्र कमल की पंखुड़ियों का बना होता है जो धार्मिक पुनर्जन्म का संकेत देता है।

© NCERT not to be republished

सामान्य लक्षण

सामान्य रूप से संपूर्ण विश्व में और विशेष रूप से भारत में पाए जाने वाले स्वदेशी ग्राफिक डिज़ाइनों के सामान्य लक्षण निम्नलिखित हैं।

- ग्राफिक डिज़ाइन के बारे में जादुई/धार्मिक/अलौकिक विश्वास (ग्राफिक डिज़ाइनों को अलौकिक शक्तियों वाला माना जाता है)।
- परंपरा का पालन करने वालों में अनुभवातीत/अलौकिक के प्रति अनुक्रिया।
- डिज़ाइन का धार्मिक क्रिया संबंधी उपयोग और उसका धार्मिक उद्गम।
- डिज़ाइन का धार्मिक क्रियाओं से संबंध
- रेखांकन के लिए प्राकृतिक या प्रकृति-अनुकूल उपकरणों तथा सामग्रियों का उपयोग और उसके परिणामस्वरूप उसके रूप (यानी रेखाओं, आकृति-रूपों तथा रंगों पर और उनके प्रयोग की तकनीक, शैली और संरचना) पर पर्यावरणिक पारिस्थितिक प्रभाव।

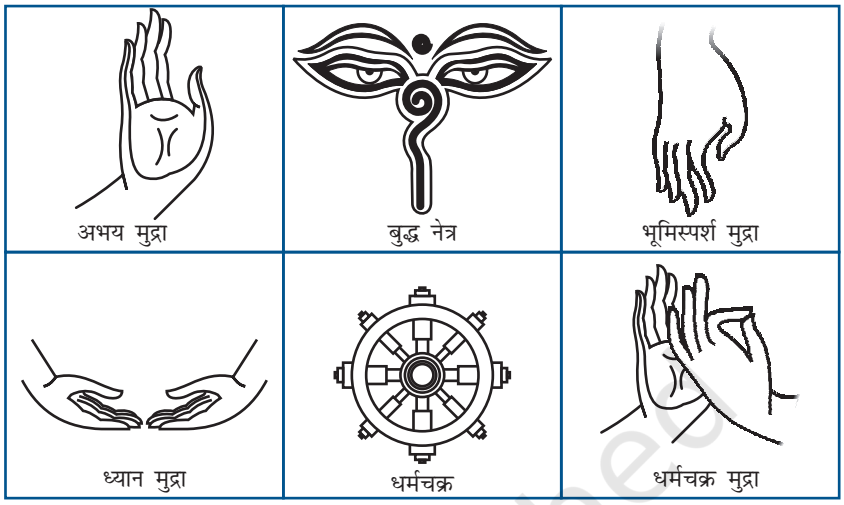

चित्र 5.18 ग्राफिक डिज़ाइनों में मूलभाव के रूप में प्रयुक्त बौद्ध प्रतीक।

मंडल के केंद्र में मुख्य देवता की आकृति होती है जो ऊपर वर्णित केंद्रीय बिंदु के ऊपर रखी जाती है। चूँकि केंद्रीय बिंदु का कोई आयाम नहीं होता इसलिए वह विश्व के बीज या केंद्र का द्योतक होता है।

यद्यपि कुछ मंडल रंग आदि से चित्रित होते हैं और ध्यान या चिंतन-मनन की वस्तु के रूप में लंबे समय तक उनका उपयोग होता रहता है, मगर परंपरागत तिब्बती धूलिनिर्मित मंडल जब पूरी तरह तैयार कर लिया जाता है तो उसे जानबूझ कर नष्ट कर दिया जाता है। उसकी धूलि को पास की किसी जलधारा या नदी में बहा दिया जाता है ताकि उसकी सकारात्मक शक्तियाँ सब में बँट जाएँ। जल में प्रवाहित करने की यह धार्मिक क्रिया इसके निर्माण तथा अन्य सभी लोगों को इस सत्य की याद दिलाती है कि विश्व में सभी चीज़ें नश्वर हैं और कोई भी चीज़ स्थायी नहीं होती-यह नश्वरता बुद्ध की शिक्षाओं का मूलमंत्र है।

इन जीवंत परंपराओं के अलावा कुछ लुप्त परंपराएँ भी हैं जो पुरातात्विक स्रोतों में और कुछ ऐसे प्रलेखों में पाई जा सकती हैं जो अब किसी समुदाय में प्रयोग में नहीं हैं। लेकिन ग्राफिक डिज़ाइनों का विशुद्ध सौंदर्यशास्त्रीय, कलात्मक, व सज्जात्मक पहलू आज भी इन स्वदेशी परंपराओं में पूर्ण रूप से अनुपस्थित नहीं है। वस्तुत: ग्राफिक डिज़ाइन की कुछ परंपराएँ, जो आरंभ में किसी धार्मिक क्रिया के संदर्भ में प्रयोग करने के लिए धार्मिक परंपराओं के रूप में शुरू हुई थीं, ये धीरे-धीर आगे चलकर कलात्मक और अलंकरणात्मक पद्धतियों के रूप में बदल गई हैं।

© NCERT not to be republished

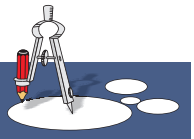

परियोजना

1. वस्तुएँ भिन्न-भिन्न संदर्भों में प्रयोग के अनुसार अपना अर्थ बदल लेती हैं, इस विषय पर एक परियोजना तैयार करें। समस्त परियोजना एक प्रलेखीय रूप में होनी चाहिए जिसमें रेखाचित्रों, तसवीरों या छात्रों द्वारा लिए गए फोटोग्राफों का प्रयोग किया गया हो। अपनी फाइलें प्रस्तुत करने के लिए दिलचस्प तरीकों का चयन करें।
2. आपके निकटवर्ती परिवेश में दीवारों को सजाने के लिए ऐसी ही किन-किन पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है और उनके उद्देश्य क्या हैं?

प्रश्नावली

1. कोलम और अल्पना में क्या अंतर है? रेखाचित्र बनाकर स्पष्ट करें।
2. किसी अल्पना के सांस्कृतिक पहलू के बारे में 10 पंक्तियाँ लिखें।
3. किस डिज़ाइन पद्धति का रूप स्त्रियोचित पहचान लिए हुए है? स्पष्ट करें।
4. सावरा के संदर्भ में जनजातीय कला के महत्व का वर्णन करें।
5. तंत्र भारत में धार्मिक पद्धति की सर्वाधिक महत्वपूर्ण परंपराओं में से एक है। स्पष्ट करें।
6. मंडल बनाने की प्रक्रिया किस रूप में एक श्रमसाध्य कार्य है?

प्रायोगिक

1. अपने मोहल्ले या बस्ती में प्रचलित डिज़ाइन पद्धतियों का पता लगाएँ और उनका अध्ययन करें और उनकी विशेषताओं तथा विषमताओं एवं विविधताओं को लेखबद्ध करें।
2. अपने आसपास के परिवेश में मौजूद फर्श की सजावटों के विविध प्रकारों का पता लगाएँ और उनकी चित्रात्मक विशेषताओं तथा सूक्ष्म अंतरों का वर्णन करें।
3. 5×15 cm के आकार में एक पद्धति विशेष की रंगीन डिज़ाइन तैयार करें।
4. अपनी पसंद की कुछ उपयोगी वस्तुओं को चुनें और ऐसे पाँच तरीके बताएँ जिनमें उनका प्रस्तुतीकरण किया जा सकता है।

© NCERT not to be republished

ग्राफ़िकीय संच

सूची

लिपि का विकास

प्रतिलिपि मुद्रण के विकास की अवस्थाएँ

धातु की चल टाइप से डिज़िटल इमेजिंग तक

इकाई III

ग्राफ़िकीय संचार की तकनीकें

ग्राफिक डिज़ाइन की सरल परिभाषा यह है कि यह विभिन्न तकनीकों और माध्यमों के द्वारा विकास और विचारों को प्रवर्तित करने के लिए संचार का प्रयोग है। अधिक स्पष्ट रूप से कहें तो यह सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए दृश्य संचार के सौंदर्यपरक सिद्धांतों, प्रक्रियाओं और कार्य नीतियों को व्यवस्थित रूप से कार्यान्वित करने की पद्धति है। सूचना के प्रसार द्वारा समस्या का समाधान खोजने के लिए प्रयोग में लाई गई संचार की विभिन्नता और संकल्पनात्मक लचीलापन संचार की विशेषताएँ हैं।

NCERT not to be republished

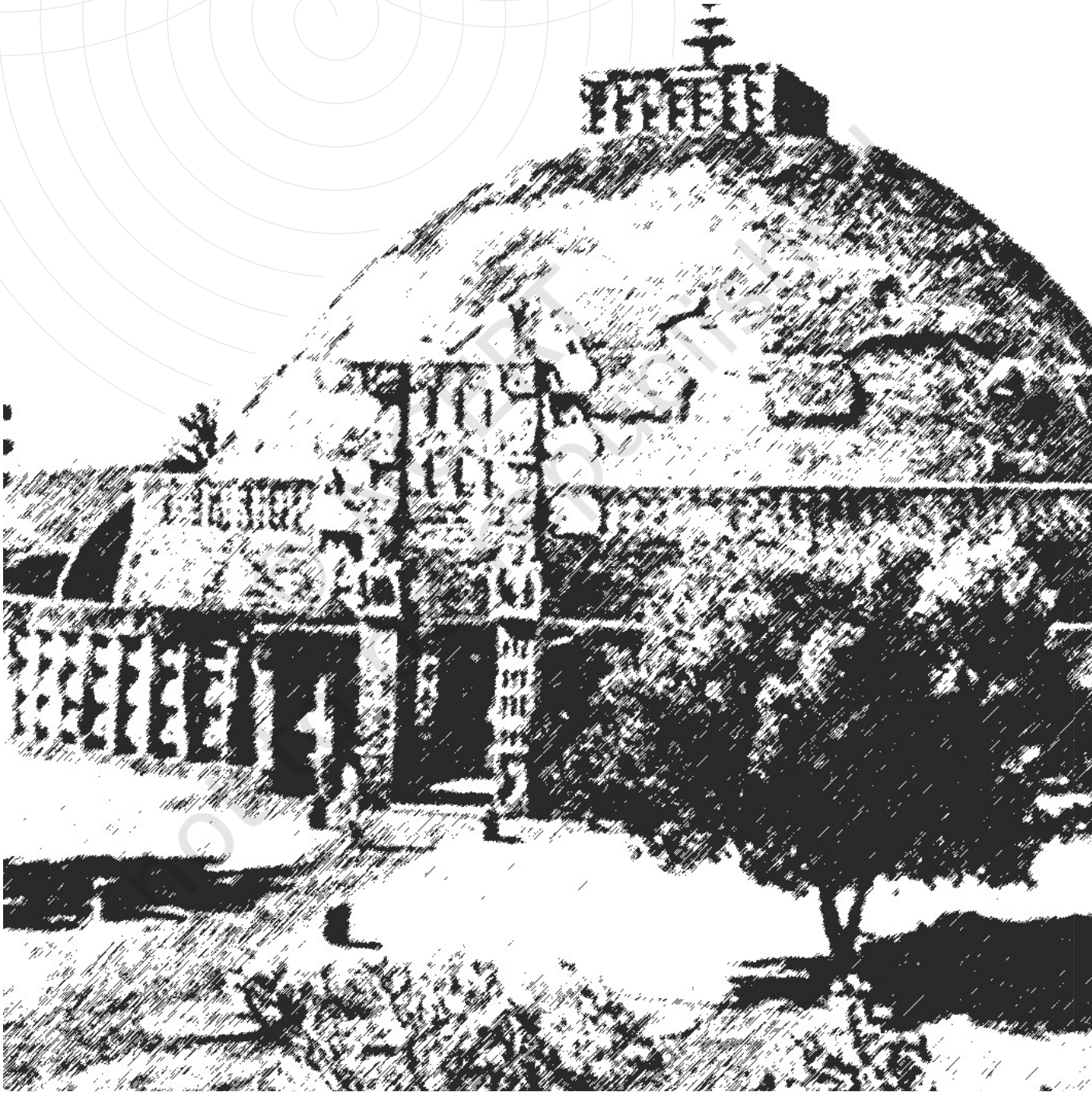

6
अध्याय

लिपि का विकास

सभ्यता के इतिहास में सूचना प्राप्त करने के लिए पुस्तकें, पत्रिकाएँ और अन्य साधन हाल में विकसित हुए हैं। प्रागैतिहासिक मानव संसार के ऐसे दृश्य साधनों से कई सदियों तक वंचित रहा था। फिर भी, मनुष्य का मन-मस्तिष्क उसे अपने आस-पास के परिवेश के बारे में जिज्ञासु बनाए रखता था। उसकी उस जिज्ञासा ने उसे दूसरे के साथ आचार-व्यवहार करने, विचारों का आदान-प्रदान करने और उन्हें अपने मन की बात कहने के तरीके खोजने को मजबूर किया। इस आकांक्षा के फलस्वरूप विकसित संकेत भाषा संभवतः संचार या अभिव्यक्ति का पहला तरीका था जिसे आदिकालीन मानव ने अपनाया था। लेकिन संकेत भाषा मनोभावों तथा विचारों की अभिव्यक्ति के लिए पर्याप्त नहीं थी। मनुष्य ने अपने विचारों के अभिलेखन तथा परिरक्षण के लिए कोई और तरीका खोजना चाहा। उसके ये प्रारंभिक प्रयत्न अपरिपक्व और अपरिष्कृत थे और वे विस्तृत सूचना देने में समर्थ नहीं थे।

अतः आगे चलकर, स्मृति सहायकों और चित्र-लेखन का विकास हुआ। इससे मनुष्य अपने कार्यों तथा अभिव्यक्तियों का संकेत भाषा की तुलना में, कहीं अधिक सही रूप प्रस्तुत करने में समर्थ हो गया। अतिप्राचीन काल में मनुष्यों के अनुभव और उनकी ऐतिहासिक तथा धार्मिक परंपराएँ आख्यानकर्ताओं द्वारा मौखिक रूप से पीढ़ी-दर-पीढ़ी संप्रेषित की जाती रहीं। लेकिन समाज पूर्ण रूप से किसी एक मनुष्य की याददाश्त पर निर्भर रहने को तैयार नहीं था। क्योंकि उसने जल्दी ही जान लिया था कि भूलना मनुष्य का स्वभाव है इसलिए वह जल्दी ही बातों को भूल जाता है। जब कोई कहानी बार-बार कही जाती है तो वह मूल कहानी की तुलना में काफी बदल जाती है। धार्मिक गाथाओं तथा महत्वपूर्ण कथाओं में ऐसा बदलाव कभी नहीं आना चाहिए, नहीं तो उनका महत्व कम हो जाएगा। इसी आवश्यकता को देखते हुए, अर्थ को अधिक सुनिश्चित करने के

संगौरा (स्तूप)

बौद्ध ग्रंथों में लिखा है कि बुद्ध के सिद्धांतों को सन् 88 ई. पू. में श्रीलंका में स्वर्णपत्रों पर उत्कीर्णित किया गया था और भारत में सम्राट कनिष्क के शासन काल (ईसा की पहली सदी) के दौरान मथुरा में ताम्रपत्रों पर अंकित किया गया था। आज वे सब लुप्त हो चुके हैं। पर बहुत आरंभिक काल से ही बौद्ध मत की शिक्षाओं से अंकित सोने-चाँदी की कुछ ऐसी वस्तुएँ आज भी पाई जाती हैं जो शायद स्तूपों में रखी गई थीं या मठों अथवा ऐसे ही धार्मिक प्रतिष्ठानों की नींव में गाड़ी गई थीं।

© NCERT not to be republished

चित्र 6.1 अजीत गढ़

उद्देश्य से सही क्रम घटना संबंधी विचारों को याद करने के लिए चित्र आरेखों का प्रयोग किया जाने लगा।

किसी महत्वपूर्ण घटना या अनुभव की याद में शंक्वाकार स्मारक बनाना एक पुराना रिवाज रहा है। पत्थर या शिलाखंडों को इकट्ठा करके उन्हें उन लोगों द्वारा बनाया जाता था जो उस घटना-विशेष को भली-भाँति जानते थे। इसका उद्देश्य यह था कि जनजाति की आने वाली पीढ़ियाँ भी उस स्मारक के माध्यम से उस घटना को याद रखें। ऐसे स्मारक समय-समय पर बनाए जाते रहे हैं। उदाहरण के लिए, उत्तरी दिल्ली में अजीत गढ़ का स्मारक तत्कालीन ब्रिटिश सरकार द्वारा उन सिपाहियों की याद में बनाया गया था जो 1857 के प्रथम भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में शहीद हुए थे। बौद्ध स्तूप और ताजमहल भी स्मारक के उदाहरण हैं। आधुनिक काल में भी ऐतिहासिक या युगान्तरकारी घटनाओं की याद दिलाने के लिए अक्सर ऐसे स्मारक बनाए जाते हैं।

जैसे-जैसे जनजातियाँ बड़ी होती गईं और उनकी संख्या भी बढ़ती गई, अपनी व्यक्तिगत संपत्ति पर कोई पहचान चिह्न बनाना भी ज़रूरी हो गया। इसी तरह, मृतकों की समाधियों को चिह्नित करना भी ज़रूरी समझा जाने लगा जिससे कि उन्हें और अधिक लंबे समय तक याद रखा जा सके। गाय-बैल जैसी व्यक्तिगत संपत्ति पर भी उसके मालिक के निशान लगाए जाने लगे। प्रारम्भ में तो ये निशान भद्दे ही होते थे पर आगे चल कर इन्होंने भावचित्र या भावलेख (ideoagram–ब्रांड या ट्रेडमार्क) होने का रूप ले लिया। आज के व्यापार-चिह्न उसी आरंभिक प्रणाली के विकसित रूप हैं। समाधियों, भूखंडों, स्तंभों, चौकियों आदि में पत्थर या धातु पर अंकित लेख लगाए जाने लगे। जनजाति के निवास स्थानों एवं शिविरों के नक्शे चित्रमय शैली में लिखे जाने लगे। ज्यों-ज्यों उनकी विशिष्टताएँ बढ़ती गईं त्यों-त्यों उनके विस्तार को छोड़कर चित्रों व प्रतीकों का स्थान आकृतियों ने ले लिया।

ग्राफिक कला की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि छपाई या मुद्रण की यांत्रिक प्रक्रिया के द्वारा बड़ी तेज़ी से उसकी एक-जैसी अनेक प्रतियाँ तैयार की जा सकती हैं। इस व्याख्या को यदि और आगे बढ़ाया जाए तो इसके अन्तर्गत औद्योगिक काल के पूर्व की वे सभी छपाइयाँ आ जाती हैं जो अनेक प्रकार की उभरी सतह से छाप लगाने (रिलीफ प्रिंट) में दृष्टिगोचर होती हैं। ये छपाइयाँ

चित्र 6.2 वृष मुद्राएँ

© NCERT not to be republished

मुद्राओं, सिक्कों और इसी प्रयोजन के लिए ढाली गई सतहों पर की जाती थीं। ऐसी मुद्राओं आदि का प्रयोग प्राचीनतम भारतीय सभ्यता में किया गया जो विशेष रूप से सिंधुघाटी के मोहनजोदड़ो और हड़प्पा नामक स्थानों पर पाई गई। आगे चलकर, अक्षरीय चिह्नों को तसवीरों से अलग कर दिया गया।

इन युगों के दौरान, चित्राक्षरों की आकृति से लेखन कला का विकास हुआ और फिर आगे चल कर उत्कीर्ण लेखों की आकृतियों को सुलेखन कार्य से प्रेरणा मिली। ऐसा प्रतीत होता है कि एक तरह की चक्रीय प्रक्रिया चलती रही। इस प्रक्रिया की पुनरावृत्ति उस समय भी होती है जब हम सरलता से याद करने के लिए वर्णमाला के किसी संकेत का ध्वनिक अर्थ किसी बच्चे को समझाते हैं। यह पद्धति समान रूप से सर्वत्र अपनाई जा रही है, केवल इसलिए कि आकृति अक्सर विचार से पहले दिमाग में आती है। वस्तुत: भारत में 'एल्फाबेट' को वर्णमाला यानी रंगों की माला कहा जाता है और उसका यह नाम रंगीन मुहरों/मुद्राओं की छापों के आधार पर रखा गया है जिनका प्रयोग प्राचीन भारत में शिक्षा देने के लिए किया जाता था।

चित्र 6.3 कुतुबमीनार के पास स्थित अशोक स्तंभ पर उत्कीर्ण लेख

ध्वनि प्रतीक आगे चलकर रूप में अधिकाधिक सरल होते गए। बदलते हुए अक्षर शनै: शनै: ध्वनि प्रतीकों की एक पूर्ण माला के रूप में विकसित हो गए, जिसे अब वर्णमाला कहा जाता है।

ईसा पूर्व पाँचवीं सदी तक आते-आते, प्राचीन भारतीय वैयाकरणों ने संस्कृत भाषा की ध्वनिक/स्वनिक प्रणाली का वैज्ञानिक रूप से विश्लेषण कर लिया था। उन्होंने अपनी वर्णमाला के अक्षरों/वर्णों को एक पूर्ण तार्किक प्रणाली में यानी व्यंजनों को स्वरों के पहले व्यवस्थित कर लिया था। अक्षरों को उनके उच्चारण स्थान के आधार पर कई वर्गों में विभाजित कर लिया था; जैसे-तालव्य वर्ग यानी वह ध्वनि जिसके उच्चारण में जिह्वा मुँह में कठोर तालु तक या उसके पास तक उठती है; कंठ्य वर्ग यानी घोष तंत्रिकाओं से उच्चरित ध्वनियाँ; मूर्धन्य वर्ग (जिनके उच्चारण में जीभ का सिरा ऊपर उठकर थोड़ा पीछे की ओर मुड़ता है); दंत्य वर्ग (जिनके उच्चारण में जीभ का सिरा आगे के ऊपरी दाँतों से छूता है या उनके निचले हिस्से तक पहुँचता है); औष्ठ्य वर्ग (जिनका उच्चारण करने में दोनो होंठ आपस में मिलते हैं, जैसे प, फ, ब)। संभवत: उन्हें यह सफलता लेखन की सहायता के बिना ही मिल गई थी, इसलिए लिखित वर्णमाला की शुरूआत होने पर उन्हें ध्वनियों से प्रतीकों का मेल बैठाने या संबंध जोड़ने में कोई कठिनाई नहीं हुई। सम्राट अशोक के शिलालेखों आदि में ईसा पूर्व तीसरी सदी में प्रयुक्त ब्राह्मी लिपि (देव लिपि) उपमहाद्वीप में सर्वत्र पाई जाती है। भारत में प्रचलित लगभग सभी भारतीय लिपियाँ ब्राह्मी लिपि से ही विकसित हुई हैं। मध्य एशिया, तिब्बत और दक्षिण-पूर्व एशिया में प्रचलित उसकी उपशाखाएँ, खरोष्ठी को छोड़कर, अरामाइक लिपि से निकली थीं जो उत्तर-पश्चिम भारत में कुछ सदियों तक प्रयोग में लाई जाती रही थीं।

चित्र 6.4 भारतीय वर्णमाला

भारत में पुस्तक की आरंभिक संकल्पना किसी पेड़ की छाल के चपटे टुकड़ों या पत्तों के संग्रह के रूप में की जाती थी जिसे आवरणों के बीच किसी डोरी या धागे से

© NCERT not to be republished

चित्र 6.5 एक धातु-लेख

पिरोया जाता था। इसी प्रकार, दक्षिण भारत की सभी पांडुलिपियाँ पत्तों पर लिखी हुई होती थीं। लिखने के लिए पहले इन पत्तों को लोहे की पैनी कलम से उत्कीर्णित किया जाता था। इस प्रकार उत्कीर्ण किए गए पत्तों पर आमतौर पर काजल से बनी हुई स्याही पोती जाती थी, फिर उन पत्तों को धूल से साफ कर लिया जाता था। इस प्रक्रिया में उत्कीर्णित अक्षरों पर स्याही लगी रह जाती थी, जिससे उस पर लिखा गया पाठ देखा और पढ़ा जा सकता था। चूँकि ताड़ के पत्तों पर सीधे तौर पर लिखना मुश्किल होता था इसलिए उत्कीर्णन का तरीका ही ऐसा तरीका था जिसे दक्षिण भारत में काम में लिया जा रहा था, जबकि उत्तर भारत में आमतौर पर लिखने के लिए ताड़पत्र का प्रयोग व्यापक रूप से अपना लिया गया था।

आगे चल कर भारतीयों ने जब यह महसूस किया कि ताड़पत्र या भोजपत्र पर लिखी सामग्री बहुत समय तक नहीं टिकती, तब उन्होंने अभिलेखों के लिए शिलापट्टों और धातुपत्रों का प्रयोग शुरू कर दिया जो सदा के लिए सुरक्षित रह सकते थे। ईसा-पूर्व तीसरी सदी से ही अभिलेखों के लिए शिलाखंडों का इस्तेमाल शुरू हो गया था। किसी खास अवसर पर इनका प्रयोग किसी राजसी लेखक द्वारा अपनी साहित्यिक तथा सामरिक कुशलता का प्रदर्शन करने के लिए किया जाता था। बौद्ध धर्म के ग्रंथों को अक्सर धातु की पट्टिका या चद्दरों पर उकेरा जाता था और फिर पट्टिकाओं या चद्दरों को तालपत्रों की पांडुलिपि की तरह पट्टों के बीच मजबूत धागे में पिरोकर रखा जाता था। शिलालेखों की तुलना में ताम्र-शासन (ताम्रपत्र पर अंकित आदेश) अधिक व्यवहार में थे। इन ताम्र-शासनों के ज़रिए राजा लोग मुख्यमंत्री या मुख्य कार्याधिकारी के माध्यम से लोगों को अनुदान में ज़मीन दिया करते थे। इन ताम्रपत्रों के कुछ उदाहरण चौथी सदी से आज तक भी उपलब्ध हैं। ये अभिलेख, उत्कीर्ण करने के लिए अयस्कार (ताम्रकार) को दिए जाने से पहले किसी कपड़े, भोजपत्र या तालपत्र पर अंकित किए जाते थे, फिर अयस्कार उन्हें देखकर तालपत्र पर उनकी नकल उकेरता था। कपड़े या भोजपत्र

© NCERT not to be republished

अथवा तालपत्र पर तैयार की गई मूल प्रति शाही अभिलेखागार में सुरक्षित रखी जाती थी। और ताम्रपत्र अनुदान लेने वाले को सौंप दिया जाता था।

अयस्कार मूल पत्रों या दानपत्रों के अक्षरों की ही नहीं, बल्कि उनके संपूर्ण रूप एवं आकृति की नकल तैयार करते थे। मूल पाठ को लम्बाई के समानांतर उकेरा जाता था। सामान्यतया संपूर्ण मूल पाठ को उकेरने के लिए कई पत्रों की ज़रूरत पड़ती थी और वे आमतौर पर एक पोथी के आकार में होते थे। बाद में उन पत्रों में छेद करके डोरी से पिरोकर पुस्तक का रूप दे दिया जाता था और प्रामाणिकता के लिए उन पर राजकीय मोहर लगा दी जाती थी। यह मोहर काँसे से ढली होती थी। उत्तर भारत के कुछ राजघराने लंबे आकार के एक बड़े पत्तर या चद्दर पर अनुदान पत्र अंकित करना अधिक पसंद करते थे। ऐसी चद्दरें सुरक्षित रूप से राजकीय अभिलेखागार में रखी जाती थीं। लेकिन कभी-कभी अनुदान में दी गई भूमि की सीमाओं पर भी गाड़ दी जाती थीं। वे विशेष रूप से महत्वपूर्ण होती थीं क्योंकि वे ही भूमि-धारण का स्थायी अभिलेख मानी जाती थीं। कभी-कभी उनमें पुराने महत्वपूर्ण ब्योरों को निकाल कर नए ब्योरे डाल दिए जाते थे। लेकिन बाद वाली सदियों में तो नकली अनुदानपत्र तैयार करने का धंधा आम हो गया था। चीन, जापान और कोरिया में लेखन के ध्वनिक रूपों का कोई 2000 वर्ष से भी अधिक समय तक चलन रहा है। आज भी चेरी के उत्कीर्णित काष्ठ ठप्पों से अनेक रंगों में ऐसे सुंदर छापे (प्रिंट) तैयार किए जाते हैं।

चित्र 6.6 कीलाकार लेखन

एक ओर जहाँ चीन में मुद्रण तथा कागज़ निर्माण की कला काफी उन्नत थी,

चित्र 6.7 चित्रलिपि या चित्रात्मक लेखन

© NCERT not to be republished

वहीं दूसरी ओर मध्य-पूर्व यानी पश्चिमी एशिया के लोग शिलाओं और मिट्टी की पट्टियों पर अपने अभिलेख उकेर रहे थे जिनके अक्षर कीलाकार होते थे। यह कीलाक्षर लेखन मिस्र में भी प्रचलित था जिसकी शुरूआत करने का श्रेय काल्डियन लोगों को जाता है।

मिट्टी की पट्टियों और मोहरों पर कीलाकार लेखन के सुंदर उदाहरण सर्वप्रथम मेसोपोटामिया में पाए गए थे। कीलाक्षर लिखावट मिट्टी की पट्टियों और बेलनों पर और असीरिया तथा बेबीलोन के विशाल स्मारकों पर उकेरी गई थी। चूंकि ये सारे देश पश्चिमी एशिया में स्थित हैं, इसलिए यह संभव है कि इन्हें प्रयोग करने का विचार उन्होंने चीनी लोगों से ही प्राप्त किया हो। मिट्टी की पट्टियाँ शिलापट्टियों से हलकी होती थीं, इसलिए उन्हें लाना-ले जाना या सँभालकर रखना आसान था। उन पट्टियों पर उत्कीर्णन तीखी नोक वाले औज़ारों या कीलों से किया जाता था। इसीलिए इन पट्टियों को 'कीलाकार' नाम दिया गया है।

चित्र 6.8 लैटिन भाषा का सुलेखात्मक अभिलेख

चित्रलिपि (जिसमें शब्द के लिए एक निश्चित प्रतीक का प्रयोग किया जाता है) आरंभिक अवस्थाओं की लेखनकला का एक अन्य रूप है। चित्रलिपि का प्रयोग पहले केवल सजावटी लेखन के लिए ही किया जाता था। शब्दों के सर्वाधिक सुंदर चित्रात्मक रूपों का प्रयोग आरंभिक मिस्रवासियों द्वारा कब्रों, स्तंभों, भवनों, मंदिरों, राजमहलों और ऐसे ही अन्य स्थानों पर किया जाता था जहाँ अभिलेख या संचार के लिए इन्हें उत्कीर्ण करने की आवश्यकता होती थी। अंग्रेज़ी का *हायरोग्लाइफिक* (hieroglyphic) शब्द ग्रीक भाषा के दो शब्दों (hieros यानी पवित्र और glyphic यानी उत्कीर्ण करना या उकेरना) से मिलकर बना है। आगे चलकर लेखन की कला को यांत्रिक साधनों या तकनीकी उपकरणों के बंधन से मुक्त कर दिया गया और इस प्रकार सुलेखन कला (calligraphy) का विकास हुआ।

चित्र 6.9 चीन की सुलेखन कला का नमूना

सुलेखन कला

हाथ से सुंदर लिखने की कला को सुलेखन कला कहा जाता है। एक समय था जब सुलेखन कला चीन और जापान में अपने उच्चतम शिखर पर पहुँच गई थी। इस्लामी कला और परंपरागत भारतीय कला में इस दिशा में निश्चित रूप से कुछ उल्लेखनीय उपलब्धियाँ हुईं।

हाथ की लिखावट शुरू होने से पहले पत्थर या धातु में किसी तीखे औज़ार से कटाई करके अक्षर लिखे जाते थे इसलिए सुलेखन कला का विकास औज़ार से काटे या उकेरे गए अक्षरों के स्वरूप से प्रभावित हुआ। ऐसा माना जाता है कि कोणीय अक्षर शैली पुरालेखों तथा शिलालेखों से निकली थी और फिर वह गोलाकार अक्षरों में परिवर्तित हो गई। रोमन काल की यूनानी पांडुलिपियों (papyri) में अक्षरों के विविध रूप पाए जाते हैं परन्तु उनकी द्रष्टव्य विशेषता है अक्षरों की गोलाई और उनकी लिखावट की निरंतरता और नियमितता।

यूरोप में अक्षरों को हाथ से लिखने की शैली दो तरह की होती है। एक को बृहदक्षर (uncial) शैली और दूसरी को प्रवाही लेखन (cursive) शैली कहा जाता है। पहली शैली साहित्यिक कृतियों में काम में ली जाती है जबकि दूसरी

© NCERT not to be republished

दस्तावेज़ और पत्र लिखने में। इन दो प्रमुख शैलियों से आगे चलकर कई उप-शैलियाँ निकल आईं और प्रयुक्त होने लगीं। लेकिन सुलेखन कला भी पुरालेखों की शैली से ही विकसित हुई जिसे बृहदक्षर (majuscule) शैली कहा जाता है; इसमें बड़े (capital) अक्षरों का इस्तेमाल किया जाता है। ईसा की पहली सदी आते-आते प्रवाही शैली जल्दी-जल्दी लिखने की लघ्वाक्षर (minuscule) शैली में बदलने लगी थी जिसमें प्रवाही यानी घसीट अक्षर लिखे जाते थे, और इसी प्रक्रिया में बहुत-से बड़े अक्षर शनैः शनैः छोटे अक्षरों में बदल गए। पुनर्जागरण काल में, कलाकारों तथा लिपिकों ने रोमन अभिलेखों के ज्यामितीय आकार के अक्षरों को अपना लिया। वे सुंदर गोल अक्षर रूपों के आविष्कारक थे और ये ही अक्षर रूप आज मुद्रण में प्रयोग किए जाने वाले रोमन टाइप के आधार बने। धीर-धीरे सुलेखन कला ने टाइप-मुद्रण (typography) के लिए रास्ता तैयार कर दिया और मुद्रण कला ने हस्तलेखन का स्थान ले लिया।

प्रश्नावली

1. तसवीरी आरेखों (picture diagram) के अस्तित्व में आने से पहले संचार यानी विचारों के आदान-प्रदान के क्या साधन थे?
2. लिखित लिपि की आवश्यकता क्यों पड़ी? अपने शब्दों में उत्तर दें।
3. लिपि के विकास की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं का वर्णन करें।
4. प्रारंभिक पुस्तकें कैसे तैयार की गई थीं?
5. सिंधु घाटी की लिपि के बारे में एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखें और यह बताएँ कि आकृति के साथ उसका क्या संबंध था?
6. आगे चलकर सुलेखन की कला में आकृति का किस प्रकार उपयोग किया गया?

प्रायोगिक

1. चीन की सुलेखन शैली का प्रयोग करते हुए एक डिज़ाइन तैयार करें।
2. रोमन वर्णमाला के साथ आकृतियाँ तैयार करें।
3. किसी भाव-विशेष को व्यक्त करने वाले अभिव्यंजनात्मक शब्दों को लिखें। उदाहरण; अंतरिक्ष, तूफान, विराम, संबंध आदि।
4. सुलेखन कला की शैली में अपने बारे में और अपने परिवार के बारे में एक पृष्ठ लिखें।
5. भिन्न-भिन्न भाषाओं/संस्कृतियों की सुलेखन शैलियों का उदाहरण सहित परिचय दें।
6. अपने आस-पास लिखी गई किसी लिपि के अक्षरों को पहचानें और उनका प्रयोग करते हुए अपना नाम रोमन या देवनागरी लिपि में लिखें।
7. 'भाषा अधिगम' की पाठ्यपुस्तक के आवरण का डिज़ाइन तैयार करें।
8. अंग्रेज़ी या किसी अन्य भाषा के अक्षर, शब्द तथा वाक्य को ग्राफिक आकृतियों का प्रयोग करते हुए प्रस्तुत करें।

© NCERT not to be republished

© NCERT not to be republished

7
अध्याय

प्रतिलिपिमुद्रण के विकास की अवस्थाएँ

प्रतिलिपिमुद्रण (reprography) या किसी डिज़ाइन या पाठ्य का मुद्रित रूप में पुनरुत्पादन है। संचार या विचारों एवं भावों के आदान-प्रदान के लिए यह मुद्रित रूप मनुष्य की बुनियादी ज़रूरत माना जाता है। यह एक ऐसी आवश्यकता है जिसके माध्यम से हम स्वयं को रचयिता के साथ ही नहीं बल्कि सभी के साथ संबंध जोड़ना चाहते हैं। दृश्य संचार के विभिन्न माध्यम भिन्न-भिन्न रूपों में हैं; जैसे- पांडुलिपियाँ, पुस्तकें, फड़ (scroll) (जिनकी सहायता से वर्णनकर्ता चित्रों के रूप में चित्रित विभिन्न क्रमिक प्रसंगों का वर्णन करता है), कठपुतली का नाच, रंगमंच, नृत्य, और छोटे-बड़े विज्ञापनपट्ट (पोस्टर, होर्डिंग), आदि। इस सूची का कोई अंत नहीं।

प्रौद्योगिकी ने संचार की तकनीकों के विकास एवं विविधीकरण में काफी सहायता दी है। आजकल इंटरनेट, केबल नेटवर्किंग और इलेक्ट्रॉनिक तथा डिज़िटल मीडिया के विभिन्न रूपों की सहायता से, संचार व्यवस्था ने सचमुच भूमंडलीय रूप धारण कर लिया है। इन सभी विकास कार्यों को एक लंबी प्रक्रिया के रूप में समझा जा सकता है जो 15वीं शताब्दी में गुटेनवर्ग के प्रथम मुद्रणयंत्र (प्रिंटिंग प्रेस) के आविष्कार के साथ प्रारंभ हुई थी। उस मुद्रणयंत्र ने आलेखों के यांत्रिक पुनरुत्पादन को संभव बना दिया और शिक्षा के क्षेत्र में एक क्रांति-सी ला दी, नहीं तो यह क्षेत्र कुछ चुने हुए लोगों तक ही सीमित था और आम आदमी की पहुँच से बाहर था।

अब ज़रा क्षण-भर के लिए रुकें और यांत्रिक पुनरुत्पादन की कुछ विशेषताओं पर दृष्टिपात करें जिनसे हमें अपनी रोज़मर्रा की ज़िंदगी में वास्ता पड़ता रहता है। उदाहरण के लिए, इसी पुस्तक को लें जिसे आप पढ़ रहे हैं।

क्या आपके साथ बैठे हुए आपके मित्र के पास भी यही पुस्तक है? क्या उसकी पुस्तक हर तरह से आपकी पुस्तक जैसी ही है?

बड़े संदर्भ में देखें तो आप जैसे लाखों बच्चे इसी पुस्तक की प्रतियाँ रखते और पढ़ते होंगे। ज़रा उस स्थिति की कल्पना करें जब हमें इन पुस्तकों की प्रतियाँ हाथ से लिख कर तैयार करनी होती थीं। ज़रा सोचिए कि हाथ से पुस्तक लिखने में कितना समय, श्रम और पैसा खर्च होता होगा।

पहली बात तो यह है कि हाथ से लिखकर तैयार की गई पुस्तक सस्ती नहीं होगी; दूसरे, वह समय पर तैयार नहीं हो सकेगी; और यह भी कि वह कुछ चुने हुए लोगों को ही उपलब्ध हो सकेगी।

ग्राफ़िक डिज़ाइन – एक कहानी

इस आकृति को देखें

यह आकृति किसी

पुस्तक

समाचार-पत्र

पत्रिका

टी-शर्ट

पोस्टर

टेलीविज़न

इंटरनेट

होर्डिंग

कतरन या कूड़े-कर्कट से

अथवा उपर्युक्त सभी

स्रोतों से प्राप्त की जा सकती है।

आप में कितने लोग असली टावर को देख चुके हैं?

शायद बहुत कम।

चित्र 7.1 ईफ़ल टावर, पेरिस, फ्रांस

लेकिन आप उस टावर के पास गए बिना ही उसकी सही तसवीर देख सकते हैं। यह आपको किसी टेलीविज़न के परदे पर या किसी चलचित्र में अथवा किसी पोस्टर या विज्ञापनपट्ट आदि में मुद्रित या प्रस्तुत किए गए रूप में उपलब्ध हो सकती है और आप तक पहुँच सकती है। रिप्रोग्राफी यानी प्रतिलिपिमुद्रण की कला ने अनेक माध्यमों के द्वारा, दुनिया-भर से सूचना प्राप्त करना सुविधाजनक एवं सुकर बना दिया है।

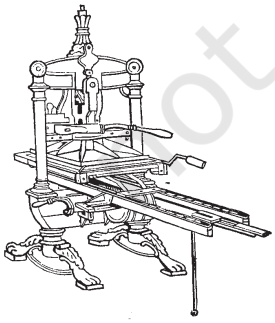

चित्र 7.2 हाथ से चलने वाला आरंभिक रिलीफ प्रिंटिंग प्रेस

क्या आप सोचते हैं कि यांत्रिक पुनरुत्पादन ने इन सभी समस्याओं पर काबू पा लिया है और इसी प्रक्रिया में वह शिक्षा एवं विचारों के प्रचार-प्रसार में सहायक सिद्ध हुआ है जो मुद्रण प्रक्रियाओं के आरंभ से पहले केवल कुछ ही चुने हुए लोगों तक सीमित था। यांत्रिक पुनरुत्पादन ने आकृतियों की गतिशीलता को बढ़ाया ही है। इससे जानकारी में भी अभूतपूर्व वृद्धि हुई है और उनका संदर्भगत अर्थ और प्रयोग असीमित हो गया है।

आइए, अब कुछ ग्राफिक मुद्रण की तकनीकों के बारे में जान लें।

मुद्रण एक ऐसी प्रक्रिया होती है जिसके ज़रिये एक अकेले मैट्रिक्स से एक-जैसी अनेकानेक प्रतियाँ तैयार की जा सकती हैं। यह मैट्रिक्स प्राथमिक ब्लॉक (ठप्पे) का काम देता है जिससे कि सभी प्रतियाँ छापी जाती हैं। यह ब्लॉक

© NCERT not to be republished

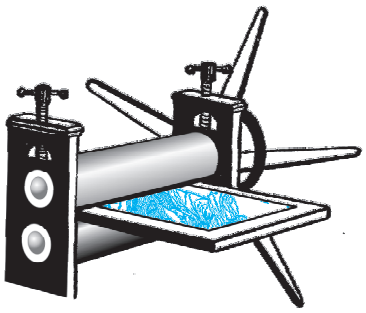

चित्र 7.3 इंटैग्लियो प्रिंटिंग प्रेस

चित्र 7.4 रिलीफ प्रिंटिंग

चित्र 7.5 इंटैग्लियो प्रिंटिंग

चित्र 7.6 समतल छपाई

इस प्रकार तैयार किया जाता है कि इसके छापे जाने वाले और न छापे जाने वाले (उभरे हुए और दबे हुए) हिस्से अलग-अलग देखे जा सकते हैं। मुद्रण यानी छपाई की भिन्न-भिन्न प्रक्रियाओं पर चर्चा करने से पहले यह जान लेना ज़रूरी होगा कि मुद्रण प्रक्रियाएँ तीन तरह की होती हैं, अर्थात् रिलीफ प्रिंटिंग, इंटैग्लियो और प्लेनोग्राफी। उनकी तकनीकें, प्रक्रियाएँ और उपकरण भी भिन्न-भिन्न होते हैं।

रिलीफ प्रिंटिंग में, छापे जाने वाला हिस्सा या डिज़ाइन न छापे जाने वाले हिस्से से ऊपर उठा हुआ होता है। छापे जाने वाले उभरे हिस्से पर स्याही इस प्रकार लगाई जाती है कि न छापे जाने वाला दबा हुआ हिस्सा साफ रहता है और छापे जाने वाली सतह को नहीं छूता। आमतौर पर रिलीफ प्रिंटिंग में स्याही या तो स्याही वाले बेलन (इंक रोलर) से लगाई जाती है या फिर ब्लॉक को इंकपैड पर दबा कर उससे स्याही ले ली जाती है; यह इंकपैड अपेक्षाकृत एक चपेटा वाला होता है।

इंटैग्लियो प्रिंटिंग में, छापे जाने वाला हिस्सा या डिज़ाइन, चपटे फर्श में काटकर तैयार किया जाता है और न छापे जाने वाले हिस्से से नीचा, दबा हुआ होता है। स्याही भीतर दबे हुए हिस्से में लगाई जाती है और ऊपरी हिस्से को पोंछकर साफ कर लिया जाता है और फिर प्लेट को पहले से नम किए हुए कागज़ के संपर्क में लाया जाता है। जिस पर समान रूप से सर्वत्र दबाव डाला जाता है फलस्वरूप सुंदर छपाई हो जाती है। प्लेट के ऊपर खाँचे जितने गहरे होंगे, छपी हुई आकृति उतनी ही अधिक होगी।

मुद्रण की तीसरी प्रक्रिया प्लेनोग्राफी यानी समतल छपाई कहलाती है। प्लेनोग्राफी में जैसा कि इसके नाम से पता चलता है, छापे जाने वाले हिस्से ऊँचाई में एकसमान होते हैं; कोई अधिक ऊँचा या नीचा नहीं होता। यह बुनियादी तौर पर पानी और तेल के मिश्रण पर आधारित स्याही प्रतिरोधी तकनीक(ink resist technique) होती है। इस प्रक्रिया में, छपाई वाला भाग (क्षेत्र) स्याही-ग्राही बनाया जाता है जबकि न छापे जाने वाला भाग स्याही प्रतिरोधी होता है। इसे स्याही प्रतिरोधी बनाने के लिए या तो स्टेंसिल का प्रयोग किया जाता है अथवा माध्यम के सतह को पानी का इस्तेमाल करके ऐसा बना दिया जाता है कि उसके भौतिक गुणधर्मों के कारण तेल-आधारित स्याही दूर रहती है, अपना असर नहीं करती। जब कोई स्याही लगा बेलन (रोलर) संपूर्ण फर्श/सतह पर चलाया जाता है तो वह डिज़ाइन पर ही स्याही या रंग छोड़ता है, अन्यत्र नहीं।

रिलीफ मुद्रण

लकड़ी का ठप्पा (woodblock)

जब आप गीले पैरों से फर्श पर चलते हैं तो फर्श पर आपके पैरों के निशान छप जाते हैं। उभारदार छपाई को समझने के लिए यह एक आसान तरीका हो सकता है। यही वह तरीका है जिसका हर दिन इस्तेमाल किया जा रहा है। यह अँगूठा निशानी के रूप में या किसी रबर-स्टाम्प के रूप में भी हो सकता है। हमें जिस हिस्से को कागज़ आदि पर छापना हो, उसे पहले किसी इंकपैड पर लगा या रगड़ लेते हैं और जिस किसी कागज़, कपड़े आदि के या सतह पर उसे छापना है उस पर उस ठप्पे को लगा देते हैं।

कागज़ के आविष्कार ने मुद्रण को और ज़्यादा फैला दिया। कागज़ का आविष्कार चीन में त्साइ लुन द्वारा 105 ईसवी में किया गया था। कागज़ बनाने के

© NCERT not to be republished

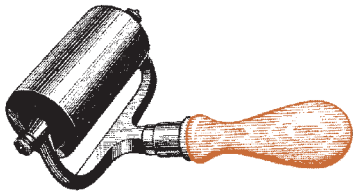

चित्र 7.7 हैंड रोलर (हाथ बेलन)

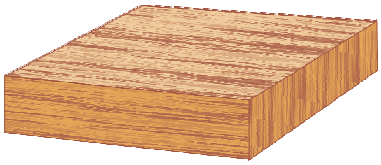

चित्र 7.8 लकड़ी का ठप्पा (ब्लॉक)

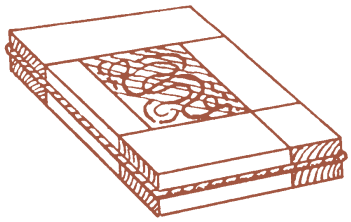

चित्र 7.9 हाथ की छपाई के लिए तैयार, स्याही लगा काष्ठ खंड/लकड़ी का टुकड़ा

चित्र 7.10 उकेरे हुए लकड़ी के ठप्पे

लिए सर्वप्रथम वनस्पतिजन्य मूल की कुछ सामग्रियों को कूट-पीस कर उसे गोंद मिले पानी में घोल कर उसकी लुगदी बनाई जाती थी और फिर उस लुगदी को बारीक जाली पर फैला दिया जाता था। जब लुगदी सूख जाती थी तो वह एक मुड़ सकने वाले मजबूत कागज़ का रूप ले लेती थी जिसे लिखने के काम में लाया जा सकता था। चीन के लोगों ने जब इस प्रक्रिया में कुशलता प्राप्त कर ली तो वे मलबेरी पौधे की छाल को कागज़ बनाने की सामग्री के रूप में प्रयोग करने लगे। चीन में कागज़ के आविष्कार के साथ ही, वहाँ छपाई के काम में तेज़ी आई और उसका व्यापक रूप से विस्तार हो गया।

अंग्रज़ी का 'पेपर' शब्द पेपिरस शब्द से निकला है। पेपिरस एक पौधा होता है जो मिस्र में नील नदी के निचले भाग के आसपास पाया जाता है। सन् 751 ईसवी में समरकंद की जीत के बाद, अरबवासियों ने कागज़ बनाने की इस प्रक्रिया को सीखा और इसे पश्चिमी एशिया में सर्वत्र फैलाया। आगे चलकर मलबेरी की छाल के स्थान पर लिनन के चिथड़ों का इस्तेमाल किया जाने लगा। जैसे-जैसे चीन का विकास हुआ, वहाँ का व्यवसाय बढ़ता गया और लेन-देन और आयात-निर्यात के सौदों का ब्योरा रखना मुश्किल हो गया। चूँकि सन् 807 ईसवी तक चीन में छपाई का कार्य बहुत उन्नत हो गया था तो लेन-देन या आदान-प्रदान के एक सरल साधन के रूप में कागज़ी मुद्रा (नोटों) का व्यवहार होने लगा और शनै:शनै: वह संपूर्ण साम्राज्य में फैल गया। यह कागज़ी मुद्रा (paper money) ब्लॉक प्रिंटिंग का पहला रूप था जिसे चीन आने वाले व्यापारियों, सैलानियों ने देखा और वे विदेशी पश्चिमी एशिया के मार्ग से इसे यूरोप भी ले गए।

भारत में कपास उगाने, उसका कपड़ा बुनने और पहनने-ओढ़ने के लिए उस कपड़े को रँगने का रिवाज़ बहुत पुराने ज़माने से चला आ रहा था। मजीठ रंग में रँगे हुए एक सूती कपड़े का टुकड़ा मोहनजोदड़ो की खुदाई में पाया गया था, जिससे यह सिद्ध होता है कि आज से पाँच हज़ार वर्ष पहले भी वहाँ के लोग कपास का कपड़ा बुनने और उसे मजीठ आदि के पक्के रंगों में रँगने की अद्भुत प्रक्रिया से भलीभाँति परिचित थे। कपास ने भारतीय बुनकर, रँगरेज, छपाईगर (छींपे) और कसीदागर की प्रतिभा को शानदार और जानदार अभिव्यक्ति देकर सुप्रतिष्ठित कर दिया था।

कपड़े पर डिज़ाइनें और आकृतियाँ बनाने के लिए लकड़ी को काटकर व उकेर कर बनाए गए ठप्पों (ब्लॉक) से कपड़े पर छपाई करना भारत की एक अति प्रचीन कला है। लकड़ी के ठप्पों की छपाई वाले भारतीय मूल के कपड़ों के पुरातात्विक स्वरूप के अनेकानेक अकाट्य प्राचीन ऐतिहासिक प्रमाण मिस्र में काहिरा शहर के दक्षिणी बाहरी इलाकों में नील नदी पर हुई फॉस्टैट की खुदाइयों में मिले हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हुई प्रचीन स्थलों की खुदाइयों से पता चला है कि 10वीं से 14वीं शताब्दी के दौरान, काहिरा पूर्व और पश्चिम के बीच व्यापार के प्रमुख केंद्र के रूप में विकसित हो गया था और भूमध्य सागर और लालसागर के बीच व्यापारियों का मुख्य मिलन-बिंदु था। भारत के साथ होने वाला अधिकांश व्यापार भी इसी मार्ग से हुआ करता था क्योंकि काहिरा मिस्र के बाज़ारों के लिए भेजे जाने वाले भारतीय माल का केंद्र था।

© NCERT not to be republished

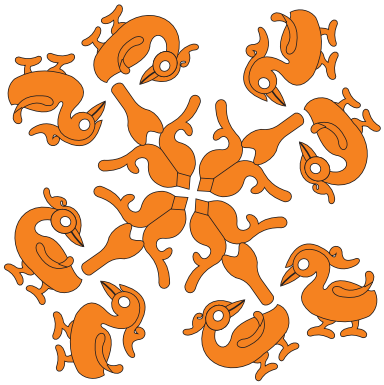

फॉस्टैट कपड़ों के नाम से वर्णित ये वस्तुएँ फ्रांस में मुलहाउस के संग्रहालय म्युजी डी ले'इम्प्रेसियो सू एतोफे (Musee de L'Impresion sur Etoffes) में देखी जा सकती हैं। भारत में, अहमदाबाद स्थित कैलिको के वस्त्र संग्रहालय में भी फॉस्टैट कपड़ों के कुछ बढ़िया नमूने प्रदर्शित हैं। डिज़ाइन के स्वरूप और व्यापार तथा वाणिज्य के इतिहास के साक्ष्य के आधार पर, इतिहासकार इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि फॉस्टैट कपड़े निस्संदेह भारतीय मूल के हैं। इस संबंध में सभी की राय है कि अब तक जानकारी में आया सबसे पुराना छपाईदार फॉस्टैट कपड़ा 14वीं शताब्दी का हो सकता है। कैलिको संग्रहालय में भी कई तकनीकों से निर्मित पंद्रहवीं शताब्दी का फॉस्टैट कपड़ा सुरक्षित है।

फॉस्टैट एक सूती कपड़ा सफेद रंग का है जिस पर एक डिज़ाइन छपी हुई है। कपड़े का सफेद रंग मौसम की मार सहते-सहते हलका धूसर हो गया है। इस पर छपी हुई डिज़ाइन लाल और शायद बैंगनी रंग की है जिसका बैंगनी रंग धूसर हो गया है। यह डिज़ाइन एक ही ब्लॉक से छपी हुई है। ऐसा प्रतीत होता है कि ब्लॉक का प्रयोग रूपरेखा को छापने के लिए किया गया था जिसमें संभवत: मोम की सहायता से प्रतिरोधी प्रक्रिया (resist process) का प्रयोग किया गया था। मोम ने रंग को रूपरेखा पर चिपकने से रोक दिया था। डिज़ाइन बनाने के लिए कपड़े पर रंग ब्रुश की सहायता से लगाए गए थे। कपड़े को रँगने के बाद जब धोया गया तो तीनों रंग एक सफेद बाहरी रेखा से अलग किए गए प्रतीत होते थे।

डिज़ाइन की योजना में स्वदेशीपन झलकता है। डिज़ाइन के बीच में एक कमल का फूल है, उसके इर्द-गिर्द एक वृत्त में हंसों के चार जोड़े छापे गए हैं। छापों के निशानों के मिलने का बिंदु चोहरे मोड़ के केंद्र पर होता है। छपाई और हाथ की चित्रकारी का एक साथ पाया जाना गुजरात की कलाकृति की अपनी विशेषता है।

चित्र 7.11 कपड़े का छपा हुआ टुकड़ा, इसमें डिज़ाइन के मूल विषय के रूप में हंस चित्रित किए गए हैं।

© NCERT not to be republished

पुस्तक मुद्रण

यांत्रिक छपाई के आविष्कार से पहले सभी पुस्तकें ऐसे लिखारियों (हस्तलेखकों) द्वारा लिखी जाती थीं जो ज़्यादातर यह काम मंदिरों और मठों में किया करते थे। हाथ से लिखने का यह काम बहुत ही श्रमसाध्य और धीमा होता था। फिर लोगों ने पुस्तकों की प्रतियाँ जल्दी-जल्दी तैयार करने का कोई उपाय खोजने के लिए प्रयत्न एवं प्रयोग किए। इसके लिए उन्होंने पहले ठोस काठ के ब्लॉकों पर मूल पाठ के अक्षर और चित्र दोनों ही उत्कीर्ण किए और फिर उन उकेरे गए ब्लॉकों पर स्याही जैसी चीज़ लगा कर एक साथ कई पुस्तकें छाप डालीं। ऐसी पुस्तक को 'ब्लॉक बुक' कहा जाता था। इस प्रकार की पुस्तकें निजी अध्ययन, संदर्भ और जनता में वितरण के लिए, लिखी, चित्रित और अंशतः अलंकृत की जाती थीं।

चित्र 7.12 वज्रसूत्र

विश्व की सबसे पुरानी मुद्रित पुस्तक वज्रसूत्र (बज्ज सुत्त) है जो बौद्धधर्म की एक धार्मिक पुस्तक है और सर्वप्रथम लकड़ी के ठप्पों से छापी गई थी। यह पुस्तक वांग चीह द्वारा 11 मई 869 में मुक्त वितरण के लिए छापी गई थी। उत्कीर्ण और स्याही लगे लकड़ी के ब्लॉकों से बाँस के बने हुए अनगढ़ कागज़ पर उसकी प्रतियाँ छापी गई थीं। ज्यों-ज्यों सभ्यता का विकास होता गया, धर्मग्रंथों की शिक्षाओं को ही नहीं बल्कि आम लोगों को हिदायतें देने के लिए भी बड़ी संख्या में अभिलेख रखना जरूरी हो गया।

चीनी साम्राज्य पर हुए हमलों के दौरान, चीन के निवासियों ने आक्रमणकारियों को अपने यहाँ की प्रचीन कला सिखाई और यह कला पश्चिमी एशिया से होती हुई यूरोप तक पहुँच गई। प्रारंभ में, यूरोप में संतों तथा धार्मिक दृश्यों के अनगढ़ और अपरिपक्व चित्र बनाए गए। इन चित्रों के ब्लॉक पर पठन-सामग्री की कुछ पंक्तियाँ भी लिखी होती थीं जैसा कि आजकल चित्रों पर ऊपर या नीचे उनका शीर्षक या विवरण दिया जाता है। आगे चलकर, ब्लॉकों में मूल पाठ्य के संपूर्ण पृष्ठ काटे जाने लगे और उनकी सहायता से आरंभिक ब्लॉक पुस्तकें छापी गईं। इनमें से सबसे प्रसिद्ध पुस्तक थी 'बिब्लिया पौपेरम' यानी गरीब लोगों की बाईबिल। छपाई के लिए काठ की कटाई में 15वीं शताब्दी के दौरान शनैःशनैः सुधार होता गया और सोलहवीं शताब्दी के पहले चतुर्थांश तक काष्ठकला अपनी उन्नति के शिखर पर पहुँच गई।

चित्र 7.13 काष्ठ कला का सबसे पहला चित्र, 1423

उत्कीर्ण मुद्रण

इंटैग्लियो प्रिंटिंग के प्रमुख उदाहरण हैं: रेखा उत्कीर्णन (line engraving), रेखा अम्लांकन (line etching), कोमल आधार निक्षारण (soft ground etching), शुष्क बिंदु (dry point), बिंदुचित्रण (stipple) और क्रेयॉन (crayon) पद्धति, ताम्रपत्र उत्कीर्णन (aquatint), शुगर ग्राउंड एक्वाटिंट, ताँबे पर खुदाई (mezzotint) और प्रकाशोत्कीर्णन (photogravure)।

इन सबमें, उत्कीर्णन सबसे पुरानी तकनीक है और कई मायनों में सबसे अधिक संतोषजनक विधि है। इसकी संपूर्ण प्रक्रिया ताँबे की चिकनी प्लेटों पर संपन्न की जाती है। इस कार्य के लिए जस्ते, लोहे, इस्पात और यहाँ तक कि चाँदी की भी प्लेटों का

© NCERT not to be republished

निक्षारण सूइयाँ

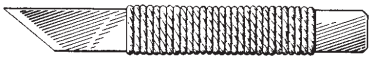

स्क्रैपर (खुरचनी) रेती

ताम्र उत्कीर्ण के लिए नोकदार छेनी

बर्निशर (घोटनी/रेती)

स्क्रैपर (खुरचनी)

चित्र 7.14 इंटैग्लियो मुद्रण की विधि में डिज़ाइन बनाने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले भिन्न-भिन्न औज़ार

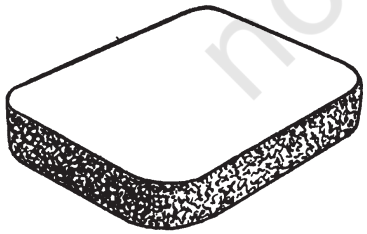

चित्र 7.15 शिला मुद्रण का प्रसार

उपयोग किया गया है, लेकिन ताँबे की प्लेटें सबसे अधिक इस्तेमाल में लाई गई हैं। इस तकनीक में ताम्रपत्र आदि की सतह पर कोई आकृति उकेरी जाती है।

धातु की प्लेट पर आकृति बनाने के लिए काम में लिए जाने वाले औज़ार को ब्यूरिन (burin) या ग्रेवर (graver) कहा जाता है जिसे हिंदी में टाँकी या छेनी कह सकते हैं। यह एक अत्यंत कठोर इस्पात की बनी मजबूत वर्गाकार पत्ती होती है जो एक लकड़ी के हत्थे में फिट होती है और एक तीखी नोक पर कोण बनाते हुए तेज़ की हुई होती है। सभी आरेख मुख्य रूप से ग्रेवर की सहायता से ही बनाए जाते हैं। इससे काम लेने के लिए इसके हत्थे को मजबूती से हथेली में पकड़ा जाता है और फिर आकृति बनाने के लिए नोक को तिरछे, धातु की सतह पर आगे चलाया जाता है। औज़ार (ग्रेवर/ब्यूरिन) को दाएँ हाथ के अँगूठे और उँगली के बीच पकड़ कर नियंत्रित किया जाता है और उसकी तीखी नोक को प्लेट पर टिकाया जाता है। आकृति की रेखाओं की मोटाई या बारीकी ब्यूरिन के चयन पर निर्भर करती है। उसका वर्गाकार अनुभाग तीखे नोकदार भाग की तुलना में, मोटी रेखा बनाएगा। यह मोटाई कुछ हद तक काम करने के कोण पर भी निर्भर करती है। यदि ग्रेवर को प्लेट के साथ उच्च कोण बनाते हुए पकड़ा जाएगा तो ग्रेवर की नोक अधिक गहरी जाएगी और उसके फलस्वरूप रेखा मोटी बनेगी। ब्यूरिन के चलने से धातु की छीलन तीखी नोक के आगे गोल-गोल छल्लों में इकट्ठी होती जाएगी। इस प्रकार खुदी हुई रेखा के किनारे कुछ खुरदरे होंगे। इस खुरदरेपन को स्क्रैपर (खुरचनी या रेती) की सहायता से हटा दिया जाएगा। सभी प्रकार की इंटैग्लियो तकनीकों में, परिवर्तन-संशोधन करने के लिए स्क्रैपर का इस्तेमाल किया जाता है।

उत्कीर्ण मुद्रण की सभी विधियों में एक सामान्य बात यह है कि छपाई टाइपों की सहायता से नहीं हो सकती और इसके लिए रोलर प्रेस का होना ज़रूरी होता है। पहले प्लेट पर सब जगह स्याही लगा दी जाती है और फिर सतह पर से सावधानीपूर्वक स्याही साफ कर दी जाती है; तब केवल उत्कीर्णित खाँचों में ही स्याही रह जाती है। उत्कीर्णित प्लेट अधिकतर कुछ नम लचकदार कागज़ पर ही छापी जाती है। ऐसी छपाई के लिए, स्याही लगी प्लेट को प्रेस मशीन पर इस प्रकार रखा जाता है कि प्लेट पर बनाई गई आकृति ऊपर की तरफ रहे। एक नम कागज़ प्लेट पर रखा जाता है और फिर उसे मोटे कंबल से ढक दिया जाता है। जब प्लेट, कागज़ और उस पर रखा मोटा आवरण प्रेस के मजबूत बेलनों (रोलर) के बीच से गुज़रते हैं तो दबाव के कारण कागज़ खाँचों में लगी स्याही को ले लेता है और इस प्रकार आकृति कागज़ पर छप जाती है।

शिला मुद्रण

मध्यकाल के दौरान छपाई के क्षेत्र में लकड़ी की कटाई के साथ उत्कीर्णन (engraving and etching) की कला जोड़ दी गई और 18वीं शताब्दी के शुरू में लिथोग्राफी ने भी मुद्रण के क्षेत्र में पदार्पण कर लिया। लिथोग्राफी के आगमन से पुनरुत्पादन (प्रतिलिपि बनाने) की तकनीक निश्चित रूप से एक नई अवस्था में पहुँच गई जिससे ग्राफिक कला पहली बार अपने उत्पादों को बड़ी

© NCERT not to be republished

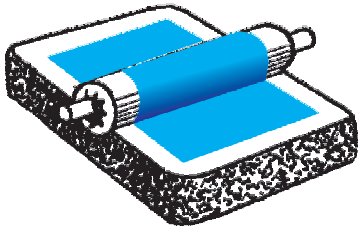

चित्र 7.16 हैंडरोलर और स्याही लगा पत्थर

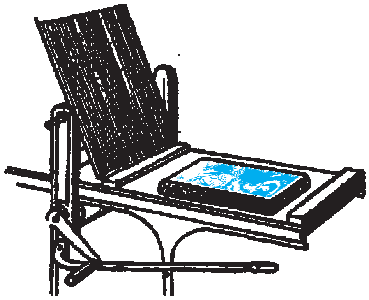

चित्र 7.17 लिथोग्राफी प्रेस

संख्या में बाज़ार में पेश करने में सक्षम हुई। लिथोग्राफी का सहारा लेकर ग्राफिक कला रोज़मर्रा की ज़िंदगी को चित्रित करने में सक्षम हो गई और यह मुद्रणकला के साथ कदम से कदम मिलाकर समान गति से आगे बढ़ने लगी।

ग्राफिक कला के ज़्यादातर शुरूआती तरीके अब एकदम पुराने पड़ गए हैं। तथापि लिथोग्राफी के आविष्कार का श्रेय पक्के तौर पर म्यूनिख, जर्मनी निवासी एलॉज़ सेनफेल्डर को दिया जाता है जिसके लंबे अनुसंधान कार्य के फलस्वरूप सन् 1796 में इसकी शुरूआत हुई। सेनफेल्डर कोई चित्रकार नहीं था लेकिन वह एक रंगशाला (थिएटर) में कलाकार और नाट्यलेखक के रूप में कार्य करता था। वह अपने आलेखों (script) की प्रतियाँ तैयार करने के सस्ते तरीके की खोज में उत्कीर्णन की तकनीक को आज़मा रहा था। संयोगवश, उसे बवेरियाई चूनापत्थर (limestone) की अद्भुत विशेषताओं का पता चल गया। वह चूना पत्थर के साथ दो साल तक प्रयोग करता रहा और अंत में उसने अपनी तकनीक में पूर्णता प्राप्त कर ली। उसने लिथोस्टोन के लिए उपयुक्त एक प्रेस का भी डिज़ाइन तैयार कर लिया क्योंकि मौजूदा प्लेटन और इंटैग्लियो रोलर प्रेस दोनों ही मोटे पत्थर को सँभालने में सक्षम नहीं थे।

किंतु लिथोग्राफी आविष्कार के कुछ ही दशकों बाद, उसका साथ देने के लिए स्क्रीन प्रिंटिंग और फोटोग्राफी भी मैदान में उतर आईं। चित्रात्मक पुनरुत्पादन की प्रक्रिया में पहली बार फोटोग्राफी ने सर्वाधिक महत्वपूर्ण कलात्मक कार्यों में हाथ को छुट्टी दे दी। अब इन सब कामों की ज़िम्मेदारी, हाथ की बजाय, कैमरे के लेंस में देखने वाली आँख पर आ गई। चूँकि हाथ से अंकन की तुलना में आँख बहुत तेज़ी से देख सकती है, इसलिए चित्रात्मक पुनरुत्पादन (प्रतिलिपिकरण) की प्रक्रिया में इतनी ज़्यादा तेज़ी आ गई कि वे ज़रूरत को आसानी से पूरा कर सकती हैं।

चित्र 7.18 मार्क चगाल 1966 लिथोग्राफ (आंशिक)

देखने जाएँ

पास में स्थित किसी मुद्रणालय (प्रिंटिंग प्रेस) में जाएँ और वहाँ इस्तेमाल की जा रही छपाई की तकनीकों और लेआउट तैयार करने से लेकर मुद्रण का संपूर्ण कार्य संपन्न होने तक की प्रक्रिया भी समझें।

© NCERT not to be republished

प्रश्नावली

1. ठप्पा प्रिंटिंग से आप क्या समझते हैं?
2. मनुष्य को मुद्रित पुस्तकों की क्यों ज़रूरत पड़ी?
3. ब्लॉक पुस्तकों से क्या तात्पर्य है?
4. मुद्रण की तीन प्रमुख प्रक्रियाएँ हैं-रिलीफ़, इंटैग्लियो और प्लेनोग्राफी; इनका विस्तृत विवेचन करें।
5. प्राचीन भारत में ब्लॉक प्रिंटिंग का इस्तेमाल किस प्रकार किया जाता था? मिस्र की सभ्यता पर उसका क्या असर हुआ?
6. आपके आस-पास उपलब्ध भिन्न-भिन्न मुद्रण माध्यमों और तकनीकों के बारे में एक स्क्रैपबुक (कतरन पुस्तक) बनाएँ और उनके बारे में संक्षेप में लिखें।
7. उत्कीर्णन, लकड़ी का ठप्पा और शिला मुद्रण के बीच सोदाहरण अंतर बताइए।

प्रायोगिक

1. प्रत्यक्ष मुद्रण तकनीक के साथ एक डिज़ाइन बनाने के लिए एक पैटर्न को दोहराएँ। उदाहरण के लिए, एक रिलीफ पैटर्न बनाने के लिए मिटाने वाले रबर पर काटकर एक नमूना बनाएँ जिसके ऊपर रंग लगाकर छाप प्राप्त करें अथवा अन्य किसी सामग्री और तकनीक जिससे कि प्रिंट लिया जा सकता है, की खोज करें और उसका प्रयोग भी करें।
2. उभरी हुई सतह पर पेंसिल रगड़ कर, एक कागज़ पर उसकी छाप लगाएँ और अन्य माध्यमों के साथ प्रभाव को दोहराने का प्रयत्न करें।
3. पहले वाले अभ्यास से प्राप्त प्रभावों का इस्तेमाल करते हुए दो चित्रात्मक उदाहरण बनाएँ।
4. लाल, पीले, काले रंगों को मिलाकर भिन्न-भिन्न रंग तैयार करें। रंगों की मात्रा को बढ़ा या घटाकर यथासंभव उनके अधिक मेल तैयार करें और इस प्रकार प्राप्त रंगों का एक चार्ट बनाएँ।
5. किसी दिए गए विषय या उत्पाद पर आधारित एक डिज़ाइन बनाएँ फिर प्लेनोग्राफी के लिए इस्तेमाल करने के उद्देश्य से उस डिज़ाइन को काली तथा सफेद आकृति के रूप में पुनः मुद्रण योग्य बनाएँ।
6. अपने नाम का डिज़ाइन तैयार करें और फिर मुद्रण के योग्य बनाने के लिए नाम के अक्षरों को उलटे रूप में तैयार करें।

© NCERT not to be republished

quick brown fox jumps over the lazy
and feels as if he were in the seventh
en of typography together with Her-
Zapf, the most famous artist of the

8

अध्याय

धातु की चल टाइप से डिज़िटल इमेजिंग तक

पहली छपाई मशीन पुनर्जागरण काल में अस्तित्व में आई। तब तक पुस्तकें हाथ से लिखी जाती थीं और हर पुस्तक को अलग-अलग अलंकृत और चित्रित किया जाता था, जैसा कि पूर्ववर्ती अध्यायों में बताया गया है। लिथोग्राफिक प्रेस के आ जाने से चीज़ें कुछ आसान हो गईं। तब तक पुस्तक का मूल पाठ्य हाथ से या सुग्राहीकृत पत्थर (sensitised stone) पर या गोंद की परत लगे अंतरण कागज़ (transfer paper) पर लिखा जाता था। पुस्तक को हाथ से लिखना एक उबाऊ प्रक्रिया थी। जब पाँव से चलाई जाने वाली लैटर प्रेस (treadle machine) का आविष्कार हो गया तो पुस्तकों की कई प्रतियाँ तैयार करना अधिक आसान हो गया। इसके लिए अलग-अलग मैट्रिक्स होते थे जो अलग-अलग अक्षरों के सीसे या लकड़ी में कटे ब्लॉकों की सहायता से ढाले जाते थे। इन ढले हुए अक्षरों को एक अस्थायी फ्रेम में, जिसे फोर्मेट कहा जाता था, सुदृढ़ रूप से व्यवस्थित किया जाता था और कुछ ही समय में वह फोर्मेट छपाई के लिए तैयार हो जाता था। छपाई का काम पूरा हो जाने के बाद फोर्मेट को मशीन पर से हटा लिया जाता था और फोर्मेट में लगी टाइपों (अक्षरों) को पूरी तरह साफ करके फिर से कंपोजिटर (अक्षर संयोजक) की ट्रे में डाल दिया जाता था। इन टाइपों को तब तक बार-बार काम में लिया जाता था जब तक कि उनकी शक्ल खराब नहीं हो जाती। यदि मूल पाठ्य के साथ कोई तसवीर या सचित्र सामग्री भी रखनी होती थी तो उसके लिए एक ब्लॉक बनाने की ज़रूरत होती थी जो या तो हाफटोन ब्लॉक होता था या लाइन ब्लॉक। इस प्रकार की छपाई का एक बड़ा लाभ यह था कि टाइपों और ब्लॉकों को फिर से इस्तेमाल किया जा सकता था। मजबूत और इसकी सर्वोपरि विशेषता यह थी कि यह लिथोग्राफिक प्रेस की तुलना में काफी और तेज़ी से काम करता था।

© NCERT not to be republished

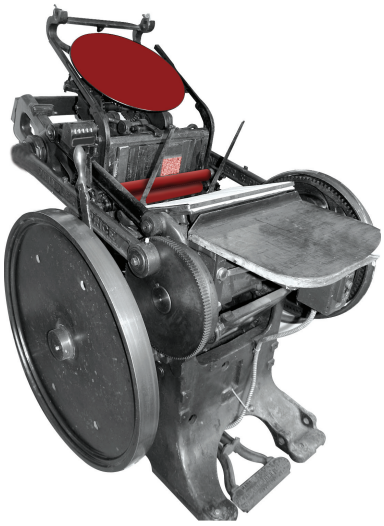

चित्र 8.1 लैटर प्रेस

धातु की चल टाइप से मुद्रण करने के आविष्कार 1450 में मैंज़ के जोहान्न गुटेनबर्ग ने किया था। गुटेनबर्ग ने टाइप बनाने का एक ऐसा उपकरण खोज निकाला जो उठाकर कहीं भी ले जाया जा सकता था और उसे बार-बार काम में लाया जा सकता था। इस नए आविष्कार ने कुछ ही दिनों में एक पुस्तक को तैयार करना संभव कर दिया जबकि पहले लिखारियों व चित्रांकनकर्ताओं को सालों तक मेहनत करनी पड़ती थी। इस नई तकनीक में कई पीढ़ियों से चली आ रही परंपराओं तथा तरीकों को अपनाने का भी सुझाव दिया गया था। गुटेनबर्ग ने वर्णमाला के हर अक्षर के लिए धातु की अलग-अलग टाइपें ढालने के तरीके की खोज की। एक टाइप अक्षर की शक्ल में एक पंच या डाई तैयार की गई। इसे नरम धातु में दबाकर एक साँचा बनाया जाता था जिसमें पिघला हुआ पारा डालकर सेकंडों में ही टाइप का अक्षर ढाल लिया जाता था। मुद्रक टाइपों को जोड़कर जल्दी से शब्द, पंक्तियाँ और पुस्तकों के पन्ने कंपोज कर लेता था और फिर नई विकसित स्क्रू-प्रेस का प्रयोग करते हुए उन पृष्ठों की सैंकड़ों प्रतिलिपियाँ छाप लेता था।

गुटेनबर्ग ने शुरू-शुरू में इस आविष्कार प्रक्रिया को गुप्त रखा। उसकी मुद्रित प्रतियाँ (मुख्यत: बाईबिल) हस्तलिखित पुस्तकों की हूबहू नकल जैसी होती थीं। मुद्रित मूल पाठ्य और उसके टाइप का नमूना लिखारियों/चित्रांकनकर्ताओं के हस्तलिखित शब्दों जैसा ही होता था और बहुत बारीकी से जाँच करने पर ही यह पता लग सकता था कि अमुक पृष्ठ हस्तलिखित नहीं, मुद्रित है।

गुटेनबर्ग के आविष्कार के कारण पुनरुत्पादन की तकनीकों में कई नए-नए पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग होने लगा।

अक्षर रूप (लैटर फॉर्म)

जब लेखन कहे जाने वाले संचार के साधनों में प्रयुक्त होने वाले संकेत और प्रतीक यांत्रिक साधनों से काष्ठखंड या शिलाखंड पर चित्रित या उत्कीर्णित किए हुए होते हैं तो उन्हें अक्षर रूप कहा जाता है।

टाइपफॉन्ट

टाइपफॉन्ट ऐसे अक्षरों का वर्ग होता है जिनके कुछ तत्व समान होते हैं जिनके फलस्वरूप अक्षरांकन की एक अलग विशिष्ट शैली उत्पन्न होती है। टाइपफॉन्ट किसी भाषायी मूल पाठ्य को कंपोज करने में इस्तेमाल होता है। किसी टाइपफॉन्ट का मानक डिज़िटल रूप आमतौर पर किसी टाइप-डिज़ाइनर द्वारा तैयार किया जाता है और टाइप की ढलाई तथा विकास करने वाले के द्वारा बनाया और बाज़ार में बेचा जाता है। टाइपफॉन्ट और टाइपफेस शब्द पूर्वनिर्मित अक्षरांकन शैलियों की सामान्य संकल्पना के द्योतक हैं।

टाइपफेस

टाइपफॉन्ट और टाइपफेस के बीच तकनीकी अंतर होता है। गरम धातु वाली प्रौद्योगिकी का आरंभ हुआ तब अक्षर रूप की आकृति को एक आयताकार

© NCERT not to be republished

धातुखंड (यानी टाइप) के ऊपरी सिरे या फेस पर रखा जाता था। इसलिए इसे टाइपफेस (टाइपशीर्ष) कहते हैं।

टाइपफॉन्ट शब्द एक ऐसे टाइपफेस का सूचक है जो बिट्स-बाइट्स वाली डिज़िटल प्रौद्योगिकी के प्रयोग द्वारा बनाया जाता है। यह टाइपफेस के एक नए रूप (प्रोफाइल) का भी द्योतक है जो एक अक्षरांकन शैली की डिज़िटल जानकारी रखता है और किसी लैटर फॉर्म की समरूप आकृति या वस्तु नहीं होता। डिज़िटल फॉन्ट की जानकारी, वर्ड प्रोसेसर ऑपरेटिंग सिस्टम के माध्यम से रखता है। प्रयोगकर्ता अपनी पसंद का कोई टाइपफॉन्ट चुन सकता है और भाषायी पाठ्य को तैयार कर सकता है, देख सकता है, संपादित, संसाधित, मुद्रित और प्रेषित कर सकता है।

कलात्मक अक्षरांकन

कलात्मक अक्षरांकन और टाइपफेस के बीच दो स्तरों पर अंतर हो सकता है। कलात्मक अक्षरांकन कलाकार द्वारा एक निश्चित प्रयोजन के लिए और लघु शीर्ष रेखा में अकेले प्रयोग के लिए किया जाता है। यह कोई स्थायी रूप से लिखित अक्षरांकन शैली नहीं होती, जबकि टाइपफेस एक स्थायी स्वरूप की डिज़ाइन संबंधी गतिविधि होती है जिसके विभिन्न प्रयोजन हैं। टाइपफेसों को प्रयोग करके विभिन्न प्रकार के प्रलेख तैयार किए जा सकते हैं।

सुलेखन कला

सुलेखन कला (calligraphy) एक कलात्मक हस्तलिपि होती है। साधारण अक्षरांकन की अपेक्षा सुलेख या कलात्मक अक्षरांकन में अभिव्यंजनात्मक और

© NCERT not to be republished

चित्र 8.2 सुलेखन कला के नमूने

सौन्दर्यात्मक दृश्य गुणवत्ता अधिक होती है। सुलेखात्मक अक्षरांकन आमतौर पर लेखन उपकरणों और सुलेखक की संवेदनशीलता का प्रामाणिक प्रतिफल होता है। एक बार लिख देने के बाद सुलेखात्मक कृति को पुनः सँवारा या सुधारा नहीं जा सकता और न ही सुधारा जाना चाहिए।

टाइपमुद्रण

चल टाइप (movable type) कला को टाइपमुद्रण (typography) कहा जाता है। टाइपोग्राफी एक शास्त्र है। यह विषयवस्तु की आवश्यकता के अनुसार मूल पाठ्य को प्रस्तुत करने की कला तथा विज्ञान है। टाइपोग्राफिक डिज़ाइन के माध्यम से आवश्यक प्रभाव उत्पन्न करने के लिए किसी छपे हुए सुलेख में विभिन्न टाइपफेसों का प्रयोग किया जाता है। टाइपोग्राफी में पूर्व-निश्चित टाइपफेसों/फॉन्टों का प्रयोग किया जाता है।

टाइप डिज़ाइन

टाइप डिज़ाइन एक ऐसा विषय है जो किसी अपेक्षित आलेख में एक निश्चित प्रयोजन के लिए अक्षर-रूपों का संयोजन, डिज़ाइन, निष्पादन और परीक्षण करता है। टाइप डिज़ाइन करने की गतिविधि के लिए अक्षर रूपों के सौंदर्यशास्त्र के प्रति संवेदनशीलता तथा टाइपफेस उत्पादन की प्रौद्योगिकी के ज्ञान की भी आवश्यकता होती है।

टाइप डिज़ाइनर

टाइप डिज़ाइनर एक ऐसा पेशेवर कलाकार होता है जो टाइप डिज़ाइन करने का काम करता है।

टाइपोग्राफर

टाइपोग्राफर टाइपफेसों और मूल पाठ्य संयोजन की प्रौद्योगिकी को समझने की अपनी शक्ति का प्रयोग करता है। वह मूल पाठ्य (text) को डिज़ाइन करने के लिए ज़िम्मेदार होता है।

कैलिग्राफर/सुलेखक

सुलेखक या सुलेखन कलाकार अक्षर रूपों के सौंदर्य के लिए प्रतिबद्ध होता है और वह अपनी इस प्रतिबद्धता के ज़रिये स्वेच्छा एवं स्वाभाविक रूप से अक्षरों, शब्दों, वाक्यों और कथनों तथा विवरणों को लिखता या चित्रित करता है। इस कार्य में वह अपनी अधिकतम अभिव्यंजन शक्ति के साथ, उपयुक्त लेखन उपकरणों तथा लेखन की सतहों का उपयोग करता है। इस प्रक्रिया में सुलेखक द्वारा रचित प्रत्येक कृति एक अनुपम कलाकृति होती है।

टाइप का महत्त्व

टाइपफॉन्ट के बिना कोई भी मुद्रित लेख या पुस्तक अस्तित्व में आ ही नहीं सकती। लिखित संप्रेषण की प्रभावकारिता उसकी दृश्य गुणवत्ताओं पर निर्भर

© NCERT not to be republished

चित्र 8.3 चित्र और लेखन सहित पोस्टर

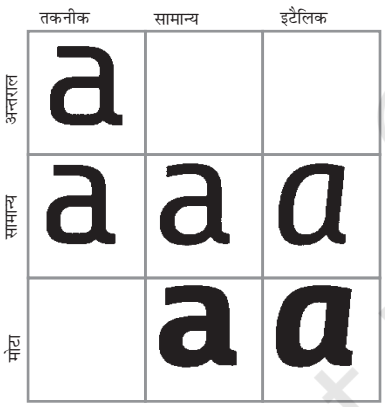

फॉन्ट परिवार

करती है। टाइपफॉन्टों और प्रभावकारी टाइपोग्राफी का उचित प्रयोग ही, किसी भी भाषा या लिपि में कहीं भी और किसी भी समय, लिखित संचार का प्रभावकारी साधन होगा। मुद्रण के कार्य में टाइपफॉन्टों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। मुद्रण प्रौद्योगिकी मूल पाठ्य और आकृतियाँ दोनों की आवश्यकता की पूर्ति करती है। मूल पाठ्य के संयोजन और मुद्रण के संदर्भ में टाइपफॉन्टों का अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान होता है। प्रकाशन उद्योग, ज़रूरत पड़ने पर, एक विशिष्ट टाइपफॉन्ट शैली के माध्यम से, अपनी अद्भुत पहचान बना सकता है। विख्यात समाचारपत्रों ने अपनी-अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप, टाइप डिज़ाइन शुरू किए हैं। उदाहरण के लिए, स्टैनले मॉरिसन द्वारा डिज़ाइन किया गया रोमन टाइप 'टाइम्स लंदन' द्वारा अपनी नई पहचान के रूप में शुरू किया गया था। सूचना प्रौद्योगिकी और सूचना डिज़ाइन दोनों ही सूचना उद्योग के दो अत्यंत महत्वपूर्ण पहलू हैं। सूचना प्रौद्योगिकी में नवाचारात्मक (अभिनव) विचारों का प्रयोग और सूचना डिज़ाइन के एक भाग के रूप में मौलिकता के साथ डिज़ाइन की गई और टाइपोग्राफी की दृष्टि से ठीक ढंग से प्रस्तुत की गई पाठ्य सामाग्री/आकृतियाँ दोनों ऐसे प्रमुख कारक हैं जो किसी दृश्यमान वस्तु में विषय आदि की गुणवत्ता बढ़ा देते हैं। भलीभाँति चुने गए टाइपफॉन्ट और ठीक तरह से प्रस्तुत की गई दृश्यमान वस्तुएँ ऐसी सूचना संबंधी डिज़ाइन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं।

फॉन्ट परिवार (फॉन्ट फैमिली)

टाइपफॉन्ट परिवार में कई टाइपफॉन्ट सदस्य होते हैं। टाइपफॉन्ट परिवार को उसके तत्वों के सुरुचिपूर्ण प्रस्तुतीकरण, भार, रूपांतरणीय विविधता और आकार आदि के माध्यम से पहचाना जाता है। उदाहरण के लिए, टाइम्स रोमन फॉन्ट में ऊर्ध्वाधर रेखाओं के सिरे पर गोल सेरिफ बने होते हैं इसलिए यह शैलीगत विशेषता उसके परिवार के सभी सदस्यों में देखने को मिलेगी। किसी अक्षर रूप के भिन्न-भिन्न भार जैसे अधिक हलका, हलका, मध्यम, अध-मोटा, मोटा, अधिक मोटा, उस टाइप परिवार को बढ़ा सकता है। खड़ी लकीरों को दिए गए तिरछे कोणीय झुकाव से उसी फॉन्ट में तिरछे या इटैलिक अंतर आ जाएगा। किसी अक्षर रूप के संघनित, अति संघनित, विस्तारित, अति विस्तारित समानुपात भी उस टाइपफेस परिवार का एक अन्य लक्षण है। उदाहरण के लिए, एड्रियन फ्रुटजियर द्वारा डिज़ाइन की गई यूनिवर्स टाइप, लैटिन लिपि में पाए जाने वाले 'सैन्स सेरिफ' टाइप फॉन्ट का एक उत्तम उदाहरण है। निर्णयसागर टाइपफेस जो कि बालबोध देवनागरी की एक अग्रणी शैली है, भारत में टाइपफेस परिवार का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। आमतौर पर, हलके, मध्यम और मोटे भार वाले टाइपफेस, अपने इटैलिक रूपों के साथ एक न्यूनतम फॉन्ट परिवार के रूप में डिज़ाइन किए जाते हैं।

समाज पर टाइपफेस का प्रभाव

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि ताम्रपत्र (ताँबे की प्लेटें), लिथो पत्थर और काष्ठ खंड, जिन पर तसवीरों की आकृतियाँ तथा भाषायी संकेत अंकित या उत्कीर्ण होते थे, आरंभिक दिनों में पुनरुत्पादन उपकरणों के रूप में काम में लिए जाते थे।

© NCERT not to be republished

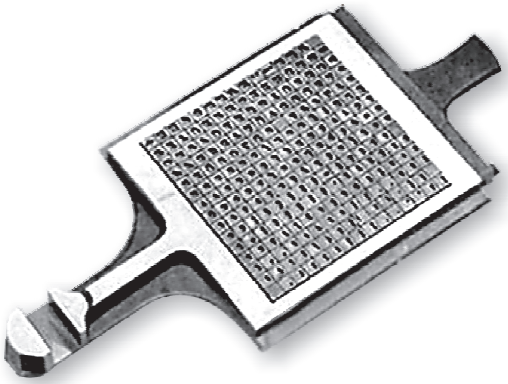

चित्र 8.4 टाइपों के साँचे

225 भिन्न-भिन्न अक्षरों के लिए साँचे इस चौखटे में रखे गए हैं।

चित्र 8.5 गैलरी

टाइप को क्रमबद्ध तरीके से रखने पर वह एक लंबी नाली अथवा गैलरी से होकर निकलता है जहाँ वह पन्ने या अन्य ऐच्छिक स्वरूप में बदलता है। इसी स्थिति में ही त्रुटियों में सुधार किया जा सकता है।

एक मास्टर उपकरण की तरह, किसी लिपि के अलग-अलग अक्षरों को बार-बार इस्तेमाल में लाने की संकल्पना गुटेनबर्ग द्वारा ही प्रारंभ की गई थी। मूल पाठ्य को कंपोज करने की यह क्रांतिकारी संकल्पना लकड़ी जैसी कोमल सामग्री में ही व्यवहार में लाई जाती थी। कई प्रयोगों के बाद, धातु के चल टाइपों को, जिनमें गरम धातु की प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जाता था, काम में लिया जाने लगा। अक्षर की मूल आकृति को स्टील के एक पंच के ऊपरी सिरे पर उत्कीर्ण करना होता था। किसी कठोर स्टील की परत पर अक्षर के वास्तविक आकार और शक्ल में उत्कीर्ण करने की क्रिया अत्यंत श्रमसाध्य और कठिन होती थी, फिर भी यह एक कलात्मक उपलब्धि मानी जाती थी। इस पंच को एक धातु के टुकड़े मैट्रिक्स में एक तरफ चुभोया जाता था। फिर इस प्रकार बने मैट्रिक्स के साँचों में गरम धातु को उड़ेला जाता था जिसके फलस्वरूप टाइप के धातुखंड बन जाते थे। ऐसे आयताकार धातु के टुकड़ों के ऊपरी सिरे पर अक्षर की छाप दर्पण की आकृति की तरह उभर आती थी।

जब इन टाइपखंडों को रेखीय रूप में एक साथ कंपोज कर लिया जाता है तो उन पर स्याही लगा दी जाती है और फिर उन पर दबाव डालकर कागज़ पर छाप लिया जाता है; इस संपूर्ण प्रक्रिया को लैटर प्रेस प्रिंटिंग टैक्नोलॉजी कहा जाता है। इस संक्षिप्त विवरण से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि यह एक डिज़ाइन और टाइपफॉन्ट उत्पादित करने की वास्तव में एक लंबी और व्यक्तिवादी प्रक्रिया थी। ऐसे अग्रगामी और क्रांतिकारी प्रयत्नों के बावजूद, मुद्रण को एक काला जादू समझा जाता था और पढ़े-लिखे लोग हस्तलिखित या सुलिखित पाठ्य/पुस्तक की तुलना में पाठ्यपुस्तक के पुनरुत्पादन की इस प्रक्रिया को मान्यता नहीं देते थे फिर भी मुद्रण की कला आगे बढ़ती गई, और उसकी सहायता से लिखित शब्द सर्वत्र फैलता गया। इससे समाज को भी तेज़ी से साक्षर बनने में सहायता मिली क्योंकि पढ़ने के लिए मुद्रित सामग्री सुलभ हो गई। इस प्रकार साक्षरता के प्रसार के लिए पाठ्य सामग्री की मितव्ययता और सुलभता दो निर्णायक कारक सिद्ध हुए। अब यह स्पष्ट हो गया है कि गुटेनबर्ग और उसके परवर्ती मुद्रकों तथा डिज़ाइनरों ने अपने टाइपफॉन्ट हस्तलिखित नमूनों के आधार पर ही तैयार किए थे और ऐसा

© NCERT not to be republished

भारतीय टाइपोग्राफी

भारतीय परिवेश में भी टाइप डिज़ाइन करने की गतिविधि पुरानी पांडुलिपियों से प्राप्त हस्तलेखन की शैलियों (कैलिग्राफी) पर ही आधारित थी। अनेक यूरोपीय विद्वानों तथा ईसाई धर्मप्रचारकों (मिशनरियों) जैसे डॉ. विलियम कैरी, सर चार्ल्स विलकिन्स, थॉमस ग्राहम आदि ने भारतीय पुस्तकों के लिए टाइपफेस बनाने और कंपोज करने की प्रौद्योगिकी के विकास का कार्य अपने हाथ में लिया। यह युग भारतीय उपमहाद्वीप में साक्षरता के प्रसार की दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण और सुसंगत था। यूरोप के देशों में भी, टाइप तैयार करने तथा छापने के कुछ प्रयत्न दृष्टिगोचर हुए-(वी. एण्ड जे. फिगिन्स, लंदन, 1884 (देवनागरी), जर्मनी में तमिल टाइप की कटाई (1716), श्लेगल्स देवनागरी, बोनी, 1848, रोम में देवनागरी टाइपकास्ट (1771)।

प्रतीत होता था मानो उनके द्वारा तैयार की गई पुस्तकें, मुद्रित नहीं हस्तलिखित ही थीं। इसके फलस्वरूप गोथिक शैली के टाइपफेस चलन में आए। फ्रैक्टर और स्वैचबेकर, जैसे जर्मन टैक्स्टफॉन्टों में भी लगभग ऐसी ही भावना परिलक्षित हुई। जब गोथिक कैलिग्राफी के आधार पर टाइपफेस डिज़ाइन किए गए, तो इंग्लैंड में उन्हें मोटे तौर पर पुरानी अंग्रेज़ी के टाइपफेस कहा जाता था। ये टाइपफेस और इन जैसे अन्य टाइपफेस अब भी हमें पुराने ज़माने के परिवेश की झलक दिखाते हैं।

भारत में, छपाई की मशीन का आगमन गोवा में 15वीं शताब्दी में संयोगवश ही हो गया था। भारतीय फॉन्ट डिज़ाइन करने और पाठ्य सामग्री कंपोज करने की गतिविधि मालाबार समुद्रतट पर (तब मद्रास में) 18वीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में शुरू हुई और 19वीं शताब्दी के शुरूआती दौर में इस क्रियाकलाप ने कोलकाता के निकट सीरामपुर प्रेस में अपनी पक्की पहचान बना ली। फिर इसका प्रसार मुंबई में हो गया। ऐसे क्रियाकलापों से प्रभावित होकर भारतीय मुद्रकों, जैसे गणपत कृष्णाजी आदि ने भारतीय भाषाओं में टाइप डिज़ाइन करने और पुस्तकें छापने की प्रवृत्ति का अनुसरण किया।

इस युग को प्राक् निर्णयसागर युग कहा जा सकता है। लेकिन समर्पित भाव से डिज़ाइन करने के व्यापक कार्यों का आरम्भ वस्तुतः निर्णयसागर टाइपफॉन्ट फाउंड्री, मुंबई में 19वीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में ही किया गया। इस बहुमुखी क्रियाकलाप को, जिसमें टाइप का डिज़ाइन करना, संस्कृत तथा अन्य भारतीय भाषाओं में पुस्तकें मुद्रित एवं प्रकाशित करना शामिल था, एक महान कर्णधार जाओजी दादाजी ने अपने हाथों में लिया। उन्होंने निर्णयसागर टाइप फाउंड्री, निर्णयसागर प्रिंटिंग प्रेस और निर्णय पब्लिशिंग हाउस की स्थापना की। यह महान संस्थान संस्कृत के प्रकांड पंडितों और शास्त्रियों के मार्गदर्शन में संचालित पांडित्यपूर्ण भाषायी क्रियाकलापों का केंद्र था। इस संस्थान द्वारा संस्कृत में मुद्रित प्रकाशन आज भी समस्त विश्व में प्राचीन भारतीय ग्रंथों के सर्वाधिक प्रामाणिक संस्करण माने जाते हैं। इस संस्थान में आरू नाम का एक पंचकटर टाइप डिज़ाइन के क्रियाकलाप का कर्ताधर्ता था। जाओजी दादाजी और आरू के प्रयत्नों ने एक ऐसे टाइप परिवार का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया जिसमें, 19वीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों में, भिन्न-भिन्न भार और तरह-तरह के नमूने शामिल थे।

© NCERT not to be republished

निर्णयसागर युग भारतीय भाषाओं में, गरम धातु की प्रौद्योगिकी का प्रयोग करते हुए फॉन्ट डिज़ाइन और पुस्तक मुद्रण के क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय स्तर का कार्य करने की सक्षमता के कारण, एक स्वर्ण युग था। लेकिन दुर्भाग्य की बात यह है कि अब उसके बहुत कम अवशेष अभिलेखागारों में देखने को मिलते हैं, अलबत्ता कुछ टाइप सूचियाँ तथा मुद्रित पुस्तकें अवश्य मिलती हैं। किंतु निर्णयसागर के परवर्ती युग में अनेक समर्पित मुद्रकों एवं प्रकाशकों का आविर्भाव हुआ जो टाइप फाउंड्री और पुस्तक मुद्रण के लिए आधुनिक प्रौद्योगिकी से सुसज्जित थे। इनके मुद्रण तथा प्रकाशन संबंधी क्रियाकलापों का भारत-भर में सर्वत्र प्रसार हो गया और उन्होंने कला, विज्ञान और अन्य विषयों के विभिन्न क्षेत्रों में विपुल सामग्री का निर्माण करने में पूरा योगदान दिया। जब पाश्चात्य प्रौद्योगिकी से उनका परिचय हुआ तो उनमें से बहुतों ने भारतीय भाषाओं तथा लिपियों के पुनः प्रस्तुतीकरण के लिए आधुनिक सुविधाओं को अपना लिया। लैटिन लिपि में मूल पाठ्य का रेखीय अक्षर संयोजन (linear composing), पश्चिम में टाइप डिज़ाइन करने और लेख कंपोज या मुद्रित करने के लिए आवश्यक प्रौद्योगिकियों के विकास का आधार था। इससे भारतीय मुद्रक और प्रकाशक भारतीय लिपियों में परिवर्तन पर विचार करने को बाध्य हो गए और इस प्रकार भारत भूमि में भी लिपि सुधार संबंधी गतिविधि की जड़ें जमने लगीं। अनेक भारतीय इंजीनियरों, भाषावैज्ञानिकों, राजनेताओं और उत्साही कार्यकर्ताओं ने 1884 से लेकर 20वीं शताब्दी के अंत तक इस क्षेत्र में अपना योगदान दिया है। भारतीय पुस्तकों का तेज़ी से पुनरुत्पादन करने की दृष्टि से कुछ लिपि संबंधी सुधार यांत्रिक साधनों में भी किए जा चुके हैं।

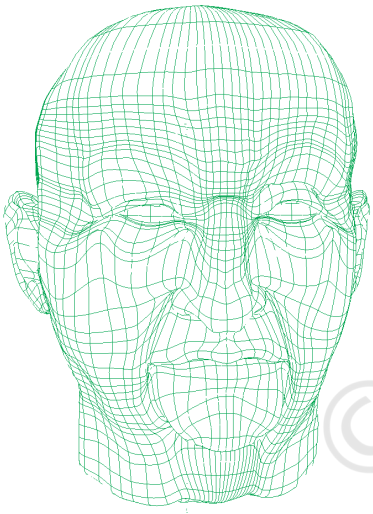

चित्र 8.6 डिज़िटल स्वरूप का विकास करने की संरचना

डिज़िटल इमेजिंग

जैसा कि पहले स्पष्ट किया जा चुका है, डिज़ाइन कार्य तभी से चल रहा है जब से हम अस्तित्व में आए हैं। जब से सृष्टि की रचना हुई है तभी से डिज़ाइन कार्य हमारे जीवन का अभिन्न अंग बना हुआ है। जब मनुष्यों को भूख लगी तो उन्होंने मारने के लिए हथियार बना लिए, जब उन्हें रहने के लिए आश्रय की ज़रूरत पड़ी

© NCERT not to be republished

तो उन्होंने घर बना लिए और जब उन्हें अपने भावों-विचारों को दूसरों तक पहुँचाने की आवश्यकता पड़ी तो उन्होंने प्रतीकों और लिपियों का आविष्कार कर लिया। जहाँ कहीं दृश्यरूप में संप्रेषण करने की ज़रूरत होती है, वहाँ ग्राफिक डिज़ाइन के माध्यम से संचार साधनों का उपयोग किया जा सकता है। आधुनिक तकनीकों की उन्नति के फलस्वरूप, अब तो एक बटन दबा देने भर से इंटरनेट पर सारी दुनिया उजागर हो जाती है। विभिन्न स्थल भिन्न-भिन्न प्रकार की निष्क्रिय और परस्परसक्रिय सूचना लेकर कम-से-कम प्रयत्न से, उपस्थित हो जाते हैं। हम आराम से अपने कमरे में बैठे हुए रिमोट कंट्रोल की सहायता से टेलीविज़न के मनचाहे चैनल देखते रहते हैं।

1980 के दशक के मध्यभाग में, डेस्कटॉप प्रकाशन के आ जाने से और ग्राफिक कला के सॉफ्टवेयर का प्रयोग शुरू हो जाने से, डिज़ाइनरों की एक पीढ़ी, कंप्यूटर द्वारा प्रतिबिंब रचना (इमेजिंग) और तीन-आयामी प्रतिबिंब रचना से परिचित हो गई। ऐसी रचना पहले बहुत श्रमसाध्य थी। कंप्यूटर द्वारा ग्राफिक डिज़ाइन तैयार किए जाने से डिज़ाइनर तुरंत अपनी लेआउट या टाइपोग्राफिक परिवर्तनों के प्रभाव को देख सकते हैं इसके लिए उन्हें इस प्रक्रिया में स्याही का इस्तेमाल करने की जरूरत नहीं पड़ती। वे खाली स्थान का प्रयोग किए बिना ही, परंपरागत माध्यमों के प्रभावों का अनुमान लगा सकते हैं।

अब कंप्यूटर केवल लेखांकन की मशीन ही नहीं रहा है। यदि यह बच्चों के लिए खिलौना है तो बड़ों के लिए एक सम्पूर्ण कार्यालय है। ज़रा इस माध्यम के लचीलेपन को तो देखिए, यह किस प्रकार तरह-तरह के काम पूरे कर सकता है। एक सक्रिय डिज़ाइनर के लिए यह एक चलता-फिरता कार्यालय है, एक सम्पूर्ण कार्य स्टूडियो है जिसमें अनेक औज़ार लगे हैं। यदि आप इसकी सहायता से काम करें तो न तो आपको पैलेट पर रंग डालकर उसमें पानी या तेल मिलाने की ज़रूरत होगी, न ही आपको ब्रुश को फिर से साफ करने या सुखाने की आवश्यकता होगी और न ही कभी ऐसी स्थिति आएगी कि आपको गलत रंग लगने पर उसे ठीक करना या मिटाना होगा। क्योंकि इसमें एक 'अनडू कमांड' होता है जो आपके गलत या अनचाहे किए गए कार्य को तुरंत मिटाकर पूर्वस्थिति में ले जाने की क्षमता रखता है।

कंप्यूटर में तरह-तरह के सॉफ्टवेयर और उपकरण भरे होते हैं। उपकरणों की यह लंबी शृंखला आपके आदेशों का पालन करती है। कंप्यूटर स्वयं कभी गलती नहीं करता। इसके कार्य की परिशुद्धता का कोई मुकाबला नहीं कर सकता। कंप्यूटर में लगे रेखा-उपकरण की सहायता से तिर्यक्, सरल, कोणीय, पतली, मोटी यानी चाहे जैसी रेखा खींची जा सकती है। इसके स्वाभाविक गुणों को डायलॉग बॉक्स में परिभाषित किया गया है। आप इसे काट सकते हैं, इसकी नकल कर सकते हैं और डिज़ाइन के भीतर उसे किसी भी स्थान पर चाहे जितनी बार चिपका सकते हैं। यदि कोई खराबी आ जाए तो उसे पूरी तरह मिटाया जा सकता है और बिना किसी समस्या के किसी भी आदेश को दोहराया जा सकता है। अधिकांश सॉफ्टवेयर में भिन्न-भिन्न शैलियों वाले सुलेखन-उपकरणों की लंबी शृंखला होती है।

© NCERT not to be republished

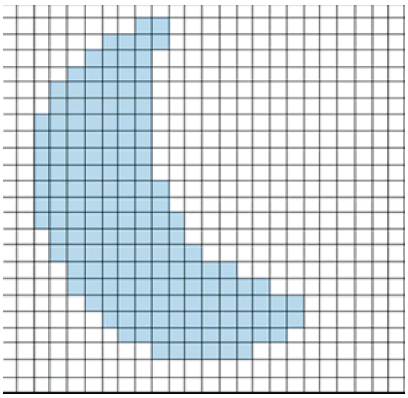

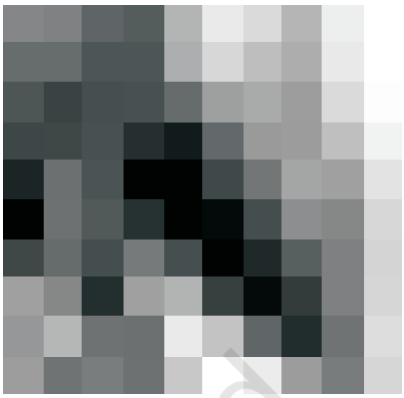

सभी कंप्यूटरों में एक आप्रेटिंग सिस्टम का प्रयोग किया जाता है और कुछ सॉफ्टवेयर भी होते हैं जो आपके आदेशानुसार काम करते हैं। सॉफ्टवेयर बुनियादी तौर पर दो किस्म का होता है–'वेक्टर' यानी दिक्लेखी सॉफ्टवेयर और 'रैस्टर' यानी चित्ररेखापुंज वाला सॉफ्टवेयर। आइए हम देखें कि वेक्टर या रैस्टर-आधारित सॉफ्टवेयर क्या हैं?

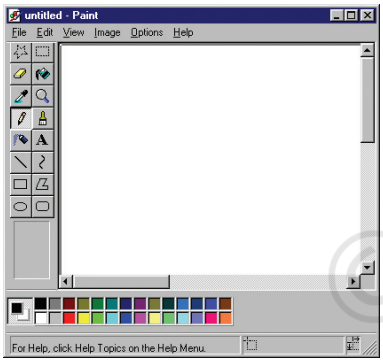

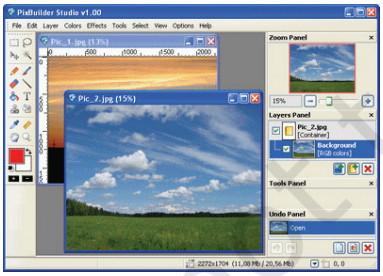

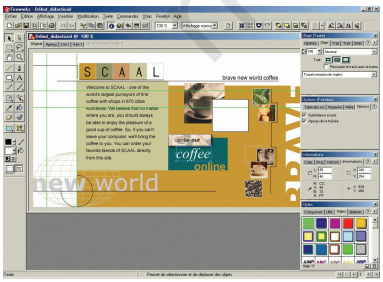

वेक्टर-आधारित सॉफ्टवेयर

यह सॉफ्टवेयर स्वभाव से रेखीय होता है; सभी प्रकार का रेखा-आधारित कार्य इस तरह के सॉफ्टवेयर के माध्यम से किया जाता है और जब इसे बड़ा किया जाता है तो आकृति सुस्पष्ट रहती है।

रैस्टर-आधारित सॉफ्टवेयर

इस तरह का सॉफ्टवेयर ऐसी आकृतियाँ उत्पन्न करता है जो किनारों पर अधिक कोमल होती हैं। ये फोटो और आकृति संबंधी गतिविधियों का संपादन करने के लिए आदर्श होते है। जब इन्हें वास्तविक आकार से अधिक बड़ा किया जाता है तो वे धुंधले पड़ जाते हैं।

कागज़ पर बनाए गए अँगूठे के नाप के रेखाचित्रों या कच्चे प्रारूपों को तुरंत कंप्यूटर पर परिष्कृत करके प्रयोग में लाया जा सकता है। यह सँकर प्रक्रिया विशेषरूप से लोगो डिज़ाइन में उपयोगी होती है।

© NCERT not to be republished

देखने जाएँ

अपने आसपास के किसी ग्राफिक विज्ञापन/मल्टी मीडिया/आर्ट स्टूडियो को देखने जाएँ ताकि आप लेआउट/प्रारंभिक रूपरेखा से अंतिम डिज़ाइन तैयार होने तक की प्रक्रियाओं के संपूर्ण क्रम को भलीभाँति जान सकें।

कंप्यूटर से तीव्रगति से किया गया उत्पादन डिज़ाइनरों को तुरंत अनेक विचार विस्तारपूर्वक खोजने में सहायता देता है। यह कार्य कागज़ पर परंपरागत तरीके से हाथ से लिखने या चिपकाने से इतनी जल्दी नहीं हो सकता। सॉफ्टवेयर डिज़ाइनर को रचनात्मक प्रक्रिया के माध्यम से तेज़ी से कार्य करने के लिए सक्षम बनाता है, भले ही इसके लिए काम में लाए जाने वाले उपकरण और तरीके परंपरागत हों या डिज़िटल। पेंसिल और कागज़ का इस्तेमाल करते हुए क्लिप आर्ट विचारों को फॉन्ट, क्लिपार्ट, स्टॉक फोटो, या कंप्यूटर पर रेंडरिंग फिल्टरों का इस्तेमाल करते हुए निष्पादित किया जाता है। ग्राफिक डिज़ाइन की एक प्रमुख विशेषता यह भी है कि यह पसंद की बजाय अर्थ उत्पन्न करने की अपनी क्षमता के कारण आकृति/बिंब बनाने के लिए उपयुक्त उपकरणों का चुनाव करता है।

प्रश्नावली

1. टाइपोग्राफी शब्द से आप क्या समझते हैं?
2. टाइप के महत्व का वर्णन करें।
3. जोहान्न गुटेनबर्ग की गरम धातु की प्रौद्योगिकी ने मुद्रण कार्य को किस प्रकार अधिक सरल बना दिया?
4. भारतीय संदर्भ में टाइप फाउंड्री के इतिहास को संक्षेप में लिखें।
5. कंप्यूटर ने ग्राफिक डिज़ाइनरों के जीवन को किस प्रकार प्रभावित किया और कंप्यूटर मुद्रण उद्योग में क्या भूमिका अदा करते हैं?

प्रयोगिक

1. समान दूरी पर छह समानांतर रेखाएँ खींचें और ज्यामितीय उपकरणों की सहायता से वृत्त, वर्ग और त्रिभुज जैसी बुनियादी आकृतियों का प्रयोग करते हुए अपनी खुद की टाइपोग्राफी डिज़ाइन करें। ऐसा करते समय सर्वप्रथम वर्णमाला से शुरू करके अपना नाम लिखें, इसके बाद सभी वर्गों के बीच ज्यामितीय संबंध को ध्यान में रखते हुए एक संपूर्ण वाक्य लिखें।
2. अपने नाम और उपनाम के पहले वर्णों का प्रयोग करते हुए एक डिज़ाइन बनाएँ।
3. अपनी खुद की डिज़ाइन की गई टाइपोग्राफी में एक उद्धरण लिखें।
4. आपके इर्द-गिर्द उपलब्ध भिन्न-भिन्न उत्पादों की टाइपोग्राफी की शैलियों की नकल करें।
5. किसी निश्चित विषय या उत्पादन पर एक लोगो टाइप बनाएँ।
6. कुछ 2-आयामी/3-आयामी डिज़ाइन, जैसे कि कुर्सी, सहायक उपकरण, पोशाकें, भविष्य में बनाई जाने वाली कारें, कार्टून (व्यंग्यचित्र) या मज़ाकिया पात्र आदि बनाने के लिए रोमन वर्णमाला का प्रयोग करें और फिर डिज़िटल रीति से डिज़ाइन उत्पन्न करें। अपने कार्य की एक मुद्रित प्रति बनाएँ।

© NCERT not to be republished